PGDGN - 03

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अहिंसात्मक संघर्ष निवारण की गाँधीवादी तकनीक

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा (राजस्थान)

सयोजक सदस्य /

संयोजक

डॉ. बी. अरुण कुमार
सह आचार्य विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा (राजस्थान)

सदस्य

- **प्रो. (डॉ.) एम. एल. शर्मा**
  आचार्य, गांधी अध्ययन केन्द्र
  पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़
- **प्रो. (डॉ.) हिमांशु बोराई**
  आचार्य, राजनीतिक विज्ञान विभाग
  हेमवती नन्दन बहुगुणा विश्वविद्यालय श्रीनगर (गढ़वाल)
- **प्रो. (डॉ.) अनाम जैतली**
  आचार्य, राजनीतिक विज्ञान विभाग
  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
- **डॉ. लीलाराम गुर्जर**
  सह आचार्य राजनीति विज्ञान विभाग
  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ लेखक	इकाई लेखक
प्रो. (डॉ.) प्रियंकर उपाध्याय बनारस हिन्दू यूनिवरसिटि , बनारस	1,2,10
डॉ. मनीष शर्मा सहायक आचार्य, गाँधी अध्ययन केन्द्र पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़	3,8
डॉ. हुकराम सुथार व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग एम.बी.सी.राजकीय महिला महाविद्यालय बाडमेर	4
डॉ. अल्पना पारीक व्याख्याता, राजनीति विज्ञान राजकीय महाविद्यालय बूंदी (प्रतिनियुक्ति पर आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा, जयपुर)	5
प्रो. (डॉ.) राधाकृष्णन भारतीय गाँधी परिषद वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	6
त्रिवेन्द्रम डॉ. ज्योति शर्मा व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग सुबोध महिला महाविद्यालय जयपुर	7
डॉ. विद्या जैन आचार्य राजनीति विज्ञान विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर	9

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो. (डॉ.) अनाम जैतली**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय	संकाय	पाठ्यक्रम सामग्री उत्पादन एवं वितरण
कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	विभाग
		वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा (.राज)

पुनः उत्पादन जुलाई 2009 **ISBN-13/978-81-8496-136-2**

इस सामग्री के किसी भी अंश को वद्वा (चक्रा मुद्रण) टा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफीको .वि.खु.म.रा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं हैं। व.वि.खु.म., कोटा के लिए सचिव, व.वि.खु.म., कोटा द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित। (.राज)

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

विषय सूची

अहिंसात्मक संघर्ष निवारण की गांधीवादी तकनीक

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई -1	मानव सुरक्षा हेतु शांति एवं संघर्ष निवारण	5–21
इकाई -2	मानवाधिकार और गाँधी	22–32
इकाई -3	अहिंसात्मक संघर्ष निवारण	33–43
इकाई -4	संघर्ष निवारण सत्याग्रह	44–54
इकाई -5	बुनियादी शिक्षा के विभिन्न आयाम	55–62
इकाई -6	रचनात्मक कार्यक्रम और शांतिमय परिवर्तन	63–82
इकाई -7	गाँधी आश्रम और अहिंसात्मक आंदोलन	83–99
इकाई -8	सविनय अवज्ञा द्वारा अहिंसात्मक संघर्ष निवारण	100–109
इकाई -9	महात्मा गाँधी का राजनीतिक नेतृत्व : एक मूल्यांकन	110–122
इकाई -10	वैकल्पिक संघर्ष निवारण	123–141

इकाई - 1

मानव सुरक्षा हेतु शांति एवं संघर्ष निवारण

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 मानव सुरक्षा का अर्थ

1.2.1 सुरक्षा मूल्य

1.2.2 सुरक्षा के लिए धमकियों की प्रकृति

1.3 अवधारणा का विकास

1.4 यू एन.डी.पी. और मानव सुरक्षा

1.5 व्यक्तियों की सुरक्षा बढ़ाने के तरीके

1.5.1 मानव सुरक्षा आयोग की रिपोर्ट की रूपरेखा

1.5.2 हिसंक संघर्ष में लोगों की सुरक्षा

1.5.3 स्थान परिवर्तन कर रहे व्यक्तियों का संरक्षण व सशक्तिकरण

1.5.4 संघर्षत्तर स्थिति में व्यक्तियों की सुरक्षा और सशक्तिकरण

1.5.5 आर्थिक असुरक्षा-अवसरों की चुनने की शक्ति

1.5.6 मानव सुरक्षा व स्वास्थ्य

1.5.7 मानव सुरक्षा के लिए ज्ञान, कौशल, और मूल्य

1.6 वर्तमान में मानव सुरक्षा

1.7 निष्कर्ष

1.8 अभ्यास प्रश्न

1.9 संदर्भ ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप मानव सुरक्षा की जानकारी प्राप्त करेगें। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान पाऐंगे।

- मानव सुरक्षा
- मानव सुरक्षा की अवधारणा का विकास
- इस अवधारणा के विकास में यू.एन.डी.पी की भूमिका
- व्यक्तियों की सुरक्षा बढ़ाने के विभिन्न मार्ग

1.1 प्रस्तावना

मानव सुरक्षा का अर्थ है जीवन उपयोगी स्वतंत्रताओं की रक्षा / अर्थ है चिन्तनीय और घातक धमकियों से व्यक्तियों की सुरक्षा करना, उनकी इच्छाओं और शक्तियों को मजबूत, करना। यह एक ऐसी व्यवस्था के निर्माण पर आधारित है। जो लोगों को जीवन जीने योग्य स्थिति गरिमा व जीवंतीता दे। मानव सुरक्षा विभिन्न प्रकार की स्वतंत्रता से संबन्धित है -

अभावों से मुक्ति, भय से मुक्ति और अपने स्वयं के बल पर निर्णय लेने की स्वतंत्रता। फिर भी, मानव सुरक्षा विषयक प्रारम्भिक चिन्ह 1970 में दिखाई दिए जब मानव अधिकार और विकास के सक्रिय कार्यकर्त्ताओं ने निरस्त्रीकरण और विकास के मध्य मजबूत कड़ी की अवधारणा दी। इस दौरान, एक शांति शोधकर्त्ताओं का समूह सामने आया जिसका वैकल्पिक मॉडल मूलभूत मानवीय आवश्यकताओं पर आधारित था जिसने जल्दी ही संयुक्त राष्ट्र संघ का ध्यान आकर्षित किया। इसमे मानव अधिकारों को भोजन, वस्त्र, आवास,स्वास्थ और शिक्षा जैसी मूलभूत आवश्यकताओं से जोड़ने की कोशिश की। उन प्रेरणाओं से सत्तर और अस्सी के दशक में इस उपक्षेत्र में पहल शुरू हुई जिनमें प्रमुख विली ब्रांट की अध्यक्षता में अन्तर्राष्ट्रीय विकास के मामलों पर एक स्वतंत्र आयोग, अडोल्फ पाल्मे के नेतृत्व में निरस्त्रीकरण सुरमा मुद्दों पर बना स्वतंत्र आयोग और ब्रटलैंड आयोग, विश्व सुरक्षा और शासन पर स्टॉकहोम के प्रयास। फिर ने इस विचार को जड़ें जमाने व तेजी से आम बढ़ने में समय लगा।

1.2 मानव सुरक्षा का अर्थ

इस प्रकार मानव सुरक्षा का प्रथम प्रयोग संयुक्त राष्ट्रसंघ विकास कार्यक्रम द्वारा मानव विकास रिपोर्ट में सामने आया जो 1993 से शुरू हुआ। इस रिपोर्ट ने)UNDP) इस अवधारणा को निर्मित और परिष्कृत किया। 1994 में, मानव विकास रिपोर्ट में मानव सुरक्षा पर स्पष्ट तौर से ध्यान दिया और दो पहलुओं के रूप में इसे परिभाषित किया भय से मुक्ति और अभावों से मुक्ति, इसमें भुखमारी बीमारियों! व दमन जैसी पुरानी धमकियों से बचाव और दैनिक जीवन में अचानक आयी बाधाओं से सुरक्षा भी शामिल है। इस रिपोर्ट ने पाँच स्तर दिए।

1. समानता पर जोर देने वाली मानव विकास की अवधारणा, स्थिरता और निचले स्तर तक की सहभागिता।
2. मानव सुरक्षा के विस्तृत ऐजेंडे में शांति स्थापित करने की जिम्मेदारी।
3. वैश्विक बाजार अवसरों और आर्थिक पुनर्निर्माण हेतु न्याय और समानता को बराबरी के स्तर पर लाने के लिए उत्तर व दक्षिण के मध्य नयी साझेदारी करना।
4. एक नयी वैश्विक सरकार का ढांचा तैयार करना जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष)IMF) विश्व बैंक)World Bank) और संयुक्त राष्ट्र जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में सुधार पर आधारित हो और अन्त में,
5. विश्व नागरिक समाज की बढ़ती भूमिका।

इसके बाद UNDP रिपोर्ट में मानव सुरक्षा, के सात अंग अथवा मूल्य दिए गए। आर्थिक सुरक्षा, भोजन की सुरक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, पर्यावरण सुरक्षा निजी सुरक्षा, सामुदायिक सुरक्षा, और राजनीतिक सुरक्षा। कनाडा द्वारा दिये गए मध्यवर्ती शक्ति दृष्टिकोण को बाद में नॉर्वे द्वारा समर्थन मिला जब UNDP की परिभाषा में यह जोडा गया "जीवन की समानता को स्वीकृति ' जो शारीरिक सुरक्षा और कल्याण की ओर संकेत करता हैं, और मानव के मौलिक अधिकारों की गांरटी "जिसका अर्थ है लोगों के जीवन, सुरक्षा और अधिकारों को मिलने वाली धमकियों से स्वतंत्रता। जापान की सरकार ने भी मानव सुरक्षा को परिभाषित किया," एक

मानव के जीवन का संरक्षण व सुरक्षा तथा सम्मान केवल तभी सुनिश्चित किया जा सकता है। जब व्यक्ति को भय और अभावों से मुक्त जीवन जीने का विश्वास हो।

इस प्रकार कनाडा की सरकार और इसके विदेश मंत्री श्री लॉयड एक्सवर्दी ने मानव सुरक्षा को, मानव अधिकार और मानवीय कानूनों से सुस्पष्ट रूप से जोड़ा और UNDP के विशेष ब्यौरे की आलोचाना की "जिससे अविकसित देशों से जुड़ी धमकियों पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया था, जो हिंसक संघर्ष के कारण मानव सुरक्षा को खत्म कर रही थी। "कनाडा के विचार को अन्य मध्यम शक्तियों जैसे नार्वे ने समर्थन दिया जिसने एक मानव सुरक्षा में कनाडा के साथ साझेदारी की थी। "इस साझेदारी ने मानव सुरक्षा के नौ बिन्दुओं को चिन्हित किया:-भूमि पर खानें, अन्तर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय का गठन, मानव अधिकार, अन्तर्राष्ट्रीय मानव विधि सशस्त्र संघर्ष में महिलाऐं व बच्चे, छोटे शस्त्रों पर प्रतिबंध बालश्रम व बाल सैनिक उत्तरी सहयोग। "यह बदलाव ,"मानव अधिकार संरक्षण के प्रति राज्य प्रभुसत्ता के बदलते मूल्यों द्वारा एक नये अन्तर्राष्टीय माहौल को प्रतिविम्बित कर रहा था।"

उदारवादी धारणा के प्रत्येक व्यक्ति की सुरक्षा ' के विचार से मनवीय सुरक्षा की घारणा बहुत पहले ही अलग हो चुकी थी जो)व्यक्तिवादी) प्रतियोगिता और व्यक्तिवादी अधिकार को आवश्यक मानती थी। इस प्रकार उन्होंने अपना ध्यान विशेष तौर पर व्यवस्थित असुरक्षाओं को कम करने पर लगाया जो व्यक्ति के जीवन के समक्ष चुनौती थी। मानवीय सुरक्षा को केन्द्रबिन्दु बताते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव कोफी अन्नान ने कहा,- 'विस्तृत अर्थ में मानव सुरक्षा में हिंसक संघर्ष से बहुत अधिकार सम्मिलित है। इसमें मानव अधिकार सुशासन शिक्षा और स्वास्थ्य की देखभाल का अधिकार शामिल है और अपने सामर्थ्य के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अवसरों व विकल्पों को सुनिश्चित करने का अधिकार है। इस दिशा में वहां प्रत्येक कदम, गरीबी कम करने आर्थिक उन्नति प्राप्त करने और संघर्ष समाधान की ओर बढा कदम है।

इस प्रकार, नीतिगत अर्थ में मानव सुरक्षा, भय, संघर्ष, उपेक्षा, गरीबी, सामाजिक और सांस्कृतिक वंचन, भूख आदि से संगठित, स्थिर और बोधगम्य सुरक्षा है। विभिन्न स्तरों पर मानव सुरक्षा सम्बधी तर्क का सम्बन्ध अत्यधिक जाने पहचाने सिद्धान्तों जैसे मानव विकास व मानवाधिकार से मिलता जुलता है। UNESCO में कनाडा के स्थायी प्रतिनिधि लुइस हामेल का कहना है, "मानव सुरक्षा, मानव विकास भाई-बहिन है। मानव सुरक्षा, मानव विकास के लिए संरक्षित पर्यावरण उपलब्ध करवाती है, भय से सामाजिक शांति व स्वतंत्रता प्रदान करती है। जिससे विकास व्यवहारिक तरीके से होता है। "जैसा कि मानव सुरक्षा आयोग में जोर देकर कहा गया, "यह गैर राज्य संगठनो व सत्ता का जुड़ना भी अनिवार्य करती है, और इसकी सफलता सिर्फ इस बात पर निर्भर नहीं हैं कि यह लोगों को सुरक्षा दे रही हैं वरन् इस लिए भी है कि यह उन्हें सशक्त बना रही है। "इस प्रकार मानव सुरक्षा का ढांचा मानववाद को स्थापित करने के लिए संघर्ष कर रहा है और एक ओर विकास से जुड़ा है। वहीं दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा से जुडा है। इस प्रकार वे जो विकास की राजनीति में सम्मिलित हैं और वे जो मानव सुरक्षा को

सहयोग कर रहे हैं, के मध्य तनाव बढ़ गया क्योकि संक्रमणकालीन पहलू को बाद के दृष्टिकोण में साकार रूप देने के कार्य का अभी मूल्याँकन चल रहा है।

मानव सुरक्षा, सापेक्षतया नयी अवधारणा हैं परन्तु अब इसका प्रयोग ज्यादातर गहयुद्ध, जातीय नरसंहार और जनसंख्या को खत्म करने की धमकियों से जुड़े जटिल रूप में होता हैं। मानव सुरक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा में भेद करना महत्वपूर्ण है। जहाँ राष्ट्रीय सुरक्षा, बाहरी आक्रमणों से राज्य की सुरक्षा पर अपना ध्यान केन्द्रित करती है वहीं मानव सुरक्षा, व्यक्ति और समुदाय की, किसी प्रकार की राजनीतिक हिंसा से संरक्षण है। मानव सुरक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा, को परस्पर मजबूती देनी चाहिए, जैसा कि अधिकतर होता है। परन्तु सुरक्षित राज्य का अर्थ स्वत: ही सुरक्षित लोग नहीं होता। विदेशी आक्रमणों से नागरिकों की रक्षा करना व्यक्ति की सुरक्षा की आवश्यक शर्त हैं, पर इतना ही पर्याप्त नहीं है। वास्तव में पिछले 100 सालों में ज्यादातर लोग विदेशी सेनाओं के मुकाबले अपनी ही सरकार द्वारा मारे गए हैं।

शीत युद्ध की समाप्ति के साथ सुरक्षा की अवधारणा पर विद्वानों और प्रयोगधर्मियों ने एक समान छानबीन शुरू कर दी। परम्परागत सिद्धान्त में, सुरक्षा का मतलब था राज्य अपनी शक्ति को भौगोलिक एकता के समक्ष मौजूद चुनौतियों का सामना करने में अपनी स्वायत्ता बनाए रखने और प्रमुख रूप से दूसरे राज्यों से घरेलू राजनीतिक व्यवस्था को बचाए रखने में कैसे प्रयुक्त करता है। राष्ट्रीय सुरक्षा के परम्परागत ढांचे की विभिन्न आधारों पर आलोचना की गई।

कुछ विद्वानों के लिए परम्परागत ढांचा अत्यधिक पक्षीय है क्योंकि यह इस विश्व में शक्ति पर बल दे रहा है जहाँ सामुहिक संहार के हथियार मौजूद है और चाहे-अनचाहे आपसी निर्भरता, राष्ट्रो को एक दूसरे से जोड़े हुऐ है। सुरक्षा का एक पक्षीय सिद्धान्त छोड़ देना चाहिए और सहयोगी सुरक्षा को अपनाना चाहिए। अन्य विद्वानों की नजर में, परम्परागत सोच सुरक्षा के केवल दूसरे राज्यों से मिलने वाली सैनिक धमकियों तक सीमित करने की भूल करता है। इस चिन्तन मे प्रतिद्वन्दी राज्यों द्वारा सैनिक आदि तैनात करके एक दूसरे की भौगोलिक एकता और घरेलू राजनीतिक ढांचे को धमकी दी जा सकती है। इसमें पर्यावरणीय, आर्थिक और सांसस्कृतिक धमकियों भी शामिल हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त, भौगोलिक एकता और राजनीतिक व्यवस्था को मिलने वाली चुनौतियाँ न केवल दूसरे राज्य से हैं बल्कि बहुत से राज्येत्तर कारक और यहाँ तक कि प्राकृतिक विध्वंस भी इसमें शामिल है। सुरक्षा की यह अत्यंत विस्तृत अवधारणा हैं जो चुनौतियों के साधन और स्त्रोतों को और बढ़ाती है इसे बीद्धिमत्तापूर्ण सुरक्षा)Comprehensive security) कहा जा सकता है। सुरक्षा की तीसरी और मूलभूत आलोचना यह बताती है कि सुरक्षा राज्य के कल्याणकारी स्वरूप को प्रतिबंधित नहीं करती। इस दृष्टिकोण से सुरक्षा का परम्परागत सिद्धान्त राज्य की सुरक्षा और कल्याण में हैं, जिसमें केन्द्र मे क्या हो- और क्या होना चाहिए - नागरिक और मानव की सुरक्षा और कल्याण। सुरक्षा की मान्यता को जिसके केन्द्र में सबसे ऊपर व्यक्ति की पवित्रता है, मानव सुरक्षा कहा जा सकता है। मानव सुरक्षा की अवधारणा में सुरक्षा का आधारभूत इकाई मानव है।

मानव सुरक्षा राज्य की सुरक्षा की उपेक्षा नहीं करती, परन्तु यह ऐसे व्यक्तिगत सुरक्षा में अधिक नहीं मानती।

इस सम्बंध में मुख्य तर्क यह दिया जाता हे कि अन्ततः राज्य की सुरक्षा व्यक्ति की सुरक्षा के लिए ही हैं। अंत में, राज्य ही नागरिकों को सुरक्षा प्रदाता हैं, यह सुरक्षा का साधन है, और इसकी सुरक्षा सुरक्षा का अंत नहीं हो सकती। व्यक्ति की सुरक्षा ही केवल, सुरक्षा का उपयुक्त और अर्थपूर्ण उद्देश्य है। व्यक्ति और राज्य की सुरक्षा की समान प्रकृति के सम्बंध में दूसरा तर्क हैं कि व्यक्ति की सुरक्षा को खतरा है जिसका प्रबंधन राज्य की सामर्थ्य से बाहर है। ये धमकिंया संक्रमण कालीन अथवा आन्तरिक है। इस प्रकार एक राज्य दूसरे राज्यों से सुरक्षित रह सकता है, परन्तु धीरे धीरे अन्दर से खोखला हो जाएगा जैसे ही व्यक्तिगत सुरक्षा का ह्रास होगा। संक्रमणकालीन या देशीय शक्तियां अथवा नेता व्यक्ति को डरा सकते हैं कि राज्य अन्दर से कमजोर हो रहा है। एक समय ऐसा आयेगा जब राज्य अपने बाहरी शत्रुओं का मुकाबला नहीं कर सकेगा क्योंकि उसकी आन्तरिक शक्तियां समाप्त हो चुकी होगी। तृतीय विभिन्न कारणों से एक राज्य की वैधता समाप्त हो सकती है और अपने ही नागरिकों के खिलाफ हो सकती हैं राज्य की सुरक्षा और व्यक्तिगत सुरक्षा एक दूसरे से विपरीत तरीके के सम्बंधित हैं। जो राज्य अपने नागरिकों को निजी सुरक्षा और स्वतंत्रता को धमकी देता हैं।ऐसे राज्य अंततोगत्वा शासन करने का अधिकार खो देता है। इस स्थिति में, सुरक्षा आधारभूत मसला नहीं रहती शायद इसकी पुनर्संरचना और यहाँ तक कि इसका विनाश जरूरी होता है- जिससे दूसरा राज्य अस्तित्वमान हो)निर्मित) जो अपनी सीमाओं में व्यक्ति की बेहतर सुरक्षा करें।

व्यक्ति और राज्य एक समान है इसका अर्थ है कि राज्य की सुरक्षा की अत्यंत आवश्यक है, जैसा कि पहले कारण बताया गया था, अर्थात कि राज्य व्यक्ति की सुरक्षा का एक साधन है मुख्य साधन। ऐतिहासिक रूप से राज्यों को व्यक्ति की सुरक्षा और स्वतंत्रता सुनिश्चित करने का सबसे प्रभावशाली दर्जा दिया जा रहा है। कुछ राज्य यह कार्य अन्य राज्यों के मुकाबले कही बेहतर तरीके से करते हैं परन्तु कुछ राज्य पूर्णतया बेकार है। इस प्रकार 'मानव सुरक्षा सम्बंधी मत में राज्य की सुरक्षा के मामले की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

1.2.1 सुरक्षा मूल्य

मानव सुरक्षा की अवधारणा में दो मूल्य सर्वोपरि है: व्यक्ति की शारीरिक सुरक्षा, और उसकी निजी सुरक्षा। शारीरिक सुरक्षा में दो बातें अन्तर्निहित है: शरीर को दर्द और नाश से सुरक्षा और न्यूनतम स्तर पर शारीरिक कल्याण को प्राप्त करना। निजी स्वतंत्रता के विचार के दो अंग है: व्यक्ति की मूलभूत स्वतंत्रता का अर्थ है व्यक्ति अत्यंत निजी और जीवन सम्बंधी महत्वपूर्ण कार्य)जैसे विवाह व्यक्तिगत कानून, लालसा सम्बंधी व रोजगार और दूसरों से जुड़ने की स्वतंत्रता) दूसरी स्वतंत्रता नागरिक स्वतंत्रता है और संस्कृति, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्यों के लिए संगठित होने की स्वतंत्रता के रूप में जाना जाता है। मानव सुरक्षा दोनों मूल्यों के लिए आवश्यक हैं। मानव सुरक्षा केवल व्यक्ति की शारीरिक सुरक्षा और कल्याण ही नहीं है। न ही यह केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता है। स्पष्टरूप से शारीरिक सुरक्षामानव सुरक्षा का सार है। एक अधिक विस्तृत रूप में कल्याण भी इससे काफी जुड़ा है। एक शरीर)व्यक्ति) जो

बहुत दुःखी नहीं हैं अथवा जो नष्ट नहीं हुआ है परन्तु व्यर्थ जीवन जी रहा है क्योंकि जो अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पा रहा, वह दुख और असामयिक मृत्यु से ज्यादा दूर नहीं है। शारीरिक सुरक्षा का विचार और कल्याण निजी स्वतंत्रता से जुड़ा हैं। दुःख और शरीर का नाश अथवा आधारभूत आवश्यकताओं और सुविधाओं से पूर्णतया वंचन भी स्वतंत्रता क़ा अभाव है। कुछ लोग दुख आत्म-विनाश अथवा अत्यधिक वंचन को चुनते है। यही वे इन चुनौतियों का सामना कर सकते है तो इसलिए क्योंकि कोई व्यक्ति अथवा कुछ सामाजिक परिस्थितियां शरीर को उन चुनौर्तियों के लिए बाधा करती है।

तब मानव सुरक्षा और शारीरिक सुरक्षा को एक समान स्तर पर क्यों नहीं ले आते ? इसका कारण मानकात्मक है। कल्पना करें कि समाज में सरकारी ऐजेंट अथवा सामाजिक व्यवहार की)व्यवस्था दुख, कष्ट और वंचन)अभाव) से सुरक्षा की गारंटी देती है। वे ऐसा व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर बंधन लगाकर करते हैं एक दूसरे को चोट नहीं पहुँचाने को सुनिश्चित करने के लिए, सूक्ष्म बंधन लगाती है और अस्तित्व से वंचित करने वाली सामाजिक स्थितियों को नष्ट करती है। एक सर्वाधिकारवादी सरकार इस तरह के सुरक्षित समाज का वादा कर सकती है। अत्यधिक नियमों से चलने वाली समाज व्यवस्था जिसमें जाति व्यवस्था, दासप्रथा जिसकी शायद सर्वाधिक आलोचना हुई, अधिकार और उपकार हैं। यह सुनिश्चित करती है कि प्रत्येक व्यक्ति अपना गंतव्य जानता है और वह तब तक दुख-दर्द विनाश और अभावों से सुरक्षित है जब तक वह समाज के नियमों और प्रतिबंधों का सम्मान करते हैं। निश्चित रूप से इस प्रकार की मानव सुरक्षा मूल्यों और मानको के आधार पर स्वीकार करने योग्य नहीं हैं। आधारभूत निजी स्वतंत्रता की कीमत पर दुख,नाश और आक्रोश से शरीर को सुरक्षित करना मानव सुरक्षा के समान नहीं हो सकता। इसीलिए मानव सुरक्षा सुरक्षा की आवश्यकता और स्वतंत्रता की जरूरत के मध्य एक संतुलन के रूप में माना जाता है। सुरक्षा अथवा स्वतंत्रता के रूप मे पूर्णतावाद बेकार और स्वयं को खोने जैसा होगा।

1.2.2 सुरक्षा के लिए धमकियों की प्रकृति

धमकियों के मुद्दे पर मानव सुरक्षा का मामला नव यर्थाथवाद धारणा से बहुत अलग है। यथार्थवादी के लिए दूसरे राज्यों से प्रत्यक्ष संगठित हिंसा, सुरक्षा के लिए मूल धमकी है। मानव सुरक्षा की धारणा में वे सभी खतरे शामिल हैं जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, जाने पहचाने स्त्रोतों जैसे दूसरे राज्य और विभिन्न गैर राज्यीय तत्वों और संरचनात्मक संसाधनों जैसे विभिन्न स्तरों पर शक्ति सम्बंधो-परिवार से लेकर विश्व अर्थव्यवस्था तक मौजूद हैं। बाद के मामलों में धमकियों खतरों को पहचानना आसान नहीं है और न ही उनके इरादों का यहाँ तक कि उन परिस्थितियों को भी पहचानना मुश्किल है जो दूसरे के कार्यो अथवा उदासीनता से उत्पन्न होते है।

इसीलिए मानव सुरक्षा के सभी समर्थक इस बात पर सहमत हैं कि उसका मुख्य लक्ष्य व्यक्ति की सुरक्षा है। परन्तु जनमत इस बात का विश्लेषण करता है कि व्यक्ति की सुरक्षा किस प्रकार की जानी चाहिए मानव सुरक्षा की संकुचित अवधारणा के समर्थक, जिन्होंने मानव सुरक्षा रिपोर्ट को मान्यता दी है, में व्यक्ति को मिलने वाली हिंसक धमकियों पर ध्यान केन्द्रित

किया है। जबकि ये खतरे गरीबी, राज्य समता में कमी और सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक असमानता के विभिन्न रूपों से गहरे से जुड़े हैं।

मानव सुरक्षा की विस्तृत अवधारणा के समर्थकों ने 'संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम 1994 में अपनी बात स्पष्ट रूप से रखते हुए मानव विकास रिपोर्ट दी और 'मानव सुरक्षा आयोग 2003 की अब मानव सुरक्षा में तर्क दिया गया कि खतरों के क्षेत्र को विस्तृत करते हुए इसमें भूख, बीमारी और प्राकृतिक आपदाओं को शामिल करना चाहिए क्योंकि युद्ध जातीय नरसंहार और आतंकवाद से मारे जाने वाले लोगों के मुकाबले दूसरे मरने वाले लोगों की संख्या कहीं ज्यादा है। हालांकि अनुसंधान के क्षेत्र में यह अभी भी बहस का विषय है लेकिन मानव सुरक्षा के लिए दोनों ही दृष्टिकोण एक दूसरे के विरोधी होने के स्थान पर पूरक हैं।

1.3 अवधारणा का विकास

मानव सुरक्षा के विचार के सबसे महत्वपूर्ण अग्रदूत बहुराष्ट्रीय स्वतंत्र आयोगों की श्रृंखला की रिपोर्ट थी, जिसे प्रसिद्ध नेताओं विद्वानों और शोधकर्त्ताओं ने तैयार किया था। 1970 में शुरूआत में क्लब ऑफ रोम ग्रुप ने 'विश्व की समस्याऐं' पर अनेक खंडो की सीरिज जारी की जिसका आधार यह विचार था कि "सभी देशों के लोगों को जो जटिल समस्याऐं परेशान कर रही है वे है:- गरीबी, पर्यावरण का निम्न स्तर, संस्थाओं में विश्वास समाप्त होना, अनियंत्रित शहरीकरण रोजगार सम्बंधी असुरक्षा, युवाओं में अलगाव परम्परागत मूल्यों की स्वीकृति मुद्रास्फीति और अन्य मौद्रिक व आर्थिक गडबडियां। रिपोर्ट में कहा गया विश्व का प्रत्येक व्यक्ति दबावों और समस्याओं की एक श्रृंखला का सामना कर रहा है। जिस पर ध्यान देने और कार्य किए जाने की आवश्यकता है। ये समस्याऐं उसे विभिन्न स्तरों पर प्रभावित करती है। व्यक्ति अपना ज्यादातर समय कल के भोजन की तलाश में बिता देता है उसे भी निजी शान्ति अथवा जिस देश में वह रह रहा है उसकी शक्ति के बारे में सोचना चाहिए। वह विश्व युद्ध के बारे में सोचे अथवा उसके पड़ौस में अगले सप्ताह होने वाले विभिन्न खानदानी संघर्ष के बारे में। "इस प्रकार के और अन्य महत्वपूर्ण विषय वैश्विक प्रवृतियों और शक्तियों के सन्दर्भ में समझने चाहिए जो व्यक्ति पर प्रभाव डालते हैं विशेष रूप से "औद्योगीकरण की तेज रफ्तार, जनसंख्या की तीव्रस्पेस दर, चारों ओर फैला कुपोषण, संसाधनों को समाप्त करना और पर्यावरण का हास" इन विस्तृत, भौतिक तत्वों के बीच अन्तर्सम्बंध बताता है कि विश्व स्तर पर आर्थिक प्रगति की एक सीमा है, इसीलिए महाप्रलय युक्त भविष्य मानव समाज के सामने है। फिर भी, 'विश्व संतुलन की स्थिति तैयार करनी चाहिए, जिससे प्रत्येक व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके और प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमताओं को पहचानने के समान अवसर है।" संक्षेप में, इस समूह ने सुझाव दिया कि जटिल विश्व व्यवस्था व्यक्ति के जीवन अवसरों को प्रभावित कर रही थी और अवधारणात्मक स्तर पर विश्वविकास के लिए कई वैकल्पिक मार्ग थे और अन्ततः विश्व सुरक्षा उन जीवन अवसरों को स्थिर और विकसित करेगी।

1980 के दशक में, दो अन्य स्वतंत्र आयोगों ने विकास और सुरक्षा के चिन्तन को बदलने में योगदान दिया। पहला स्वतंत्र आयोग विली ब्रांट की अध्यक्षता में बना अन्तर्राष्ट्रीय

विकास के मामलों पर था जिसने 1980 में तथाकथित 'उत्तर-दक्षिण रिर्पोट'' दी। रिपोर्ट की प्रस्तावना में ब्राट ने लिखा, हमारी रिपोर्ट उन साधारण से सामान्य से हितों पर आधारित है कि मानवजाति जीना चाहती है, और प्रत्येक को जीने के लिए नैतिक दायित्व जोडने चाहिए। इसने न केवल शांति और युद्ध से सम्बंधित परम्परागत प्रश्न उठाए बल्कि विश्व में अमीर व गरीब के बीच भूख, बहुसंख्यक के दुख की खतरनाक असमानता को कैसे-जीता जाए यह भी बताया। उत्तर-दक्षिण के विकास कार्यक्रमों की अनिवार्यता पर बहस के दौरान, यह देखा गया कि इस बात का सारतत्व था, ''खतरनाक तनावों पर विजय पाना और राष्ट्रों और क्षेत्रों के लिए महत्वपूर्ण और उपयोगी परिणाम देना - परंन्तु सर्वप्रथम और सबसे महत्वपूर्ण हैं- विश्व के सभी भागों में मानव जाति के लिए, यह प्राप्त करना।'' 1980, के दशक के दूसरे आयोग ने, जो निशस्त्रीकरण और सुरक्षा मामलों हेतु स्वतंत्र आयोग था)जिसके सभापति अलोल्फ पाल्मे थे)। अपनी प्रसिद्ध 'सामान्य सुरक्षा' रिपोर्ट दी जिसने शांति और सुरक्षा के वैकल्पिक मार्गो की! ओर विश्व का ध्यान आकर्षित किया। जब इसने सैन्य मामलों पर ध्यान केन्द्रित किया और राष्ट्रीय सुरक्षा को इससे जोडा तो इसने माना कि तृतीय विश्व की सुरक्षा को आर्थिक असमानता से उत्पन्न गरीबी और अभाव का अतिरिक्त खतरा है। ''रिपोर्ट ने यह भी इंगित किया गया ''सामान्य सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि लोग सम्मान और शा ंति से रहें, कि वे भूखे न रहे और रोजगार प्राप्त कर सकें और गरीबी और दीनता के बिना विश्व में रहें।

“शीत युद्ध की समाप्ति के बाद सुरक्षा के मामले में नयी सोच तेजी से विकसित। 1991 में, स्टॉकहोम ने विश्व सुरक्षा पर पहल की और प्रशासन ने 1990 के दशक के सामान्य उत्तरदायित्व के रूप में घोषणा जारी की जिसमें “राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता और शस्त्रीकरण के अतिरिक्त सुरक्षा के लिए अन्य ''तथा 'सुरक्षा की व्यापक / विस्तृत अवधारणा के रूप में, जो विकास को समाप्त करने पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने, अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि दर और प्रजातंत्र में प्रगति को अवरूद्ध करने वाली धमकियों का निराकरण करने के सम्बंध में कार्य कर रही थी। चार वर्ष बाद विश्व प्रशासन पर आयोग ने रिपोर्ट दी ''हमारे वैश्विक 'पड़ोसी' इसने सुरक्षा पर स्टॉकहोम के द्वारा की गई पहल को ही प्रतिध्वनि दी: ''वैश्विक सुरक्षा के सिद्धान्त को, परम्परागत रूप से केन्द्रित राज्यों की सुरक्षा के विचार से अधिक विस्तृत करते हुए इसमें लोगों की सुरक्षा और इस ग्रह की सुरक्षा को भी शामिल किया जाना चाहिए।“

यदि आयोग की रिपोर्ट मानव सुरक्षा के विचार की पूर्वसूचना थी तो 1990 के प्रारम्भिक काल में निस्संदेह मानव सुरक्षा का दृष्टिकोण बिल्कुल स्पष्ट था। उसमें सबसे पहले योगदानकर्त्ता थे महबूब उल हक और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम)UNDP)। एक सम्माननीय विकासवादी अर्थशास्त्री और UNDP के लम्बे समय तक सलाहकार रहे श्री हक, मानव विकास सूचकांक HQI देने वालो के रूप में मुख्य थे। मानव विकास के प्रयास स्पष्ट रूप से इस धारणा को केन्द्र में रख कर किए गए थे कि विकास की सोच और नीतियां का केन्द्र; सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के कल्याण के स्थान पर, व्यक्ति के कल्याण को होना चाहिए। मानव सुरक्षा पर

दूसरा महत्वपूर्ण विचार कनाडा सरकार और कनाडा के उन विद्वानों का था जिन्होंने मध्यवर्ती शक्ति में पहल की।

मानव सुरक्षा का विचार सामान्यत: संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम-1994 की रिपोर्ट की ओर ले जाता है। स्वर्गीय श्री महबूब-उल-हक सलाहकार अर्थशास्त्री जो इस विचार से प्रारम्भ से ही बहुत गहराई से जुड़े थे, जिन्होंने मानव विकास सूचकांक तैयार करने में मुख्य भूमिका निभाई और जो कि वर्तमान मानवीय प्रशासन सूचकांक)HGI) के पीछे निरन्तर एक सक्रिय शक्ति के रूप में कार्यरत रहे। श्री हक का दृष्टिकोण उनके शोधपत्र मानव सुरक्षा की नयी अनिवसर्यताऐं 1994"। श्री हक ने सुरक्षा किसके लिए प्रश्न का अत्यंत सरल उत्तर दिया। मानव सुरक्षा, राज्यों और राष्ट्रों के बारे में नहीं हैं, परन्तु यह धारणा व्यक्तियों और लोगों से जुड़ी हैं। इस प्रकार उनका तर्क था कि विश्व मानव सुरक्षा के एक नये युग में प्रवेश कर रहा है जिसमें सुरक्षा का सम्पूर्ण सिद्धान्त ही बदल जाएगा- और नाटकीय ढंग से बदलेगा।" इस नयी मान्यता में सुरक्षा, राष्ट्रों की सुरक्षा होने के स्थान पर व्यक्तियों की सुरक्षा के समकक्ष होगी,। अथवा इस तरह भी कहा जा सकता है कि लोगों की सुरक्षा सिर्फ राज्यक्षेत्र की सुरक्षा मात्र नही है। इसके अलावा उन्होने अधिक जोर देकर लिखा कि "हमें मानव सुरक्षा के एक नये सिद्धान्त को प्रचलन में लाने की आवश्यकता है जो हमारे देश के हथियारों में दिखाई देने के स्थान पर हमारे लोगों के जीवन में प्रतिबिम्बत हो।"

इस नये सिद्धान्त को संरक्षण दिलाने हेतु हम किन मूल्यों की तलाश कर रहे हैं ? हक इस पर बहुत स्पष्ट नहीं हैं, परन्तु स्पष्ट तौर पर व्यक्ति की सुरक्षा और कल्याण मोटे तौर पर मुख्य मूल्य हैं। जहाँ सुरक्षा का परम्परागत सिद्धान्त राज्यक्षेत्र की अखंडता और राष्ट्रीय स्वतंत्रता पर मूलभूत मूल्य के रूप में बल देता है जिनकी सुरक्षा की आवश्यकता हैं, मानव सुरक्षा इन सबसे सम्बंधित होने के अलावा, 'सभी लोगों की सब जगह अपने घर में अपने कार्य स्थल पर अपनी गलियों में अपने समुदाय में और अपने पर्यावरण में; सुरक्षा और कल्याण है। इन मूल्यों को सबसे बड़ी धमकियां क्या हैं ? यहाँ श्री हक अपने शोधपत्र में इन धमकियों की संक्षिप्त सूची देते हैं :- नशीली दवाईयां, आतंकवाद, और गरीबी। आगे इस लेख में, मानव सुरक्षा के खतरों के निराकरण पर विचार करते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि, कम से कम कार्यान्वय के स्तर पर, एक अत्यंत आधारभूत खतरा मौजूद हैं, जो असमान विश्व व्यवस्था के नाम से जाना जाता है जिसमें थोड़े से राज्य और अभिजन विशाल मानवता की हानि के लिए जिम्मेदार है। यह विश्व व्यवस्था इस सिद्धान्त और विकास के प्रयोगों को मूर्तरूप देने में सफल हुई। जो सुरक्षा हेतु हथियारों पर विश्वास करते थे, विश्व को उत्तर और दक्षिण में बाँट दिया और वैश्विक संस्थाओं)जैसे संयुक्त राष्ट्रसंघ और ब्रेटन बुड अरेन्जमेंट)एवं सीमान्तता बढ़ गई। तो क्या किया जाए? मानव सुरक्षा को कैसे प्राप्त किया जा सकता है ? इस क्षेत्र में श्री हक ने महत्वपूर्ण योगदान दिया और यहाँ बुनियादी कार्य कम है। मूलभूत रूप से, मानव सुरक्षा को "विकास से प्राप्त किया जा सकता है न कि हथियारों" से विशेष रूप से 5 बुनियादी कदम इस सिद्धान्त को नव जीवन देने हेतु आवश्यक है: मानव विकास का सिद्धान्त जो समानता पर बल

देता हो, निरन्तर और स्थिर जनसाधारण की सहभागिता, मानव सुरक्षा के विस्तृत एजेंडा में शांति की योजना, उत्तर और दक्षिण के मध्य एक नयी साहोदारी शुरू करना जिसका आधार न्याय हो, दान नहीं जो वैश्विक बाजार के अवसरों की समानता और आर्थिक पुनर्निर्माण पर आधारित हो, विश्व सरकार के एक नये ढांचे का निर्माण करना जो अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं जैसे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्रसंघ आदि में सुधार करे और अन्त में विश्व नागरिक समाज की भूमिका को बढ़ाना। हक ने मानव की वैश्विक सुरक्षा के लिए सुझावों की एक लम्बी सूची दी। इसमें शामिल है -

विकास के स्तर पर स्थिरता, अवसरों की समानता)उत्पादक साधनों को उचित वितरण जिसमें भूमि और लाभ शामिल है। बाजार के अवसरों में मुक्त प्रवेश रोजगार उत्पत्र करना, सामाजिक सुरक्षा का ढांचा) और वैश्विक न्याय जिसमें शामिल है, "विश्व आय, उपभोग और जीवन शैली प्रतिमान का पुनर्निमाण"

सैन्यरूप से - हथियारों पर होने वाले खर्चो को कम करना, सभी सैनिक अड्डों को बंद करना सैन्य सहायता को आर्थिक सहायता में बदलना हथियार देने की योजनाओं को रोकना, तथ्य निर्यात पर आर्थिक सहायता समाप्त करना, सुरक्षा उद्योगों में कामगारों को पुर्नप्रशिक्षित करना।

उत्तर-दक्षिण पुनर्निर्माण :- विश्व बाजार तक गरीब राष्ट्रों की समान पहुँच बनाना और व्यापार प्रतिबंधों को हटाना)विशेष तौर पर कपड़ा उद्योग व कृषि में) अप्रवासी नियंत्रण और वैश्विक प्रर्यावरण संसाधनों के अत्याधिक दोहन के कारण धनी राष्ट्रों से वित्तीय क्षतिपूर्ति दिलवाना, और विभिन्न सेवाओं।,)जैसे पर्यावरण सेवाऐं, नशीली दवाओं और बीमारियों की रोकथाम के लिए वैश्विक भुगतान व्यवस्था विकसित करना, आर्थिक संकट और गलत आर्थिक आचरण)जैसे प्रतिभा पलायन को बढ़ावा देना, अकुशल श्रम को बाहर जाने से रोकना, निर्यात प्रतिबंध) से होने वाली हानि से बचने हेतु यह व्यवस्था आवश्यक मानी।

संस्थागत रूप से:- अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्र को पुनर्जीवित और पुनर्निर्मित करना जिससें मानव विकास पर अधिक ध्यान केन्द्रित हो आर्थिक व्यवस्था में सामन्जस्य करना जिसका लक्ष्य गरीब के मुकाबले अमीर हो, गरीबों को सशक्त करने वाली नयी सरकार का मॉडल नयी संस्थाएं जैसे विश्व केन्द्रिय बैंक, एक वैश्विक कर व्यवस्था विश्व व्यापार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय निवेश ट्रस्ट, विश्व कोश, और इन सबसे अलग प्रतिनिधि और वीटो रहित आर्थिक सुरक्षा परिषद)संयुक्त राष्ट्र संघ में) हो जो निर्णय निर्माण की सर्वोच्च संस्था हो और भोजन, पर्यावरण सुरक्षा, गरीबी तथा रोजगार अप्रवास व नशे से सम्बंधित सभी मामलों पर कार्य करेगी जो मानवता के विरूद्ध है।

वैश्विक नागरिक समाज का विकास:- इन सबके अतिरिक्त जनसाधारण की सहभागिता और निरंकुश व्यवस्था से प्रजातांत्रिक सरकार में परिवर्तन अत्यंत आवश्यक है।।

1.4 यू. एन. डी. पी. और मानव सुरक्षा

जिस वर्ष श्री हक की मानव सुरक्षा पर संक्षिप्त पुस्तक प्रकाशित हुई, उसी वर्ष संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम रिपोर्ट 1994 प्रकाशित हुई जिसमें मानव सुरक्षा को एक खड के रूप में शामिल गया। सुरक्षा की पुर्नपरिभाषा मानवीय पहलू")इसके बाद, रिपोर्ट) नामक इस रिपोर्ट में परम्परागत सुरक्षा के स्थान पर विकल्प और मानव विकास के बारे में आवश्यक सहायक उपाय देने का दावा किया गया। इसने सुरक्षा से सम्बंधित 4 प्रमुख प्रश्नों के उत्तर किस प्रकार दिए? इस रिपोर्ट "सुरक्षा किस की" 'प्रश्न का उत्तर सुरक्षा परम्परागत धारणाओं के सन्दर्भ में दिया गया। सुरक्षा की परम्परागत धारणा का संबंध था" बाहरी आक्रमण से राज्य की सुरक्षा से, अथवा विदेश नीति में राष्ट्रीय हित की सुरक्षा से अथवा परमाणविक संहार की धमकी से विश्व की सुरक्षा से, इसका सम्बंध व्यक्तियों की अपेक्षा राष्ट्रीय-राज्य से अधिक था। इस धारणा ने "साधारण की तार्किक सोच को अनदेखा किया जो अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में सुरक्षा के इच्छुक थे। "दूसरी ओर मानव सुरक्षा व्यक्ति केन्द्रित है। इस प्रकार श्री हक की तरह इस रिपोर्ट में भी इस बात पर बल दिया कि मानव सुरक्षा का उद्देश्य व्यक्ति अथवा लोगों की सुरक्षा है। इस तर्क के पक्ष में रिपोर्ट में संयुक्त राष्ट्र के मूल दस्तावेजों और सुरक्षा की मूल रूपरेखा में इसे भय से मुक्ति "अभावों से मुक्ति' और राज्य और व्यक्ति को समान मानना" जैसे उद्धरणों से इसकी विशिष्टता को लागू किया गया है। दुर्भाग्य से, शीत युद्ध के दौरान, सुरक्षा की सोच राज्य क्षेत्र के संरक्षण की ओर हो गई थी, लेकिन शीत युद्ध के बाद संतुलन करने का समय था और उसमें लोगों का संरक्षण भी शामिल था।

इस रिपोर्ट में सुरक्षा को लेकर दो भाग है। इसका पहला भाग- "संरक्षण और सशक्तिकरण" है। संरक्षण लोगों की खतरों के समय कवच की तरह काम करता है। कुछ प्रक्रियाओं और मानकों, संस्थाओं को विकसित करने के लिए इसे संगठित प्रयासों की आवश्यकता हैं जिससे असुरक्षा को व्यवस्थित तरीके से समझा जा सके। सशक्तिकरण से लोगों में अपनी पूरी क्षमता का विकास होता है और इससे वे निर्णय-निर्माण में पूर्ण सहभागी बनेगे। संरक्षण)सुरक्षा) और सशक्तिकरण परस्पर सम्बद्ध हैं और अधिकतर स्थितियों में दोनों की आवश्यकता होती है। मानव सुरक्षा, राज्य सुरक्षा की पूरक है, मानव विकास को प्रोत्साहन देती है और मानवाधिकार को आगे बढाती है। यह जनकेन्द्रण के माध्यम से राज्य सुरक्षा की पूरक है और असुरक्षा को खत्म करती है जिसे राज्य की सुरक्षा के लिए खतरा नहीं माना जाता। इसके नीचे के खतरों को देखने पर दूसरे मानव विकास का ध्यान "प्रगति व समानता' से अलग हो जाता हैं। मानवाधिकारों का सम्मान करना ही मानव सुरक्षा संरक्षण का सार है। प्रजातांत्रिक सिद्धान्तों को बढ़ावा देना मानव सुरक्षा और विकास को प्राप्त करने की ओर, एक कदम है। इससे जनता शासन में भाग लेने योग्य और अपनी समस्याओं की सुनवाई करवाने योग्य सक्षम बनती है। इसके लिए मजबूत संस्थाओं के निर्माण विधि के शासन को स्थापित करने और जनता को सशक्त करने की आवश्कता है।

1.5 व्यक्तियों की सुरक्षा बढ़ाने के तरीके

मानव सुरक्षा संघर्ष और अभावों जैसे मुद्दे पर सशक्त करने और एक जुट प्रयास करने की इच्छुक है। इसके लिए प्रयास किए गए जैसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा की गई सहस्त्राब्दी की घोषणा और सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य)MDGS)। मानव सुरक्षा को पाने के लिए, सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य को पाने और उनसे आगे जाने हेतु लोगों को मिलने वाली धमकियों का सामना करने के लिए पूर्ण प्रयास करने की आवश्यकता है।

1.5.1 मानव सुरक्षा पर आयोग की रिपोर्ट की रूपरेखा

आयोग ने विभिन्न छोड़े गए क्षेत्रों में अपनी नीतियों को प्रस्तुत किया:-

1. हिंसक संघर्ष में लोगों को संरक्षण।
2. हथियारों की होड़ से लोगों की सुरक्षा।
3. एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा रहे लोगों की सुरक्षा का समर्थन करना।
4. संघर्षोत्तर काल के लिए मानव सुरक्षा संक्रमण कोष बनाना।
5. अत्यधिक गरीबों के लाभ हेतु व्यापार मेलों और बाजारों को प्रोत्साहित करना।
6. प्रत्येक को न्यूनतम जीवन स्तर प्रदान करने हेतु कार्य करना।
7. मूलभूत स्वास्थ्य सेवाओं तक विश्व की पहुँच को सुनिश्चित करने को सर्वाधिक प्राथमिकता देना।
8. सुरक्षित अधिकारों के लिए सशक्त समान वैश्विक व्यवस्था विकसित करना।
9. मूलभूत वैश्विक शिक्षा से सभी लोगों को सशक्त करना।
10. जब व्यक्ति की स्वतंत्रता का सम्मान विभिन्न पहचानों और मान्यताओं से जुड़ा है, ऐसे में मानव की वैश्विक पहचान को स्पष्ट करना।

1.5.2 हिंसक संघर्ष में लोगों की सुरक्षा

संघर्षो में मुख्यतया नागरिक ही हताहत होते है। नागरिकों को सुरक्षित काने के लिए सिद्धान्तों और व्यवस्था को शक्तिशाली बनाना होगा। इसके लिए बोधगम्य और संगठित रणनीतियों की आवश्यकता है जो राजनीतिक सैन्य, मानवीय और विकास के विभिन्न आयामों को जोड़े। इस आयोग ने मानव सुरक्षा को सुरक्षा संगठनों के सभी स्तरों पर प्राथमिकता पर रखने का सुझाव दिया, मानवीय कानून और नागरिकता के सन्दर्भ में मानव सुरक्षा का समर्थन कैसे हो, इस पर काफी विरोध हैं। इन अन्तरों को पाटना उतना ही आवश्यक हैं। जितना मानवाधिकारों के हनन के अपराध की प्रवृति को रोकने पर ध्यान देना।

लोगों के मध्य सह अस्तित्व और विश्वास को बढ़ाने के लिए समुदाय आधारित रणनीतियां सहायक होगी। इसी के समान, मानवीय सहायता द्वारा जीवन रक्षक आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी अत्यंत आवश्यक है। महिलाओं बच्चों, बुजुर्गो और अन्य अति संवेदनशील समूहों के संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। हथियारों की होड़ और अवैध व्यापार को रोक कर अपराधों के खिलाफ लड़ना और लोगों को शस्त्र विहीन करना तथा लोगों को महत्व देना इसकी प्राथमिकता है।

1.5.3 स्थान परिवर्तन कर रहे व्यक्तियों संरक्षण व सशक्त करना

बहु संख्यकों के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना अपनी आजीविका को उन्नत करने का अवसर है। अन्य लोगों के लिए प्रवास करना स्वयं की सुरक्षा का एक विकल्प हैं। ऐसा उन लोगों के लिए हैं जिन्हें संघर्षो अथवा गंभीर मानवाधिकार हनन के लिए मजबूर भागना पड़ता है। कुछ अन्य लोगों को अचानक आई विपदा अथवा अत्यधिक अभावों से बचने के लिए अपना घर छोड़ने को मजबूर होना पड़ता हैं। वर्तमान में,शरणाथियों के अलावा प्रवास को नियंत्रित करने अथवा संरक्षण स्वीकृत अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था नहीं। हैं। प्रवासी लोगों की सुरक्षा और राष्ट्रों की सुरक्षा और विकास की आवश्यकताओं पर ध्यानपूर्वक संतुलन करने पर उच्च स्तरीय खुले विचार-विमर्श तथा संवादों के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय आव्रजन ढ़ाचे को खोजा जाना चाहिए। शरणार्थियों का संरक्षण और आन्तरिक रूप से अपनी जगह से अलग हुए लोगों का संरक्षण सुरक्षित करना और उनको इस स्थिति से छुटकारा दिलाने के तरीके को पहचानना भी उतना ही महत्वपूर्ण हैं।।

1.5.4. संघर्षोत्तर काल में व्यक्तियों का संरक्षण और सशक्तिकरण

युद्ध विराम समझौते और शांति समझोतों ने संघर्ष समाप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि इससे शांति और मानव सुरक्षा आ जाए। संघर्ष में लोगों की सुरक्षा का दायित्व पुनर्निर्माण के दायित्व का पूरक होना चाहिए। संघर्ष पीड़ित राज्यों के पुनर्निमाण हेतु एक नये ढांचे और वित्तीय रणनीति की आवश्यकता हैं, एक ऐसी रणनीति जो लोगों की सुरक्षा और सशक्तिकरण पर केन्द्रित हो।इस तरह का मानव सुरक्षा ढाँचा विभिन्न, मुद्दों के आपसी तालमेल पर बल देता हैं जैसे नागरिक पुलिस को सशक्त कर लड़ाकूओं को कमजोर कर लोगों की सुरक्षा को सुनिश्चित करना, जगह परिवर्तित करने वाले लोगों की तत्काल)मूलभूत) आवश्यकताओं को पूरा करना, पुनर्निर्माण और विकास शुरू करना, झगड़ों को निपटाना और सहअस्तित्व को उन्नत करना और प्रभावशाली सरकार को बढ़ावा देना। सफलता के लिए, नेतृत्व की आवश्यकता है जो मानव सुरक्षा के मुद्दे पर सभी को एक कर सके। इस रूप रेखा को क्रियान्वित करने के लिए संघर्षोत्तर स्थितियों में एक नयी कोष निर्माण करने की नीति बनानी होगी, जिसमें वास्तविक स्तर पर योजना व बजट सामजंस्य सुनिश्चित

किया जा सके।

1.5.5 - आर्थिक असुरक्षा अवसरों के चयन की शक्ति

विश्व में अत्यधिक गरीबी व्याप्त हैं। बाजारों की उचित काम काज साथ ही गैर व्यवसायिक संस्थाओं के विकास से ही गरीबी उन्मूलन हो सकता है। सक्षम और समान व्यापार व्यवस्थाऐं गरीबतम व्यक्ति तक आर्थिक प्रगति को पहुँच और लाभों का उचित वितरण आवश्यक है। इस अत्यधिक गरीबी की बात करने के साथ-साथ मानव सुरक्षा का विचार अचानक आए आर्थिक संकट प्राकृतिक आपदा और संकटों के सामाजिक प्रभावों पर भी, अपना ध्यान केन्द्रित करता है। जब संकट आता हैं अथवा उन्हें गरीबी से बाहर निकालने में लोगों को सुरक्षित करने के लिए हमें उनकी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सामाजिक

बन्दोबस्त हैं तथा न्यूनतम आर्थिक व सामाजिक स्तर सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। विश्व के दो तिहाई लोग सामाजिक सुरक्षा प्राप्त नहीं हैं अथवा उनके पास सुरक्षित निश्चित कार्य नहीं है। सभी के लिए सतत् आजीविका सुनिश्चित करने और कार्य आधारित सुरक्षा हेतु प्रयासों पर बल देने की जरूरत है। भूमि, लाभ, शिक्षा और घर, की प्राप्ति, विशेषरूप से गरीब महिलाओं के लिए बहुत मुश्किल है। संसाधनों का समान वितरण आजीविका की सुरक्षा की कुंजी है और इससे लोगों के स्वयं की सामर्थ्य और कुशलता को बढाया जा सकता है। सामाजिक संरक्षण के उपाय और सुरक्षा व्यवस्था, सामाजिक और आर्थिक स्तर को बढ़ा सकते है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की सहायता से राज्यों को प्राकृतिक आपदाओं और आर्थिक अथवा वित्तीय संकटों की पूर्व चेतावनी और उनसे बचाव के उपाय की व्यवस्था स्थापित करने की आवश्यकता है।

1.5.6 मानव सुरक्षा व स्वास्थ्य

स्वास्थ्य सम्बंधी देखभाल में प्रगति होने के बावजूद भी 2001 में 22 लाख लोग निवारक रोगों से मर गए। HIV/AIDS जल्दी ही सबसे बड़ी स्वास्थ्य सम्बंधी महाविनाश साबित होगी। इन वैश्विक संक्रामक बीमारियों के प्रभाव और गहनता के कारण, गरीबी में जुड़े खतरों और हिंसा जनित स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित लोगों के लिए तुरन्त कार्य करने की आवश्यकता है। सभी स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं को स्वास्थ्य सेवाओं को सार्वजनिक भलाई में बढ़ावा देना चाहिए। सामाजिक कार्यो को सक्रिय करना तथा सहायक सामाजिक व्यवस्थाओं में निवेश करना आवश्यक हैं, इसमें शामिल है, सूचनाओं तक व्यक्ति की पहुँच, बीमारी के कारणों को दूर करने के लिए चेतावनी व्यवस्था मुहैया कराना और बीमारी का अग्रता को करना। विकासशील देशों में जीवन रक्षक दवाओं तक आम नागरिक की पहुँच मुश्किल है। एक समान बौद्धिक सम्पदा अधिकार को विकसित करने की आवश्यकता हैं ताकि शोध और विकास को प्रोत्साहन मिले और जीवन रक्षक दवाओं तक लोगों की पहुँच सुनिश्चित हो सके। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को भी स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ाने के लिए एक वैश्विक साझेदारी विकसित करनी चाहिए, जैसे संक्रामक रोगों के लिए निगरानी और नियंत्रण व्यवस्था को विकसित करना।

1.5.7 मानव सुरक्षा के लिए ज्ञान, कौशल, और मूल्य

ज्ञान जीवन दाता और विभिन्नताओं को सम्मान देना सिखाने वाली बुनियादी शिक्षा और सार्वजनिक सूचना, मानव सुरक्षा के लिए विशेषरूप से महत्वपूर्ण है। सुरक्षा आयोग ने अन्तर्राष्ट्रीय सुमुदाय से आग्रह किया कि उन्हें विश्व में प्राथमिक शिक्षा विशेष रूप से बालिका शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने में सक्रिय रूप से सहायता करनी चाहिए। स्कूलों में बच्चों को शारीरिक असुरक्षा नहीं होनी चाहिए बल्कि छात्रों का हिंसा, जिसमें सेक्सुअल हिंसा भी शामिल हैं से सुरक्षा मिलनी चाहिए। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो विभिन्नता को सम्मान दें और एक संतुलित पाठ्यक्रम और पढ़ाने के तरीके से हमारी पहचान को बढ़ावा दे। सार्वजनिक संचार माध्यम बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे जीवन दक्षता और राजनीतिक मामलों पर सूचनाऐं दे सकते हैं और सार्वजनिक बहस में जनता की आवाज को मुखर करते है। शिक्षा और संचार

सेवाओं को केवल कार्य अवसर और परिवार के स्वास्थ्य सम्बंधी सूचना तथा दक्षता ही नहीं देनी चाहिए बरन् उन्हे लोगों को अपने अधिकार और दायित्वों को पूरा करने योग्य भी बनाना चाहिए।

1.6 दर्तमान मे मानव सुरक्षा

सम्पूर्ण विश्व की मानव सुरक्षा जुड़ी हुई है-जैसे आज विश्व में वस्तुऐं सेवाऐं, वित, लोग और लोगों की धारणाऐं। राजनीतिक उदारीकरण और प्रजातंत्र करण ने जहाँ नये अवसर विकसित किए हैं वही, राज्यों में राजनीतिक और आर्थिक अस्थिरता और संघर्ष जैसे दोष भी उत्पन्न किए हैं। एक वर्ष में 800से अधिक लोगें ने हिंसा में मारे गऐ। लगभग 2.8 अरब लोग गरीबी, बीमारी अशिक्षा और अन्य से ग्रस्त हैं। संघर्ष और अभाव एक दूसरे से जुड़े है। अभाव हिंसा से कई तरीकों से जुड़ा हैं हांलाकि इसकी सावधानीपूर्वक पड़ताल होनी चाहिए। इसके विपरीत युद्ध लोगों को मारता हैं उनके बीच के विश्वास को खत्म करता हैं, गरीबी और अपराध बढ़ाता हैं तथा अर्थव्यवस्था की विकास दर को धीमा कर देता हैं। इस तरह की असुरक्षाऐं प्रभावशाली तरीके के एक संगठित दृष्टिकोण की मांग करती है। रिपोर्ट में मानव सुरक्षा पर. दी गई घोषणा आज के विश्व की चुनौतियाँ पर प्रतिकिया है। इन असुरक्षाओं पर संस्थाओं और नीतियों में आर्थिक मजबूत और एकजुट तरीके से कार्य करना चाहिए। राजा को सुरक्षा की प्राथमिक जिम्मेदारी निभाते रहता होगा। परन्तु सुरक्षा सम्बंधी चुनौतियों के अधिक जटिल हो जाने तथा नये लोगों द्वारा कार्य किए जाने के कारण हमें इस क्षेत्र में परिवर्तन की आवश्यकता हैं।

इस प्रकार सम्पूर्ण सोच का केन्द्र राज्य से बढ कर व्यक्ति की सुरक्षा होना चाहिए जिसे मानव सुरक्षा कहा गया। मानव सुरक्षा से अभिप्राय हैं जीवनोपयोगी महत्वपूर्ण स्वतंत्रताओं का संरक्षण। इसका अर्थ हैं लोगों को घातक और सब ओर व्याप्त धमकियों और हालातों से संरक्षण देना उनकी शक्ति और आकांक्षाओं को मजबूती देना।

इसका अर्थ लोगों को जीने योग्य स्थितियां सम्मान और आजीविका देना भी है। मानव सुरक्षा विभिन्न प्रकार की स्वतंत्रताओं को जोड़ती हैं। मानव सुरक्षा विभिन्न प्रकार की स्वतंत्रताओं को जोड़ती हैं-अभावों से मुक्ति भय से मुक्ति और अपने स्वंय के स्तर पर निर्णय लेने की स्वतंत्रता। ऐसा करने के लिए दो नीतियां हैं- संरक्षण और सशक्तिकरण संरक्षण लोगों को खतरों से बचाता हैं।इसके लिए मिल-जुल कर प्रयास करने की आवश्यकता हैं जिससे ऐसे मूल्य, प्रकियाऐं और संस्थाओं को विकसित किया जा सके जिनसे. असुरक्षा से व्यवस्थित तरीके से निपटा जा सके। सशक्तिकरण लोगों को अपनी क्षमता विकसित करने योग्य बनाता हैं। जिससे ये लोग निर्णय निर्माण में पूर्ण भागीदार बने। संरक्षण और सशक्तिकरण परस्पर मजबूती प्रदान करता हैं और अधिकतर स्थितियों में दोनों की जरूरत होती है।

मानव सुरक्षा, राज्य सुरक्षा की पूरक हैं, जो मानव विकास को उन्नत और मानवाधिकार को आगे बढ़ती है। यह जनकेन्द्रित होकर राज्य सुरक्षा की पूरक हैं और असुरक्षा को महत्व नहीं देती। अन्य खतरों को देखते हुए यह मानव विकास का ध्यान' ' समानता के

साथ प्रगति' ' से आगे विस्तृत करती है। मानव अधिकारों को सम्मान देना ही मानव सुरक्षा के संरक्षण का सार है।

प्रजातांत्रिक सिद्धान्तों को बढावा देना, मानव सुरक्षा और विकास को प्राप्त करने की ओर एक कदम हैं। इससे लोग सरकार में सहभागिता देने योग्य बनते हैं और उनकी बात को महत्व मिलने लगता है। इसके लिए शक्तिशाली संस्थाओं विधि का शासन स्थापित करने तथा लोगों को सशक्त करना आवश्यक हैं।

1.7 निष्कर्ष

इनमें से प्रत्येक नीति को प्राप्त करने के लिए संयुक्त प्रयास आवश्यक हैं- सार्वजनिक, निजी और नागरिक समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं का, आपसी तालमेल होना चाहिए जिससे मूल्यों और मानकों के स्पष्टीकरण और विकास में सहायता मिले विविधताओं से परिपूर्ण कार्यो को एक जुट होकर प्रारम्भ कर सके, और प्रगति व कार्य निष्पादन पर नजर रखी जा सके। इस प्रकार के प्रयास एक क्षैतिजीय वैधता के सीमाओं के पार साधन सृजित कर सकेगें जो परम्परागत लम्बवत ढाँचे के पूरक होंगे। इस मैत्री का शानदार प्रदर्शन उदीयमान अन्तर्राष्ट्रीय जनमत की आवाज को सामने लाएगा। मानव सुरक्षा एक उत्प्रेरक की तरह काम कर सकेगी जो बहुत सी चल रही योजनाओं को जोड़ेगी। संसाधनों की प्रभावकारी व पर्याप्त सक्रियता भी आवश्यक है। केवल अतिरिक्त संसाधन देने की प्रतिबद्धता ही काफी नहीं हैं बल्कि जरूरतमंद लोगों को सहायता देना प्राथमिकता होनी चाहिए। इसी सन्दर्भ में आयोग ने मानव सुरक्षा के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ट्रस्ट फंड के महान योगदान की सराहना की और दानदाताओं की संख्या बढ़ाने हेतु प्रोत्साहित किया। इस आयोग ने मानव सुरक्षा पर एक सलाहकार बोर्ड स्थापित करने की सिफारिश भी की जो संयुक्त राष्ट्र ट्रस्ट फंड को दिशा दे और उदयोग की सिफारिशों पर कार्यवाही करे। आयोग ने एक मुख्य समूह बनाने का सुक्षाव दिया जिसमें स्वेच्छा से मानव सुरक्षा में रूचि लेने वाले राज्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठन और नागरिक समाज शामिल हों और संयुक्त राष्ट्र संघ तथा ब्रेटेन वुड्स संस्थाओं के साथ कार्य करें- इससे संसाधनो का थोड़े से निवेश ही अत्यधिक प्रभाव डाले और अलग अलग हो रहे मानव सुरक्षा

कार्यकर्त्ताओं को शक्तिशाली वैश्विक मित्रता में आगे बढ़ाएँ।

1.8 अभ्यास प्रश्न

1. मानव सुरक्षा से आप क्या समझते है?
2. मानव सुरक्षा के विकास में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की भूमिका का विश्लेषण कीजिये?
3. जन सुरक्षा बढ़ाने के विभिन्न उपायों का मूल्यांकन करें?

1.9 संदर्भ ग्रंथ

1. लॉयड एक्सवर्थी, "कनाडा एंड ह्यूमन सिक्योरिटी: दि नीड फॉर लीडरशिप। ''अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका, वॉल्यूम LII,1997'

2. बॉल्विन, डेविक ए, 'दि कॉन्सेप्ट ऑफ सिक्योरिटी' रिन्यू ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज वॉल्यूम 23, 1997
3. बॉअर, लीन एंड एड कॉकॉक, 'डेवलेपमेट एंड हूमन सिक्योरिटी'' थर्ड क्वाटर्ली, वॉल्यूम 15न 3, 1914
4. बुजन, बैरी ओले वीवर एंड जैप डी वायल्ड सिक्योरिटी: ए न्यू फ्रेमवर्क ऑफ एनालिसिस, बॉल्डर लीनर रेनर, 1998

इकाई - 2
मानवाधिकार तथा गाँधी

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 मानवाधिकार जागरूकता विषय की घटनाएँ

2.2.1 गाँधीजी को अपमानित करना

2.2.2 मिसेज रोजा पार्क को अपमानित करना

2.3 मार्टिन लूथर किंग तथा गाँधी की विचारधारा में समानता

2.4 गाँधी और मार्क्स

2.4 सार्वभौमिक घोषणा पर गांधी का प्रभाव

2.6 निष्कर्ष

2.7 अभ्यास प्रश्न

2.8 संदर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप मानवाधिकार के मूल के विषय में जानकारी प्राप्त करेगें। इस इकाई के उद्देश्य हैं -

- उन घटनाओं के विषय में जाने जो मानवाधिकारों के विषय में जानकारी प्रदान करती हैं।
- गाँधी जी के साथ यात्रा के दौरान क्या अभद्र व्यवहार किया गया था।
- रोजा पार्क के साथ अपमानजनक अन्याय क्या था ?
- गाँधी तथा मार्क्स की विचारधारा किस प्रकार समान थी।

2.1 प्रस्तावना

मानवाधिकार मानवीय गौरव, मानवीय तथा अमानवीय व्यवहार से सुरक्षा प्रदान करने का मुख्य विषय है। कुछ घटनाएँ कुछ महान विचारकों के मस्तिष्क में आयी तथा उनकी मानवीय गौरव के प्रति जागरूकता मानवाधिकार का आधार बनी।

2.2 मानवाधिकार जागरूकता विषय की घटनाएं

दो घटनाएँ प्रथम साउथ अफ्रीका में सन् 1893 तथा द्वितीय यू.एस.ए. में सन् 1956 में घटित हुई संसार में मानवाधिकारों से सम्बन्ध जिन्होंने नागरिक अधिकार आन्दोलन के इतिहास को परिवर्तित कर दिया:-

1. महात्मा गाँधी का साउथ अफ्रीका में रेल यात्रा के दौरान प्रथम श्रेणी रेल कोच में दिखाया गया साहस।
2. मिसेज रोजा पार्क का यू.एस.ए. में एक पब्लिक बस में मोन्टेगोमरी और इस जुर्म के लिए दण्ड हेतु तैयार होना।

आष्चर्यजनक रूप से कुछ मानवाधिकार कार्यकर्ता तथा नागरिक अधिकार कार्यकर्ता तथा नागरिक समर्थकों ने इन दो समान घटनाओं से होने वाले व्यापक प्रभावों के अध्ययन की ओर श्वान दिया है जिनमें नागरिकों को समान नागरिक अधिकार सुनिश्चित करने हेतु मानवता का संघर्ष एवं मानवीय चेतना जागत करने की तीव्र लालसा उत्पन्न होना तथा जब मूल अधिकारों या आजादी का हनन होना है अथवा उनसे वंचित किया जाता है तब उनके प्रति विद्रोह करने की तीव्र उत्कृण्ठा जागृत होती है।

2.2.1 गाँधी जी को अपमानित करना

महात्मा गाँधी के साउथ अफ्रीका में मानवाधिकार हिंसा सम्बन्धी विविध अनुभव रहे। उनमें प्रथम जातीय भेदभाव था। प्रथम अनुभव के मानवीय मूल्यों का उस समय सामने आता है जब महात्मा गाँधी साउथ अफ्रीका के न्यायालय में एक श्वेत का केश लड़ने के लिए गए तब उनसे पगड़ी उतारने की कहा गया। शीघ्र ही वे एक पड़ौसी इलाके)शहर) ट्रासवेल के काम के लिए गए।

1893 में एक गोरा व्यक्ति प्रथम श्रेणी रेल कोच में यात्रा कर रहा था उसमे गाँधी जी से निम्न श्रेणी के कोच में जाने को कहा। गाँधी जी ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा कि मेरे पास प्रथम श्रेणी, का टिकट है। रेलवे अधिकारी ने कहा - 'No you't must leave this cmpartamat else I shall lave to call police constable to push you out'

"आप नहीं बैठ सकते आपको इस कोच से उतरना पड़ेगा। अन्यथा मैं पुलिस कान्सटेबल को बुलवाऊंगा तथा तुम्हे धक्के देकर बाहर निकलवाऊँगा

"मैं स्वयं नहीं जाऊंगा"

गाँधीजी को धक्का देकर बाहर निकाल दिया गया। गाँधीजी तत्पष्वात प्रतीक्षालय कक्ष में गए तथा विचारने लगे। रात्रि बहुत शरदकालीन थी गाँधीजी का गर्म कोट उनके सामान में था। लेकिन उन्हें भय था कि अगर वे इसके विषय में जानकारी लेगे तो वे पुन: जलील किए जाएगें। उन्होंने विचार किया कि वे कार्य को छोडकर वापस देश लौट आए। लेकिन शीघ्र ही उनके दिमाग में यह प्रश्न आया कि यह बेइज्जती धरातलीय स्तर की है तथा भविष्य में यह विकराल रूप धारण कर सकती है। उन्होंने निर्णय किया कि वे केवल अपने कार्य के लिए ही नहीं जाएगें। अपितु स्वयं कठिनाई से लेंगे तब तक यह भेदभाव के रोग का निदान नहीं होगा।

गाँधीजी सुबह मोरिल वर्ग पहुँचे वहां प्रातःकाल ही भारतीय व्यापारी गाँधीजी को सहानुभूति देने पहुँचे और उन्होंने अपने साथ हो रहे भेदभाव से गांधीजी को अवगत कराया। गांधीजी सायंकाल में ही ट्रेन पकड़कर वापिस यात्रा करने पहुंच गये लेकिन परिचालन ने उन्हें विशेष कोच में यात्रा करने से मना कर दिया। उन्हें साधारण रूप से खड़े हुए यह यात्रा की।

2.2.2 मिसेज रोजा पार्क को अपमानित करना

दूसरी घटना मिसेज रोजा पार्क से सम्बन्ध है जिससे आज मानवाधिकार। की जनक कहा जाता है। सन् 1956 की मोटेगोभी की घटना है जिसमें रोजापार्क निग्रो महिला 30 सीटो की बस में यात्रा कर रही थी। उसे अलगाव वाद के कानून को तोड़ने का ध्यान नहीं था, जो

अलबाना राज्य में प्रसिद्ध था। उसने सीट खाली करने को कहा तथा बस को वापस ले चलने के लिए कहा। वह न ही किसी नागरिक कार्यकर्ता अधिकारी की सदस्य थी तथा न ही किसी राजनीतिक दल की। उसने अपने बचाव के लिए गिपतार होना पसन्द किया। अपेक्षाकृत मानवाधिकार के हनन के विरूद्ध आवाज उठाने के। मार्टिन लूथर की अध्यक्षता में अहिंसात्मक नागरिक अधिकार आन्दोलन आरम्भ हो गया तथा प्रत्येक जन मानस चेतना के साथ अपनी स्वतन्त्रता के लिए कूद पड़ी।

दक्षिण अफ्रीका में मारिन वर्ग शहर में 100 वर्ष के अन्तराल के पश्चात गाँधीजी के पौत्र गोपाल कृष्ण गाँधी को गाँधीजी के मानवाधिकार तथा स्वतन्त्रता के लिए स्वर्ण पदक से पुरस्क्रत किया गया। यह पदक साउथ अफ्रीका के उच्चयुक्त द्वारा उसी स्थान पर दिया गया जहाँ गाँधीजी को रेल के कोच से बाहर निकाला गया था। साउथ अफ्रीका के भारतीय आयुक्त डी. भालसिला ने बाद में गाँधी जी की स्मृति में दिल्ली में मानवीयता पर भाषण देते हुए राजनीतिक, सामाजिक तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के समान विषय पर अपना मत प्रस्तुत किया।

लेखक को एक स्मरणीय घटना याद है जब वह 1956 में रोजा पार्क के साथ एक अहिंसावाद पर अहिंसावादी समूह के सम्मेलन को सम्बोधित कर रहे थे। उस महिला को अगले दिन होने वाली घटना का ज्ञान नहीं था।

मानवीयता तथा स्वतन्त्रता के मूलाधार ओर दिशा निर्देश की कमी तो अमेरिकावासियों के उन दिनों के जीवन समाप्त कर रहे थे। वे एक चक्रव्यूह में उलझे हुए थे। उन्हें कोई आशा की किरण नजर नहीं आ रही थी। वह स्त्री किसी भी प्रकार से भयभीत नहीं थी, उससे यह प्रश्न पूछा गया है। उस बस में क्या घटित हुआ, उसने प्रत्युत्तर देते हुए कहा कि यह उसके बचपन से अधिकार दे और प्रत्येक क्षण मानवता के अस्तित्व के लिए उसने महसूस किया कि वह अमेरिका के काले रंग वालों की श्रेणी में जन्मी है यह उसकी भूल है तथा बुराई है उसका अपमान व अस्तित्व उससे घृणा नहीं करता कि महसूस कर रहे है कि एक चक्रव्यूह में उलझे हुए है तथा उसमें कोई भी उससे बाहर निकलने का मार्ग नहीं दिखाई दे रहा है लेकिन उसका मानवीय अस्तित्व उसको मानसिक कष्टो के लिए उसे घृणित नहीं करता।

यह कहा गया है कि एक व्यक्ति का व्यक्तित्व विभिन्न प्रकार के अनुभवों का केन्द्रीय बिन्दु है जिन्हें वह सहन करता है विभिन्न प्रकार की मानवीय भावनाओं में हनन केवल जब गांधीजी अन्त में ट्रांसवाल पहुंचे तब वे वहीं थे लेकिन उनके मस्तिष्क में दूसरों को प्रेषित करने वाले विचार थे।

गांधीजी ने वहां पहुच कर सभी मानवीय धर्मो के लोगो)हिन्दू, मुस्लिम, पारसी, इसाई) की एक संगोष्ठी आयोजित की जिसका उद्देश्य उनके भविष्य के लिए उत्तम करने की योजना का निर्माण करना था। उन्होंने भारतीयों में घनिष्ट एकरूपता देखी और वे अपने कठोर संकल्प के लिए निकल पडे। नाथल में भारतीयों के विरूद्ध एक अभियोग लगाया गया कि वे सलोवेन्ट अपने घर के पास सफाई न रखे। गांधीजी ने देशवासियों का शिक्षा देने का प्रयास किया। उन्होने डरबन में प्लेग फेलने के दौरान अपनी महत्वपूर्ण सेवाओं की भूमिका प्रदान की। वे हमारे साथ हैं। वे राजनीतिक, शरणार्थी, अल्पसंख्यक तथा अन्य जो घर विहीन है प्रत्येक बडे

शहर में निवास करते है। काले लोग भयपूर्ण वातावरण में रह रहे है जबकि गोरे लोग शहर के दूसरे छोर में अलग प्रकार के भय से ग्रस्त है। हिस्पोनिक तथा अन्य अल्पसंख्यकों की विचारधारा जनता की मुख्य धारा के साथ है। मनुष्य की मार्सीनल की वलनरेबल श्रेणियां है जिसे बहिष्कृत किया गया है जो उस में अधिक है लम्बे समय से समाज की मुख्य धारा है।

2.3 मार्टिन लूथर किंग तथा गाँधी की विचारधारा में समानता

प्रजातिवाद को उत्पन्न करने के मानव प्रवति के संबंध में गांधीजी तथा किंग के विचारों में अनुभुत संगम पाया जाता है। प्रजातिवाद की प्रथा के विषय में व्यक्त किंग के विचार महत्वपूर्ण है।

'प्रजातिवाद का दर्शनवाद जीवन को अवहेलना पर आधारित है। यह शेष उत्पन्न करने वाला तर्क है कि एक जाति सब का केन्द्र है तथा समर्पण का विषय है जिसके सामने सभी को आवश्यक रूप में घुटने टेक कर समर्पण करना चाहिये। यह सब बकवास कुतर्क है कि एक प्रजाति भविष्य की सभी उन्नातियों के लिए जिम्मेदार है। प्रजातिवाद सम्पूर्ण अलगाववाद है। यह न सिर्फ राशि को पृथक करता है बल्कि मस्तिष्क तथा आत्मा को भी पृथक करता है (मै अलगाव करता हूँ। अवश्यमभावी रूप से यह जात-बाहर (सभी प्रजाति जिन्हें अलग बाहर कर दिया है) पर आध्यात्मिक तथा भौतिक वध करता है।

गांधी और किंग दोनो विश्वास करते थे कि प्रजातिवाद या जातबाहर करने की सम्भावना प्रेम के सिद्धान्त के विपरित है। मानव समूह के किसी सदस्य का बहिष्कार करना हिंसा का एक रूप है। प्रेम अपेक्षा करता हे कि हम इस प्रकार का बहिष्कार न करें अपितु दूसरी संस्कृति, समाज तथा जाति समूहों के सदस्यों से अपना सम्बन्ध स्थापित करें।

21 साल जो गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में बिताये उन्होने उन्हें मुल्यवान अर्न्तशक्ति का बोध करवाया तथा जहां उन्होने अमानवीय तथा अत्यन्त विध्वंसक स्थिति के अनुसार अपने को ढाला जो कि वहां हुआ करती थी साथ ही साथ इस स्थिति ने उन्हें उपयुक्त सिद्धान्तों तथा अहिंसात्मक रक्षा की तकनीक के विकास में सहायता दी। अत्यन्त लज्जाकारी एशिया के अध्यादेश को अहिंसात्मक रणनीति के द्वारा परिभाषित करने का उनका निर्णय जिसमें आभावों को सहन करना तथा दुसरों के द्वारा स्थापित गलतियों को अपने ऊपर लेने को तैयार रहना सम्मलित था उनका यह कृत्य प्रत्येक व्यक्ति के प्रति अदम्य प्रेम से प्रेरित थी। एक अतिकुशल कलाकार की तरह उन्होने बुराई के विरूद्ध अहिंसात्मक प्रतिरोध के विभिन्न अस्त्रों को विकसित किया। मानव गरिमा तथा स्वतंत्रता के लिए गांधी के द्वारा शुरू किया गया संघर्ष ने न केवल दक्षिण अफ्रीका तथा भारत पर दीर्धकालिन असर डाला, अपितु इसने मानव मस्तिष्क पर अपनी छाप छोडी तथा समस्त विश्व के स्वतंत्रता सेनानियों तथा मानव अधिकार कार्यकर्ताओं को प्रभावित किया।

मानव अधिकार तथा न्याय के गांधीवादी उपाय, नई रणनीतियों तथा दृष्टिकोणों के अंगों के लिए भी उपयुक्त। होते है जिन्हें गांधी ने जिया था। बहुत से लोग यह समझ नहीं पाये की उनका मतलब क्या है जब उन्होने जोर देकर कहा कि जब तक दुर्भावना है, सत्याग्रह की स्पष्ट जीत असम्भव है। लेकिन जो स्वंय को कमजोर समझते है वह प्रेम के लिए अनउपयुका है। आइये प्रत्येक सुबह हमारा पहला कार्य उस दिवस के लिए यह संकल्प लेने का हो कि में

इस धरती पर किसी से नहीं डरूगां, में केवल ईश्वर से डरूंगा, में धरती पर किसी के प्रति दुर्भावना नहीं रखूंगा। मैं किसी पर भी होने वाले अन्याय से डरूंगा। असत्य पर में सत्य के द्वारा विजय प्राप्त करूंगा तकि असत्य का प्रतिरोध करते हु ये में हर प्रकार के कष्टों को सहज करूंगा (YoungIndia 20. 10.1927)

2.4 गाँधी और मार्क्स

गांधी ने अहिंसात्मक रक्षा के नये युग को आरम्भ किया जो कि प्रत्येक मानव के दुवारा अपने को डर से मुआ करने की क्षमता पर आधारित था। वह विश्वास करते थे कि निडरता एक मुख्य स्तंभ बन जाती है। जिससे प्रेम के साथ, जब भी आवश्यकता हो, प्रतिरोध की क्षमता का निर्माण किया जा सकता है। यह देखना रूचिकर है की गांधी मानते थे की डरपोक व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता क्योंकि उसमें गर्मी तथा ऊर्ज़ा का उतना भंडारण नही है और उसी के द्वारा प्रेम को पाया जा सकता है। उन्होंने कहा "मेरा मकसद दुर्लभ बंधनी में उचारणों तथा यूक्तियो ' दोनों इस रोष को साक्ष्य के रूप में व्यक्त करते है कि कुछ व्यक्तियों का छोटा आ समूह, मेहनतकशों के वृहद समूह की पीठ पर वैभवपूर्ण जीवन को व्यतीत करता है। गांधी और मार्क्स, दोनों प्रत्येक व्यक्ति की

सामाजिक रूप से आवष्यक उत्पादक (लाभकारी) श्रम में भागीदारी की संम्भावना देखते है, जिससे की प्रत्येक को आराम सुनिश्चित किया जा सके जिसके साथ जीवन का आंनद लें तथा अपना विकास करें।

लेकिन फिर भी गांधी तथा मार्क्स की विचारधारा में मुख्य अन्तर है। गांधी के स्वचत - शांति ग्राम गणराज्य में, बिना किसी (भूल) संशय के, "यूग" को पूर्व प्राप्त करने की लालसा है, जो धार्मिक कथनानुसार, भूतकाल में राम के शासन के समय था जोकि एक आदर्शवादी राजा थे और की आधारशिला पर सही था तथा सभी सुखी भी थें। यद्यपि, मार्क्स, अपने (Europeen) समकालीनों की तरह मानव विकास की आवश्यकता पर विश्वास करते है। गांधी का "कर्म" तथा "पुर्न अवतार" को स्वीकार करना मोलिक रूप से एक चक्रिय सिद्धान्त है जो कि मानव विकास के अवधारणाओं में ढिलाई की जटिलताओं के विपरित है।

दूसरा मार्क्स का सर्वाहार की रक्षा (पक्ष), सावधानी पूर्वक सैद्वान्तिक यन्त्र पर निर्मित है जो कि उत्पादन में अधिकतम मूल्य जनित करने पर आधारित है, इसलिए वह जेन्टल दावा करते है कि वह समाजवादी वैज्ञानिक है। गांधी का निर्धन लोगों के प्रति प्रेम, जैसा की प्राचीन, इजराइल के पेगम्बर का था, नैतिक तथा धार्मिक बुनियादें पर आधारित है।

एक का भला तथा सब का भला तथा इमके उलह, जैसा की गांधी ने अपने सर्वोच्च में अग्रेषित किया है वह मानवता के पुर्नवास तथा पुर्नवाचन के भाव में, भारतीय कहावत, वासुदेवा कुतुमबकम में निहित है। यह एश्किन के Unto this Last में भी ध्वानान्त्रित होता है। जहां से गांधी ने सर्वोदय की मानवतावादी आत्मा को दिया है :-

1. व्यक्ति का भला, सब के भले में है।

2. अधिवक्ता के कार्य का वही मूल्य है जो कि लकड़हारे के कार्य का क्योंकि सभी को कार्य के द्वारा जीविकापार्जन करने का अधिकार है।
3. मजदूर का जीवन, जो कि खेत जोतने वाले तथा हथकर्धा कलाकार का जीवन है, जीवन योग्य है।

गांधी ने व्यक्ति तथा सामूहिक उपायों, दोनों को प्रदर्शित किया, लोगों साम्राज्यवाद से मुक्ति दिलाने के लिए आत्म बल को हिंसा के भिवत्स बल के विरूद्ध जोर देते हुये। सत्य तथा असत्य, में व्यक्ति की अच्छाई तथा बुराई में, समूहों, समुदायों और राष्ट्रों में शाश्वत युद्ध, गांधी की जीवन प्रयन्त संघर्ष का सबब है। स्वतन्त्रता गांधी के लिए सतत् प्रकिया है न की अन्तिम (ग्रास) प्राप्ति। आदमी उनके लिए अन्त नहीं बल्कि माध्यम है स्वतंन्त्रता का तथा स्वतन्त्र शासन का उनके स्वराज का सिद्धान्त, मात्र राजनैतिक स्वतन्त्रता से कही आगे जाता है।

साम्राज्य वादी शासन से मुक्त। होने के अपने संघर्ष में, गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में दबे कटे तथा डरे हुये मजदूरों तथा भारत में सामान्य जनता के गठबंधन को समान कारणों के लिए गति दी, यह स्वराज था, जिसका अर्थ हैं " अधिकारिता पर कब्जा कुछ के द्वारा नहीं बल्कि बहुतों में क्षमता पर कब्जा जिससे अधिकारिता को, जब दुरूपयोग हो, विनियमित किया जा सके' ' इस तरह से गांधी लोकतन्त्र के सजग जीते जागते उदाहरण थे। वह किसी और से, चाहे वह अब हो या तब हो, ज्यादा जानते थे, कि राजनैतिक लोकतन्त्र, आर्थिक तथा सामाजिक लोकतन्त्र से अविभाजिज्य है। इसलिए उन्होंने तार्किक उद्देश्यों को अपने आचरण में सम्मिलित किया-- लोगों को मुख तथा बेरोजगारी से मुक्त कराने का संघर्ष, और जाति तथा धर्म की अराजकता से मुक्ति।, जिसने दंबगो तथा दबे कुचलों में एक सा बंधन कायम किया। उन्होंने उस तकनीक के विरूद्ध विद्रोह किया जो 'मनुष्य को दास तथा असहाय यांत्रिक मानव बना देती है। उन्होंने अस्पृश्यता के विरूद्ध धर्मयुद्ध किया क्योंकि यह उस बिमारी (कैन्सर) को पालती पोसती है जो भारत की सामाजिक जीवन को खा जाता है। करांची कांग्रेस से भी पहले, गांधी ने (Young India 01-05-30) तरूण भारत में लिखा था "मेरे सपने का स्वराज किसी जाति या धार्मिक विभेद को

मान्यता नहीं देता। न ही यह गणमान्य व्यक्तियों या पुंजीपतियों का एकाधिकार है। स्वराज सब के लिए है, जिसमें किसान भी सम्मिलित है, लेकिन खासतोर पर मन्दबुद्धि, अन्धे, तथा भुखे, मेहनतकश करोडों लोग सम्मलित है"। इस कथन के बाद एक बलशाली कथन और आधा "मेरे सपने का स्वराज, निर्धन व्यक्ति का स्वराज है, आपके द्वारा जीवन की आवश्यकताओं का आन्नद उसी प्रकार से लिया जाना चाहिये जिस प्रकार से राजकुमारों तथा पूंजीपतियों द्वारा लिया जाता है, लेकिन आपको वह सब सामान्य सुविधाये मिलनी चाहिये जिनका आनन्द एक अमीर आदमी लेता है। मुझे इसमे तनिक भी संदेह नहीं है की स्वराज तब तक पूर्ण स्वराज नही होगा जब तक इन सुविधाओं की आपको प्रत्याभूति इसके अन्दर नही की जायेगी (Young India 26-03 -31)

कुछ दिनों पश्चात उन्होंने 'पूर्ण स्वराज्य या पूर्ण स्वतन्त्रता' की अवधारणा को और स्पष्ट किया "पूर्ण स्वराज-पूर्ण क्योंकि यह जितना राजकुमार के लिए है उतना ही किसान के

लिए हैं, जितना यह अमीर भुमिपति के लिए है उतना ही भुमिहीन हल जोतने वालों के लिए है हिन्दुओं लिए भी उतना ही! है जितना मुसलमानों के लिए, पारसियों और ईसाईयों के लिए भी उतना है जितना जैनियों के लिए है, यहुदियों और सिक्खों के लिए है, बिना किसी जाति स्तरीय भेदभाव के"

यह शब्दों का उदबोधन तथा अर्थ जिसकी प्राप्ति के लिए हमने संकल्प लिया है- सत्य और अंहिसा, उन सब सम्भावनाओं को समाप्त करती है जिसमें स्वराज, दुसरों से ज्यादा किसी एक के लिए हो, किसी के पक्ष में ही था किसी के विरूद्ध हो (Young India 27-03 -31)

मानवता और मानवाधिकारों के विरूद्ध और कोई बड़ा अपराध नही है सिवाय की नागरिकों के साथ किसी भी कारण से अमानवीय व्यवहार किया जावें। सच्चाई से इन्कार करना अपने आप में उस।, चीज का उल्लघंन है जो कि ब्रहम्माणियों के जीवन के अंश तथा आईने को निर्मित करती है। वह यह दोहराते हुये कभी नही रूके की "अगर गांव समाप्त होगें तो भारत समाप्त हो जायेगा"। गांधी के दर्शन में लोकतन्त्र के तीन स्तम्भ ग्रामीणों के जीवन की मुक्ति। की सेवा के लिये थे।

उन्होंने कल्पना की थी -भली प्रकार से चोटिल, लेकिन ढंग से निर्मित ग्रामीणों लिए मकानों की, जो की क्षेत्रिये संसाधनों के पूर्ण उपयोग तथा सहयोगिक प्रयासों से निर्मित हों। उनके अनुसार। ग्रामीणों के पास साफ सुथरी सड़के तथा बाजार, स्वच्छ पेयजल तथा उच्च स्तर के स्वच्छता के संसाधन चाहीये। वहां ग्रामीण विद्यालय जो कि हथकर्धा तथा -वनस्पतियों के बाग, मुर्गीखानों और बागवानी पर आधारित हो होना चाहिये। उन्होंने कृषि तथा ग्रामीण उद्योगों पर खास जोर दिया जिससे की भोजन, वस्त्रों तथा आवास तथा प्रत्येक सक्षम व्यक्ति को रोजगार की आवश्यकता की पूर्ति की जा सकें। ग्रामीण समुदाओं की अपनी तस्वीर में। वह देखते थे की वहां कोई सामाजिक तथा धार्मिक बन्धन न हो और समुदाय का प्रत्येक सदस्य सम्पूर्ण का आन्नद ले तथा विकास एवं आगे बढ़ने के समान अवसरों का प्रयोग करें यहां कमजोर अल्पसंख्यकों का रखने की विशेष आवश्यकता है।

ओरतों को सामाजिक तथा आर्थिक निर्बलताओं से छुटकारा दिलाना है और ''सम्पत्ति के भण्डारण का कोई स्थान नहीं बचना चाहियें।"

गांधीजी के लोकतन्त्र की अवधारणा में कर्तव्य अधिकारों से पहले आता है। उनके'।। अनुसार अधिकार तब आते है। जब कर्तव्यों का सही से पुरा कर दिया जावे। उनके अनुसार प्रत्यके व्यक्ति को य के न्यासी के रूप में कार्य करना चाहिये। और अपने अतःकरण के लिए जवाबदेह होना चाहिये है और यही आचरण उसे अपने कर्त्तव्यों के प्रति अपनाना चाहिये जो कि उसके चारों और है चाहे वह राजनैतिक मामले हो आर्थिक या समुदाय के सामाजिक अधिकार हो। गांधीजी जानते थे कि की हिंसा और अधिक हिंसा को जगाती है और इसलिए यह एक गलत उपचार है।

2.5 सार्वभौमिक घोषणा पर गांधी का प्रभाव

यह गाँधी जी के लेख सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषण के प्रभाव को हम देख सकते है। इनके अनुच्छेद 30 में मानवाधिकार सार्वभौमिक घोषणा उन अधिकारों की स्पष्ट करती है। जिनके समस्त सिद्धान्त मनुष्यों तथा राष्ट्रों के लिए उद्देश्यपरक है।

प्रथम तीन अनुच्छेद अभिव्यक्त करते है कि समस्त मानव के स्वावलम्बन उत्पन्न होता है तथा समान सम्मान और अधिकार है जो सचेतता कारण सहित प्रदान करती है, प्रत्येक को एक दूसरे के साथ भातृत्व के साथ रहना चाहिए और बिना किसी भेदभाव के स्वतन्त्रता का अधिकार है। प्रत्येक व्यक्ति को जीवन स्वतन्त्रता से जीवन और सुरक्षा का अधिकार है।

अनुच्छेद 4 से 21 किसी नागरिक तथा राजनीतिक अधिकार को निमित करते है। दासता से अमानवीय, निम्न स्तरीय व्यवहार या सजा, एक व्यक्ति को व्यवहार मान्यता को अधिकार, कानून तथा अधिकारों के हनन के लिए समान सुरक्षा स्वतन्त्रता गिरफ्तारी अनुरोध या जेल, स्वतन्त्रता न्यायी अदालत के समक्ष स्वच्छ सुनवाई तथा तर्क करने का अधिकार जब तक अपराध संलग्न है। अनेक नागरिक अधिकार जिनमें प्राइवेटी स्वन्त्रता परिवार या जनाधार की आजादी, धूमने तथा निवास की आजादी।

अनुच्छेद 22 सूचित करता है एक दूसरे अनुच्छेद के समूह को जो विभिन्न आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक अधिकार जो कि प्रत्येक के गुण, उसकी समाज में सदस्यता (भागीदारी) ये अधिकार यद्यपि इनडिसेबल मानवीय गौरव के लिए तथा स्वतन्त्र व्यक्ति बड़ा विकास, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए सीमित प्रयास किसी भी संस्था तथा प्रत्येक राज्य के उपादान। अधिकार अनुच्छेद 22 से 27 सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्ध है, कार्य करना, तथागत तथा समान परिस्थितियों में; समान वेतन, समान कार्य के लिए, आराम तथा वैभव, जीवन का उच्च स्तर स्वास्थ्य तथा श्रेष्ठता से रहना; शिक्षा का अधिकार, स्पष्ट परिस्थितियाँ तथा सामुदायिक सांस्कृतिक जीवन में भागीदारी। अनुच्छेद (28 से 30) प्रोक्लेम करते है कि प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिकता तथा अन्तर्राष्ट्रीय आदेश जिसमें पूर्णतया घोषित की गयी है। अधिकार तथा स्वतन्त्रता को अत. प्रत्येक का समाज के प्रति दायित्व है, इन अधिकारों तथा आजादी। तथा अन्य के अधिकारों का आदर सम्मान तथा जनता की मांगों के अनुरूप मिलना तथा आम लोकतान्त्रिक समाज की भलाई किसी भी राज्य समूह या व्यक्ति को इरा अधिकार की घोषणा के हनन करने का अधिकार नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने 50वीं मानवाधिकार सार्वभौमिक घोषणा 1988 में विश्व स्तर पर लोगों को सन्देश दिया। जिसके कुछ मुख्य चिन्ह इस प्रकार है-

- मानवाधिकारो को विश्वव्यापी बनाना।
- मानवाधिकारों की अवहेलनाओं को रोकना।
- मानवाधिकार के लिए वैश्विक भागीदारी निर्माण करना।
- मानवाधिकार को शांति, प्रजातन्त्र तथा विकास के साथ 21वीं शताब्दी का प्रेरक सिद्धान्त बनाना।

1. सभी व्यक्तियों में गौरव का सम्मान को मुख्य लक्ष्य मानना

   सभी मनुष्यों को समान सार्वभौमिक अधिकार है :- आजादी, समानता। संवेदी समूह के मूलभूत अधिकार बच्चे' अलपसंख्यक. स्थानीय लोग, शरणार्थी, विस्थापित लोग. अपाहिज व्यक्ति तथा प्रवासी श्रमिको के मूलभूत अधिकार है।

2. **मानवाधिकार** :- मानवता की समानता की परिभाषा

   मानवाधिकारो के सम्बन्ध सार्वभौमिक संस्कृति का निर्माण एवं लोगो का सशक्तिकरण करना। सभी लोगो के लिए मानवाधिकार सम्बन्धी शिक्षा। वैश्विक स्तर पर मानवाधिकार की रक्षा हेतु सहभागिता का विकास करना।

3. **महिलाओं के अधिकार को सभी की जिम्मेदारी मानना**

   महिलाओं के अधिकार का मानवाधिकार मानते हुए महिलाओ के प्रति सभी प्रकार की 'ओ का विरोध करना। विकास में महिलाओं की सम्पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना। लैंगिक समानता को। देना तथा महिलाओ के अधिकारो को बढाने के लिए सभी संगठनों तथा आधारभूत प्रयासों को मदद देना।

4. **मानवाधिकार, लोकतन्त्र और विकास**

   भविष्य के लिए मार्गदर्शक चिन्ह मनुष्य विकास का केन्द्रीय निकाय है। गरीबी का उन्मूलन लोकतांत्रिक संस्था और कानून का शासन, बहुसंस्कृतिवादी समाज का विकास एवं सभी की सहभागिता को सुनिश्चित करना।

5. **नागरिक समाज- मानवाधिकार का प्रेरणा स्त्रोत**

   मानवाधिकार को बढावा देना सभी व्यक्तियों एवं समूहों का दायित्व है गैर सरकारी '' को मानवाधिकारों की रक्षा में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित करना। सभी स्तर पर की रक्षा हेतु सक्रिय गतिविधियों को बढावा देना तथा मानवाधिकार की रक्षा हेतु 'मानवाधिकार रक्षक' करना।

6. **मानवाधिकार की उपलब्धियाँ तथा चुनौतियाँ**

   उपनिवेशवाद तथा रंगभेद का अन्त, मानवाधिकार से सम्बधित राष्ट्रीय क्षमताओं को सुदृढ़ बनाना। मानवाधिकार उल्लंघन को रोकना, सभी प्रकार के जातीय भेद-भावों तथा वर्गभय को दूर करने का प्रयास करना तथा सार्वभौमिक स्तर पर मानवाधिकार से सम्बद्ध दस्तावेजों को निर्मित करना।

7. **संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानवाधिकारों की क्रियान्विति में योगदान**

   मानवाधिकार तकनीकी के निर्माण एवं क्रियान्विति हेतु सहयोग एवं परामर्श सेवाएं, मानवाधिकार वांछित तथा हिंसा पीड़ितों को मदद देना।

2.8 निष्कर्ष

गांधी ने सभी के प्रति गौरव और सम्मान प्रदान करने की शिक्षा दी। गांधी व पीड़ितों की आवाज बनकर उभरे एवं सम्पूर्ण विश्व में उन्होंने समाज सुधारको, राजनीतिक विचारकों तथा आजादी के लिए संघर्ष करने वालों को प्रेरित किया।

थोरो तथा इमरसन की विचारधारा उन प्रसिद्ध विचारधाराओ में से है जिन्होंने गांधी को प्रभावित किया। मार्टिन लूथर किंग तथा खान अब्दुल गफार खान से लेकर जूलियस नेचेरे हो चीमीन बिशप, डसमण्ड टूटू पेट्रो केलि तथा नेल्सन मण्डेला ऐसे अनेक पुरूष तथा महिलाए सम्पूर्ण विश्व में है जिन्होंने अपने प्रयासों को आकार देने, न्याय सुनिश्चित करने तथा रंग एवं जाति के आधारभूत भेदभाव से लड़ने के लिए गाँधी से प्रेरणा ली तथा गाँधीवादी सिद्धान्तों एव साधनों को साथ लेकर मानवाधिकारों के हनन के विरूद्ध संघर्ष को एक नयी दिशा प्रदान की। हिंसात्मक तरीको को त्यागकर इन महान नायकों ने गांधी के समान अहिंसात्मक तरीको से आन्दोलन चलाकर मानवाधिकारों के समान अनेक सकारात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति की राह दिखाया।

अन्त में कहा जा सकता है कि महात्मा गाँधी ने मानव इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा जो मानवता के महत्व को विश्व स्तर पर स्थापित करने के लिए उपयोगी है। गांधी जी के अनुसार मानवाधिकार तथा प्राकृतिक

न्याय में कोई विरोधाभास नहीं है। उनका जीवन तथा कार्य मानवाधिकारों के लिए किया गया संघर्ष माना जा सकता है। उन्होंने इसे भयानक रंग भेद से पीड़ित असहाय लोगों को सत्याग्रह के आधारअपने हितों के लिए संघर्ष करना सिखाया। विश्वभर में लाखों संख्या में आजादी समर्थकों के वे प्रेरक स्त्रोत बने।

गांधी जी ने अपने संदेश में साहस दिखाते हुए अन्यायपूर्ण व्यवस्थाओं का विरोध करने का पैगाम दिया। उन्होंने सत्य, अहिंसा, तथा सत्याग्रह पर बल देते हुए स्पष्ट किया कि सामाजिक न्याय तथा समान अधिकारों के लिए किए जाने वाले संघर्ष में व्यक्तियों का हथियार कोई बाहरी हथियार नहीं है अपितु उसका आत्मबल है जिसके द्वारा ऐसी ताकतों से लड़ा जा सकता है जो अपने साथी लोगों को एक सम्मान पूर्ण जीवन जीने के अधिकारों से वंचित करते है।

2.7 अभ्यास प्रश्न

1. मानवाधिकार के संदर्भ में गांधी के विचारों को स्पष्ट कीजिए।
2. सार्वभौमिक घोषणा पर गांधी के प्रभाव का वर्णन कीजिए।
3. मानवाधिकार के संदर्भ में मार्टिन लूथर किंग एवं गांधी के विचारों की समानता का विश्लेषण कीजिए।

2.8 संदर्भ गन्थ

1. दाधिच नरेश,ट्वर्ड ए मोर पीसफुल जयपुर आलेख, 2004
2. उम्मन, टी.के. प्रोटेस्ट एण्ड चेंज : स्टडीज इन सोशल मूवमेंट्स, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1990
3. कुमार बी. अरूण, गांधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008
4. बरोज, राबॅट्र जे., द स्ट्रेटजी ऑफ नॉन वायलेन्ट डिफेन्स अ गांधियन अप्रोच, स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ एन वाय प्रेस, अल्बानी, 1996

5. एडमण्ड, टी., किंग (जुनियर), मार्टिन लुथर, 'द ब्लैक अमेरिकन्स प्रोटेस्ट मुवमेंट इन द. यू. एस. ए. न्यू हाईट्स, नई दिल्ली, 1976
6. किंग (जुनियर), मार्टिन लुथर, -स्ट्राइड टूवार्ड्स फ्रीडम द मोंटगोमरी स्टोरी, हार्पर एण्ड रो, न्यूयार्क 1958

इकाई - 3
अहिंसात्मक संघर्ष निवारण

इकाई की रूपरेखा :

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 अहिंसा

3.3 गाँधी की अहिंसा का उद्भव, क्रमिक विकास एवं प्रभाव

3.4 गीता, रामायण एवं महाभारत का प्रभाव

3.5 अहिंसा के सूत्र

3.6 वर्तमान सन्दर्भ में गाँधीयन अहिंसा की प्राथमिकता

3.7 निष्कर्ष

3.8 स्मरणीय बिन्दु

3.9 अभ्यास प्रश्न

3.10 संदर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है

- अहिंसा की पारिभाषिक शब्दावली की पर्याप्त समझ।
- गाँधी को अहिंसा के स्रोतों की जानकारी।
- अहिंसा के महत्व एवं पारसंगिकता को जानना।

3.1 प्रस्तावना

एक बार एमर्सन ने कहा, "सभ्यता की सही जाँच, जनगणना नहीं होती, ही नगरों का आकार या लम्बाई-चौड़ाई होती है, न फसलें होती हैं, बल्कि सभ्यता का पैमाना तो वे मनुष्य हैं जो कि कोई देश उत्पन्न करता है।"

हम सब जानते हैं कि आधुनिक दुनियाँ में आधुनिक पश्चिमी सभ्यता ने जीवन पर अपना यथावत व्यापक प्रभाव खो दिया है। गाँधी की सभ्यता को समझने की दृष्टि नैतिक थी क्योंकि उन्होंने विश्व एवं इतिहास के आध्यात्मिक स्पष्टीकरण को स्वीकार किया था। उनके अनुसार, "सभ्यता की एक पद्धति है जो मनुष्यों को कर्त्तव्य के मार्ग का संकेत देती है। "

आज का सम्पूर्ण परिदृश्य सम्पूर्ण मानवजीवन को एक उथल-पुथल की में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और यही तक की सांस्कृतिक मनुष्य जीवन को प्रस्तुत करता है और ऐसा है कि आज के सन्दर्भों में मनुष्य का सांस्कृतिक जीवन एक गम्भीर संकट से गुजर रहा है। आज की में पूरी तरह विस्फोटक प्राणघातक चिन्ह, पृथ्वी के सम्पूर्ण नक्शे पर बिखरे दिखाई देते हैं। इस प्रकार मनुष्य ने स्वयं अपने को अमानवीय बना लिया है और वह अवर्णनीय रूप में स्वयं के प्रति क्रूर हो गया है।

आज लोग पूर्ण विस्तार, अव्यवस्था, हिंसा और युद्ध में परिवर्तित होते उपद्रवों को महसूस करते हैं। जीवन के मूल्य दैनिक जीवन के पक्षों से असम्यृक्त होते जा रहे हैं और हम एक ऐसी दुनियाँ में जी रहे हैं जहाँ एक ओर, विशाल और तकनीकि में जैसा कि परिलक्षित है अन्तरिक्ष यात्रा से परमाणु ऊर्जा, संचार आदि क्षेत्रों में हम प्रगति की ओर बढ़ रहे हैं और दूसरी ओर मनुष्य का मस्तिष्क उपकरण, मनोवैज्ञानिक रूप में बढ़ने, खिलने, अपने को समसामयिक शोध के तरीकों से मुक्त करने, महसूस करने और अपने संगी-साथी मनुष्यों से सरल व्यवहार करने में पूर्णत: असफल हो रहा है।

आज, विज्ञान द्वारा प्रदत्त अपने ज्ञान से शान्ति और प्रगति का मार्ग खोजने के बजाय, मनुष्य अपने विनाश के साधन विकसित कर रहा है। अणु की विनाशकारी शक्ति, दूर तक मारक मिसायलों की उड़ाने और प्लेनेट को जीतने की होड़, मानवजाति की सुरक्षा के लिए खतरे की घंटी बन गये हैं। इन सबके अलावा, बढ़ता स्वार्थ झूठा दिखावा या ढकोसला और शैतान की पूजा (धन को एक भगवान या बुरा प्रभाव डालने वाला माना गया है) किंकर्तव्य विमूढ़ बनाने वाली कठोर वास्तविकता है। हम इस खतरे से केवल अहिंसा के सिद्धान्त का अनुसरण करके ही, लड़ सकते हैं - अहिंसा जो कि गाँधीजी का सर्वाधिक प्रिय शब्द था। उनके अनुसार प्रेम, त्याग और सत्य के धर्मसंगत मार्ग पर चलकर ही मानवजाति को पूर्णत: विनाश से बचाया जा सकता है और मनुष्य केवल इस विश्वास के माध्यम से अपने चरित्र को ऊँचाईयों तक ले जा सकता है और इस दुनियाँ के नरक को स्वर्ग में बदल सकता है। वास्तविक तथ्य यह है कि अहिंसा का व्यावहारिक तौर पर हर देश में उपदेश दिया जाता है एवं अभ्यास किया जाता है और हर जगह लोग ऐसा करते हैं। यह कई विचारकों एवं धर्मों के प्रवर्तकों ने सिखाया है कि हिंसा को हिंसा या बुराई से नहीं जीत सकते हैं। यह आश्चर्यजनक है कि महात्मा गाँधी एक ऐसे मनुष्य थे, जिन्होंने प्रेम और अहिंसा के संदेश का प्रसार करने की खातिर अपना जीवन दिया।

3.2 अहिंसा

अहिंसा को हिंसा के इस्तेमाल से बचने के एक सिद्धान्त के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, विशेषकर विरोध करने के साधन के तौर पर, हिंसा का न होना या हिंसा से मुक्त होना। फिर भी, अहिंसा को परिभाषित करना आसान नहीं है क्योंकि इसकी परिभाषा नये आयामों के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर बदल जाती है और इससे कई प्रकार के प्रश्न भी उत्पन्न होते हैं। क्या यह एक नया शब्द है जिसमें बहुत पुरानी स्थापित स्थितियों का अभ्यास शामिल है? क्या अहिंसक व्यक्ति होने का अर्थ अहिंसक है? क्या अहिंसा में दबाव होता है, एक स्थापित व्यवस्था की तैयार स्वीकृति ? आखिर सीमा क्या हे, यदि कोई सीमा है तो क्या शारीरिक शान्ति के उपयोग को छोड़ देना अहिंसा है? अहिंसा के तौर-तरीके या पद्धतियाँ क्या हैं? क्या वे प्रभावकारी हैं? क्या ऐसी स्थिति में अहिंसक बने रहना सम्भव है जबकि किसी एग्नोस्टिक प्रवृति अपनी गलती स्वीकार न करने की स्थिति को समर्थन देना पड़े। ये सब प्रश्न दर्शाते हैं कि अहिंसा के दर्शन एवं इससे सम्बन्धित विषयों के बारे में साधारणत: कुछ कहना

सरल नहीं है जैसे कि अवज्ञा, पोसेफिज्म को शान्त करने की कोशिश, अहिंसा का सीधा कार्य, अहिंसा की लोकप्रिय सुरक्षा, आदि।

आज शान्ति पर शोध इस एक मत पर पहुँच गई है कि शान्ति का विलोम, युद्ध नहीं, बल्कि हिंसा होता है। इसी के अनुसार हिंसा का विलोम अहिंसा है, जो शान्ति की पहचान के लिए उपयोग में लाया जाता है। एक उपविषय से अधिक, यह एक ही विषय की भिन्न तरीके से देखने का एक रास्ता सिद्ध हो सकता है। यह निष्कर्ष सहज ज्ञान की दृष्टि से सन्तोषजनक लगता है और यह सुझाता है कि अहिंसा के अध्ययन में शान्ति के अध्ययन का भी बहुत कुछ लेना-देना है।

दुर्भाग्यवश, अहिंसा का व्यवस्थित प्रणाली से अध्ययन और इसका एक सामाजिक मैकेनिज्म के रूप में विकास काफी हाल ही का है क्योंकि इस शब्द का इस्तेमाल (और इस विषय के पीछे थे पीछे के अर्थ को समझने) में विरोधाभास रहा है। वर्णात्मक स्तर पर, अहिंसा और हिंसा कहे बीच का भेद कोई समस्या नहीं है और अप्रकाशित है. अहिंसा, हिंसा की अनुपस्थिति है। फिर भी, युद्ध की अनुपस्थिति, पहली समस्या यह खड़ी होती है क्योंकि सब प्रकार की हिंसा भौतिक नहीं होती। अधिकांश (लेकिन सब नहीं) सिद्धान्तवादी, आजकल एक गाली देने वाले शब्द का विचार करेंगे या ऐसा संकेत देंगे जिसके साथ धक्का-मुक्की न जुड़ी हो जो कि वे अहिंसा के अर्थ के रूप में बताना चाहते हैं। दूसरी ओर, कुछ लोग किसी के द्वारा की गई थक्का-मुक्की बिना किसी प्रकार घृणा या डर के की गई हो तो कुछ लोग इसे अहिंसा मान सकते हैं।

गाँधी के शब्दों में अहिंसा वास्तव में, लोगों की कल्पना में जो अहिंसा है, उससे भिन्न है। गाँधी की अहिंसा के बारे में इतनी गलतफहमी है कि इसे बहुधा कायरता के समान मान लिया है।

3.3 गाँधी की अहिंसा का उद्भव : क्रमिक विकास एवं प्रभाव

हम सब जानते हैं कि अहिंसा और सत्य विचार की मुख्यधारा के दो मौलिक जुड़वां सिद्धान्त है। उनकी यह दृढ़ मान्यता थी कि हिंसा की ओर मनुष्य की प्रवृति एक शक्तिशाली भाव है। यह पशुवत पुरखों के क्रमिक विकास का अवशेष है। घृणा से पूरी तरह रहित आध्यात्मिक अहिंसा, पूर्णत: विकसित मानव की पराकाष्ठा है। यद्यपि उनके कई विरोधी हैं लेकिन उन्हें यह आशा थी कि अन्त में अहिंसा की जीत होगी। अहिंसक संघर्ष, राजनीतिक एवं सामाजिक बदलाव का एक शान्तिपूर्ण साधन था। यह लोकतांत्रिक है, क्योंकि लोकतंत्र का सार यह है कि हिंसा छोड़ दी जाये और उगेरणा पद्धति को अपनाया जाये। गाँधीजी के अनुसार, प्रेम एवं प्रेरणा, न कि घृणा, बदलाव लाने के साधन होने चाहिए। उन्होंने इस बात को दृढ़ता के साथ नस्लवादी एवं राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिए अहिंसा ही एकमात्र साधन उपलब्ध है।

गाँधी का विश्वास था कि अहिंसक कार्य अपने विरोधी को दण्ड देने या उसे पहुँचाने का प्रयास नहीं करता। यही तक की उसके साथ असहयोग करते समय हमें उसे यह अनुभव चाहिए

कि हमारे लिए वह मित्र हैं और हमें मानवीय सेवा के माध्यम से उसके हृदय को छूने का प्रयास करना चाहिए।

गाँधी के लिए यथार्थ में त्याग का अर्थ था, जो त्याग किसी को दर्द पहुँचता है, वह कभी त्याग नही होता। सच्चा त्याग सुख पहुँचाने वाला और श्रेष्ठ बनाने वाला होता है।8 इसी प्रकार को भी वे सुनहरा विषय मानते थे।।

वास्तव में, अहिंसा को सबसे बड़ा गुण माना गया है। भारतीय नैतिक एवं गुरूओं ने इसको एक सर्वश्रेष्ठ गुण के रूप में मानने का उपदेश दिया है। जैन, बौद्ध एवं हिन्दू परम्परा में अहिंसा को कर्म के रूप में अपनाने के सैद्धान्तिक आधार प्रतिपादित किये हैं। समस्त मनुष्यों एवं प्राणियों के अहिंसा एवं मैत्रीभाव की वैश्विक दृष्टि की शिक्षा का उल्लेख 'इसोपानेशद्', 'गीता', 'पुराणों', 'योग सूत्रों' में निहित है जिसने गाँधी को प्रभावित किया। उन्होंने बचपन से माँ पुतलीबाई से बचपन में ही किसी से घृणा न करने की सीख ली। अपने पड़ोसियों से भारतीय सूत्र कि सत्य से बढ़कर कुछ नहीं और 'अहिंसा ही सबसे बड़ा गुण है' (अहिंसा परमोधर्म) सीखे।

उन्होंने पुराणों में पढ़ा कि मित्र और शत्रु में भेद नहीं क्योंकि वे दोनों परमात्मा के अंग हैं और ईश्वर सबमें मौजूद है इसलिए समस्त प्राणियों के प्रति निःस्वार्थ प्रेम और सेवाभाव रखें। जैन एवं बौद्ध धर्मों से भी उन्होंने यही सन्देश ग्रहण किया।

दरअसल, गाँधी के लिए अहिंसा से अभिप्राय था - समस्त संरचना के प्रति प्रेम और सेवा। अर्थात् पूर्ण निःस्वार्थ भाव एवं सेवा को समर्पित भावना से विश्व के साथ तादात्मय एवं समभाव स्थापित करना अहिंसा, यथार्थ में हमारे देश की सांस्कृतिक विरासत है।

भारतीय सांस्कृतिक विरासत के अतिरिक्त, गाँधीजी, सुकरात, ईसामसीह और आधुनिक युग के महापुरूषों गल्सटॉय, शस्किन, कार्लाइल, हेनरी डोवडे थोरो आदि से प्रभावित हुए थे। वे एडविन आर्नोल्ड के भी ऋणी थे जिनके 'दी लाईट ऑफ एशिया' जिसने उन्हें भगवान बुद्ध के जीवन का स्पर्श दिया। गीता के अंग्रेजी अनुवादक उन्हें गीता का ज्ञान सौंपा। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में कई अच्छे इसाईयों के सम्पर्क में इसाई धर्म को समझा। रॉल्सटॉय की पुस्तक - 'दी किंगडम ऑफ गॉड विदिन यू इसाई धर्म को मनुष्य के वेदान्तिक विचार के करीब लाने वाली सिद्ध हुई। थोरो के 'सिविल डिस्ऑबिडियन्स ने गाँधी के सत्याग्रह के सिद्धान्त एवं क्रियान्वयन को प्रभावित किया। इस्लाम का अर्थ शान्ति, सुरक्षा एवं मुक्ति और सलायालेकम् अर्थात् 'आपको शान्ति-सुरक्षा' जैसे विचारों एवं कुरान के इस सिद्धान्त ने कि हिंसा की जगह अहिंसा को प्राथमिकता दो, ने उन्हें प्रभावित किया। गाँधी की अहिंसा इस प्रकार किसी धर्म, जाति या देश की अहिंसा नहीं है बल्कि यह समस्त मानवजाति की विरासत है। चीन के तीन धर्म सम्प्रदायों - कन्फूसियनिज्म ताओजिम एवं बुद्धिज्म में उन्होंने अहिंसा के तत्व पाये। जुडो जी में भी यही भाव निहित हैं।

गाँधी ने अहिंसा की धारणा की खोज नहीं की बल्कि सदियों की अहिंसा के दर्शन की विरासत को नया आधार दिया। वे इस प्रकार बताते हैं कि "अहिंसा एक विश्वव्यापी कानून है जो हर स्थिति में अनुकूल है।" इसके अलावा गाँधी का सत्याग्रह भी अहिंसा से अलग नहीं किया जा सकता। दुनियाँ से भी धर्मों में जैन धर्म ने अहिंसा पर सर्वाधिक बल दिया है। इसके पाँच

प्रमुख गुणों में अहिंसा, सत्य, असत्य, पुरूष वर्ग एवं अपरिग्रह शामिल हैं। इनमें मस्तिष्क की शुद्धता के लिए अहिंसा पर विशेष ध्यान दिया गया है। गाँधी, जैन धर्म के सम्पूर्ण अहिंसा के प्रभाव में बड़े हुए वे जैनियों के अन्तिम तीर्थाकर महावीर स्वामी को अहिंसा के अवतार मानते थे।

3.4 गीता, रामायण एवं महाभारत का प्रभाव

गाँधी के अहिंसा के दर्शन को पुष्ट करने में गीता, रामायण एवं महाभारत जैसे ग्रन्थों के अध्ययन ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। एक उर्दू की कहावत है कि 'आदम गॉड नहीं है, लेकिन वह उस ईश्वरीय शक्ति की चमक या 'स्पार्क' है। इसी तरह कृष्ण को एक सम्पूर्ण अवतार माना जाता है और जो धर्म का पालन करने वाले में उस ईश्वरीय शक्ति की चमक व्याप्त होती है। गीता ने वास्तव में गीता के मस्तिष्क में एक आदर्श मनुष्य की तस्वीर प्रस्तुत की। उन्होंने माना कि आदर्श व्यक्ति है जो कर्मयोगी है अर्थात् जो सुख और दुख, अच्छे और बुरे, सफल और असफल जैसे परस्पर विरोधी शब्दों से अपमानित है। गाँधी अहिंसा के सिद्धान्त के आदर्श पुरूष थे। वे मानते थे कि बिना विराग के मनुष्य सत्य एवं अहिंसा के मार्ग का अनुसारण नहीं कर सकता। वह विनम्र, दयालु. दुख-सुख के भारों से मुक्त, डर और घृणा, सम्मान और लज्जा तथा अच्छे और बुरे परिणामों से सम्बन्ध नहीं रखता।

सर एडविन ऑर्नोल्ड द्वारा अनुवादित गीता के द्वितीय अध्याय ने गाँधी के मस्तिष्क पर सर्वाधिक प्रभाव डाला। सत्य की खोज में गीता उनकी मार्गदर्शक एवं रोजमर्रा के जीवन का सन्दर्भ ग्रन्थ बन गई। अपने सब कष्टों एवं समस्याओं का निदान वे इस आचरण के शब्दकोष में ढूँढते थे।

तथ्य यह है कि, गाँधी ने गीता की मौलिक शिक्षा के अनुरूप अपने जीवन को ढाला। गीता में कहा गया है, "केवल वह व्यक्ति सन्त कहा जा सकता है, केवल वह विद्वान कहलाता है जो दूसरों को अपने भीतर देखता है और अपने को दूसरों के भीतर पाता है।" जो सुख-दुख को समान समझे वही कर्मयोगी है। जैसा कि गीता में कहा गया है। गीता की सीख मानकर वे मानते थे कि अच्छे कर्म त्याग की भावना के साथ किये जाने चाहिए। विशेषकर दरिद्र नारायण (अर्थात् गरीबों और पिछड़ों के भगवान) की सेवा के कार्य।

गाँधी की अहिंसा के बारे में इतनी अधिक गलत धारणा है कि बहुधा इसे कायरता के समान बताया जाता है, यद्यपि गाँधी ने कहा था : "जहाँ कहीं कायरता एवं अहिंसा के बीच एक को चुनना हो तो, मैं हिंसा की राय दूँगा।" उनके अनुसार अहिंसा और कायरता का एक दूसरे से कोई नाता नहीं ई। दूसरी ओर, "अहिंसा वीरों का गुण है और हिंसा की अन्तिम सीमा।" वास्तव में, हमें सही और झूठी अहिंसा की पहचान होनी चाहिए।

शाब्दिक तौर पर, अहिंसा का अर्थ है किसी को चोट न पहुँचाना या न मारना। यह उपनिषद्, बौद्ध एवं जैन तथा हिन्दू धर्मों का मत है। जैन धर्म तो चोट न पहुँचाने या न मारने के इस सिद्धान्त को मानवता तक ही नहीं बल्कि हर प्राणीमात्र तक फैलाते हैं।

गाँधी, मानवजीवन की जरूरतों के प्रति भी सचेत थे। वे कहते हैं कि अदमी चेतन या अचेतन में बाहरी हिंसा के बिना नहीं रह सकता। मनुष्य के पीने, खाने, पीने और घूमने की प्रक्रिया में यह आवश्यक है कि एक प्रकार की हिंसा होती है और कोई जीवन नष्ट होता है। भले ही यह अति अल्प हो। वे कीटनाशकों या दवाओं के माध्यम से जीवनहीन की अनुमति नहीं देते। दरअसल, गाँधी की अहिंसा का दर्शन गणित की गणना या केलकूलेशन से अधिक है। यह ईश्वर को पहचानने के समान है। यह कोई आसानी से समझने का दर्शन नहीं है, इससे भी कठिन है इसे व्यावहार में अपनाना, उतना ही कमजोर जितने हय, स्वयं हैं। ऐसा गाँधी कहते हैं। नकारात्मक और इसलिए अहिंसा का अर्थ है - न मारना। लेकिन गाँधी की अहिंसा की धारणा में वे शाब्दिक अर्थ तक सीमित नहीं हैं। अहिंसा के माने शब्द, कर्म एवं विचार में अहिंसा का होना है। गाँधी की अहिंसा का इसलिए, नकारात्मक स्तर पर लालच, लोभ, क्रोध, गर्व या घमण्ड और असत्य या झूठ से मुक्त होता है क्योंकि हमारे भीतर ये छह शत्रु हैं। यह नकारात्मक गुण है - क्रोध न करना, चोरी न करना, अधिक संग्रह न करना, लगाव न करना, न डरना, रस न लेना, किसी के हृदय को चोट न पहुँचाना और अन्त में किसी को न मारना। यही कारण है कि इस सर्वोत्तम गुण को 'अहिंसा' के रूप में परिभाषित किया गया है।

लेकिन यथार्थ के धरातल पर अहिंसा नकारात्मक, स्थिर या असक्रिय नहीं है। सकारात्मक अर्थ में अहिंसा का अर्थ है - 'सक्रिय प्रेम'। इस कारण सकारात्मक दृष्टि से यह गतिशील धारणा एवं सिद्धान्त है। यह प्रेम के बदले प्रेम नहीं बल्कि ईश्वर की समस्त रचना के प्रति प्रेम है। इसलिए गतिशील अहिंसा का अर्थ है - 'सीधे आचरण' या कार्य या 'मौन एव निःस्वार्थ दर्द। ' ईसा मसीह की तरह गाँधी एक हिंसा भरी दुनियाँ में आये, मानवता के लिए कष्ट और पीडा सही और मानवता के लिए जिये और मरे। अहिंसा का पाठ पढाते-पढाते ही उन्होंने प्राण त्यागे, वे एक मार्गदर्शक, जननेता और महात्मा बन गये। उनकी प्रेम ' नैतिक मौलिक रूप से अहिंसा की दिशा में जाती है, बुराई के सामने कभी न झुकना अर्थात् समस्त जीवों के प्रति प्रेम। उन्होने बाईबल की शिक्षा का अनुसरण किया, 'हर किसी को दो जो तुमसे मांगे और अपनी सम्पत्ति वापस मत मांगों उस व्यक्ति से जिसने तुम्हें लूटा है। " महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि अहिंसा का उद्‌गम प्रेम से होता है और इस कारण इसकी परीक्षा हृदय की आन्तरिक भावनाओं में होती है।

सब लोग अपने जीवन को बनाये रखने, अपनों की सुरक्षा करने या दूसरों के लिए कुछ न कुछ जीवन नष्ट करते हैं। इसलिए सब प्रकार की हिंसा को जानकर गाँधी ने प्रगतिशील अहिंसा का संकेत दिया। इसका अर्थ है पूर्ण अहिंसा वह है जहाँ हिंसा को उस हद तक छोड़ना जहाँ तक सम्भव हो।

इस प्रकार, प्रगतिशील अहिंसा की अवधारणा में यथार्थ एवं आदर्शवाद दोनों निहित हैं। एक ओर वे मनुष्य के जीवन की लागत पर प्रेस्ट एवं वर्मिन की अहिंसा के नाम पर अनुमति नहीं देते वही दूसरी ओर वे किसी को जरूरत से अधिक नीम की पत्ती तोड़ने की अनुमति भी नहीं देते। इन सबका अर्थ है कि गाँधी ने जीवन की ग्रेड्स एवं अहिंसा की ग्रेड्स को पहचाना है। तर्कसंगत एवं मानवीय प्रवृति गाँधी की अहिंसा को और अधिक स्वीकार्य एवं व्यावहारिक

बनाती है। फिर भी यह तर्क करना कि चूँकि हम सम्पूर्ण या एब्सोल्युट अहिंसा को नहीं अपना सकते, गलत होगा कि हम उतना ही अल्प अपनाऐं जितना अपना सकते हैं। इसके बजाय हमें सोचना चाहिए कि दृढ़ निश्चय मनुष्य को बड़ी ऊँचाईयों तक ले जाता है और यूँ कि अभ्यास मनुष्य को पूर्ण बनाता है इसलिए हम प्रेम एवं दया को जितना अपनाने का प्रयास करेंगे, उतने ही आप हम - उनमें वृद्धि कर पायेंगे और नैतिक स्तर ऊँचे उठ पायेंगे। गाँधी की अहिंसा, भौतिक चोट पहुँचाने तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह बुरी इच्छा, क्रोध, घृणा और द्वेष को दिल से निकालने में सहायक हैं। वास्तविक अहिंसा की जाँच हमारी इच्छा की अच्छाई एवं इरादे पर निर्भर है। अहिंसा, दरअसल, 'सबसे लम्बा प्रेम एव सर्वोत्तम दान है। '' जैसा कि गाँधी मानते हैं। क्रोध, घृणा एवं बदले की भावना का अहिंसा में कोई स्थान नहीं है। गाँधी कहते हैं कि 'यदि हृदय में घृणा है तो हम वास्तविक अर्थों में अहिंसक नहीं हो सकते'' 'अहिंसा की जडें प्रेम में है न कि घृणा में। यहाँ तक कि गाँधी के असहयोग की जड़ें प्रेम थी न कि घृणा में। '' भारतीय दर्शन 'जीव दया या भूत दया' से वे अनुप्रेरित थे। इसी तरह उन्हें इसाई धर्म का यह वाक्य भी स्मरण था, 'अपने शत्रु से प्रेम करो, उन्हें आशीर्वाद दो जो तुम्हें अभिशाप दे रहे हैं, जो तुम्हें घृणा करते हैं, उनके लिए अच्छा करो। 'सबको अपने समान समझें (आत्मवत् सर्वभुतेषु) जैसा कि हमने महान ग्रन्थों में लिखा है और यही अहिंसा का आध्यात्मिक स्वरूप है।

3.5 अहिंसा के सूत्र

जैसा कि हिंसा की अपनी तकनीक है। अहिंसा की भी अपनी तकनीक है। गाँधी ने अहिंसा के पाँच सरल सूत्र बनाऐं हैं -

1. अहिंसा में स्व. शुद्धिकरण निहित है जैसा कि मनुष्य के लिए सम्भव है।
2. अहिंसा की ताकत हर व्यक्ति की योग्यता पर निर्भर करती है न कि अहिंसक व्यक्ति की हिंसा चोट करने की इच्छा में।
3. अहिंसा बिना अपवाद के हिंसा से सर्वोपरि है।
4. अहिंसा में हार जैसी कोई चीज नहीं है। हिंसा का अन्त वाकई हार है।
5. अहिंसा का अन्तिम परिणाम अवश्यमभावी विजय है।

फिर भी, गाँधी का अहिंसा की तकनीक विकसित करने मे योगदान है न कि इसकी खोज करने मे। उनके अनुसार सत्य एवं अहिंसा उतने ही पुराने हैं जितने पुराने पर्वत है। लेकिन गाँधी ने अहिंसा को समाज बदलने में लागू किया। इसलिए अहिंसा समाज को बदलने का एक गतिशील हथियार बन गया। उनके अनुसार हिंसा के माध्यम से किसी वास्तविक समाज परिवर्तन का विचार, एक गलत धारणा है। यथार्थ मे सामाजिक बदलाव से तात्पर्य है - हमारे मूल्यों, विचारों, विचारधाराओं में बदलाव से है। यह नासमझी है यदि हम किसी व्यक्ति के विचारों को बाहरी भौतिक ताकत के बल पर बदलने की बात सोचें। वास्तव में शारीरिक या भौतिक शक्ति में प्रतिक्रिया की रचना होती है और इसके परिणाम विपरीत प्रभाव उत्पन्न करते हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि जितनी अधिक हिंसा होगी, उतनी ही कम क्रान्ति होगी। हिंसक क्रान्तियों के खतरों से इतिहास भरा है। बिना अहिंसा के कोई शान्ति और कोई प्रगति और विकास नहीं होता। हिंसक क्रान्ति के बाद शक्ति किसी एक व्यक्ति के हाथों में केन्द्रित हो

जाती है जैसा कि फ्रांस की क्रान्ति के पश्चात् वह नेपोलियन के हाथों में चली गई। ऐसी क्रान्ति से शक्ति जनता के हाथों में नहीं आती। साथ ही इस प्रकार की क्रान्ति में जनभागीदारी बड़े पैमाने पर वहीं हो पाती। हिंसक क्रान्ति, विपरीत क्रान्ति या काउन्टर-रिवोल्यूशन पैदा करती है। जो कभी समाप्त नहीं होता। अहिंसक क्रान्ति में बच्चे, बड़े, महिलाऐं भाग ले सकते हैं जैसा कि अहिंसक सत्याग्रह में होता है। अत: अहिंसक क्रान्ति सर्वोत्तम, त्वरित एवं सुरक्षित मार्ग है और यह सफलता का सुनिश्चित मार्ग है। दूसरी ओर हिंसा से कुछ भी स्थायी, कुछ भी अच्छा परिणाम हासिल नहीं किया जा सकता है। अहिंसा को आधार बनाकर गाँधी ने सत्याग्रह का विज्ञान विकसित किया जिसमें सिविल डिसऑबीडियन्स अर्थात् सरकार की अनुज्ञा, असहयोग, हड़ताल, पिकेटित्र, उपवास, कर न देने का अभियान आदि शामिल है। सत्याग्रह का अपना अनुशासन होता है। यह युद्ध से भी अधिक शक्ति रखता है। इसके लिए नैतिक एवं आध्यात्मिक गुणों से सम्पन्न नया नेतृत्व चाहिए। यह व्यक्ति एवं समाज को बदलने का अमोध अस्त्र है। हृदय परिवर्तन, विचार-परिवर्तन एवं परिस्थिति को बदलने का सही मार्ग है।

3.6 वर्तमान सन्दर्भो में गाँधीयन अहिंसा की प्रासंगिकता

अशान्ति और सैनिक खतरों से घिरी आज की दुनियाँ में यह हर कोई जानता है कि युद्ध के परिणाम मानवता का विनाश होता है। ऐसे समय की उथल-पुथल में गाँधी ने एक, तर्कसंगत एवं आश्वस्त करने वाला सन्देश दिया। यह सम्भव है कि किसी मैत्री एवं शान्ति के वातावरण में लोग जीये। बड़े पैमाने पर हिंसा के बावजूद, शान्ति स्थापना के सक्रिय प्रयासों से तकनोलॉजी और सुख-सुविधाओं का संसार बसाना सभ्य समाज ने सम्भव बनाया है।

गाँधी ने सब प्रकार के पेचीदा संकटों सवालों के समाधानों के उत्तर उपलब्ध कराये हैं। गाँधी अपने सत्य और अहिंसा के फार्मूलों का प्रयोग दक्षिण अफ्रिका में पहले ही कर चुके थे जहाँ उन्होंने सटीक तरीके से शोषण और काले रंग के प्रति भेदभाव के खिलाफ आवाज बुलन्द की थी। उसके बाद भारत में आकर उन्होंने आजादी हासिल करने का बिगुल भी इन्हीं पद्धतियों के माध्यम से बजाया। जब मानवतावाद के सिद्धान्त पर हथियारों के विनाशकारी हमले हो रहे थे, उन्होंने शान्ति का पैगाम दिया। गाँधी की कोशिशों का परिणाम था कि उन्हें सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं का आध्यात्मिक एवं नैतिक तरीकों से समाधान खोजने की दिशा में मान्यता मिली । उनका दृढ़ मत था कि राजनीति बिना नैतिक सिद्धान्तों के अधूरी है। अनेक बाधाओं और नियम परिस्थितियों के बावजूद उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य से संघर्ष करने और भारत को आजादी दिलाने का शन्तिप्रिय साधनों से कार्य शुरू किया। उनके प्रयास आगे बढ़े और वे आजादी की इस शान्तिपूर्ण जंग में सर्वाधिक लोकप्रिय नेता बन गये।

अहिंसा को आधार बनाकर उन्होंने सत्याग्रह के विज्ञान के सहारे सविनय अवज्ञा आन्दोलन, हड़ताल, पिकेहट, उपवास, स्वयं का पवित्रीकरण, कर न देने आदि के अभियान चलाये। वे मानते थे कि यदि इरादे नेक हैं तो सफलता का मार्ग प्रशस्त होता है। गाँधी के असहयोग के पीछे घृणा और द्वेष के बजाय प्रेम और शान्ति थी। उनके संघर्ष में शारीरिक क्षमता के बजाय दृढ़-इच्छा शक्ति का सम्बल था। वे मानते थे कि हिंसा, वास्तव में आदमी के भीतर दुर्बलता के एहसास की अभिव्यक्ति है। जब दिल साफ है, इरादा नेक है तो वही डर नहीं

होता। जीवन अनमोल उपहार है और जब कोई अपने जीवन का होम करने का इरादा लेकर चलता है तो उसके सामने कठोर हृदय भी पिघलने लगते हैं और अज्ञान का अँधेरा छँटने लगता है।

अहिंसा के रास्ते तनाव, संघर्ष एवं वेमनस्य को समाप्त करने की व्यूहरचना में सर्वप्रथम हिंसा के डर के माहौल को बदलने का होता है। ऐसा करने से तनाव का स्तर गिरता है और एक दूसरे पक्ष के बीच बातचीत का मार्ग खुलता है और लोग यथार्थ को समझने के करीब आते हैं। इस प्रक्रिया से तनाव को जकड़ और ढीली पड़ती है। गाँधी की अहिंसा का मार्ग काँटों भरा जरूर है लेकिन समस्याओं के समाधान का यह सफल एवं श्रेष्ठ मार्ग सिद्ध हो चुका है। अहिंसा की राह पर आगे बढ़ने का पहला कदम यह है कि दैनिक जीवन में सत्य, विनय, सहनशीलता एवं प्रेम भरी दया जैसी बातों को जीवन में ढाला जाये। दूसरी बात यह है कि अहिंसा को ठीक मान लेने मात्र से ही काम नहीं चलता। यह अहिंसा में विश्वास, बुद्धिमतापूर्वक एवं रचनात्मक होना चाहिए। दरअसल, अहिंसा झूठा दिखावा या कायरता नहीं है और न ही इनका सुरक्षा-कवच या शिल्ड है। इसमें कहीं मिलावट नहीं होती। पूर्ण निःस्वार्थ होकर कदम न बढ़ाया जाये तो अहिंसा के रास्ते आगे बढना मुमकिन नहीं होता। अहिंसा की राह में मस्तिष्क की ताकत के बजाय हृदय की ताकत की जरूरत होती है। इसमें भावना का स्पर्श चाहिए। वर्तमान की समस्याओं पर दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट है कि इनके समाधान के लिए गाँधी की अहिंसा का माध्यम सर्वोत्तम एवं प्रासंगिक है। धैर्य, सभी कोशिश, बिना स्वार्थ-भाव के आपसी बातचीत एवं बिना तनाव के आपसी बातचीत एवं बिना तनाव के समस्याओं का समाधान सरलता से किया जाना मुमकिन है।

3.7 निष्कर्ष

जैसा कि हम जानते हैं कि गाँधी केवल सामाजिक एवं राजनीतिक नेता ही नहीं थे बल्कि वे एक सक्रिय व्यक्ति थे जिन्होंने भारतीय आजादी के आन्दोलन को जन आन्दोलन का रूप दिया। उन्होंने भेदभाव, साम्राज्यवाद, अन्याय, अत्याचारों एवं शोषण के खिलाफ बगावत की। उन्होंने आमजन की सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक बेड़ियों के बंधनों से मुक्त करने के लिए भी संघर्ष किया।

यों तो हर देश में अहिंसा के सिद्धान्त के महत्व को समझा जाने लगा है और अपनाया जाने लगा है लेकिन गाँधी तो अहिंसा के पुजारी थे - बहुत विशेष व्यक्तित्व थे और उन्होंने तो सत्य, प्रेम और अहिंसा के सन्देश का व्यापक प्रसार करने की प्रक्रिया में अपना जीवन तक कुर्बान कर दिया। गाँधी ने स्वयं अपने जीवन में अहिंसा की शिक्षा का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

यहाँ तक कि एनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका ने गाँधी की महानता को इन शब्दों में दर्शाया है-

गाँधी उन कुछेक व्यक्तियों में से थे जिन्होंने अपने विचार की अमिट छाप छोड़ी है। गाँधी का यह विचार उनकी अहिंसा का विचार था। इतिहास लेखकों ने भी गाँधी की महानता को स्वीकारते हुए कहा है -

भारतीय ने अपनी आजादी की लड़ाई के दौरान दो शक्तिशाली हथियार पाये - एक अति योग्य नेता - जो नया हथियार पाया वह गाँधी ने सुझाया था - उनके शक्तिशाली नेतृत्व ने सौंपा था - यह हथियार - अहिंसा थी।

गाँधी ने जो साधन हाथ में लिया और जिसका इस्तेमाल किया वह, आदमी के द्वारा विनाश के सर्वाधिक ताकतवर हथियार से भी ताकतवर हथियार था। उनका मानना था कि अहिंसा को अपना कर व्यक्ति बडे से बडा काम कर सकता है। गाँधी का मानना था कि यदि सत्य और अहिंसा में व्यक्ति की आस्था अटल है और वह निरन्तर प्रयासरत रहता है तो ऐसा कोई कार्य नही है जो कि वह कर नही सकता। गाँधी की अहिंसा, विश्वव्यापी सिद्धान्त है। इसकी प्रासंगिकता कल भी थी और आज भी है। भविष्य में भी इसकी प्रासंगिकता कायम रहेगी।

समाज के संघर्षों के निदान का यह शक्तिशाली उपकरण है। इसके परिणाम इसके ठीक लागू करने एवं इसकी समझ पर निर्भर है। आज के विश्व-परिदृश्य का विश्लेषण करें तो अहिंसा के रास्ते आगे बढ़ना और अहिंसा के रास्ते आगे बढ़ना और अहिंसा में अपनी समस्याओं एवं संकटों का हल खोजने के संदर्भ में अहिंसा का महत्व एवं उपयोगिता स्पष्ट नजर आती है। आज की हिंसा से घिरी दुनियाँ की चुनौतियों का सामना करने में सर्वोत्तम सम्बल है - 'अहिंसा'।

3.8 स्मरणीय बिन्दु

- अहिंसा का मूल्य जीवन से भी ऊँचा है।
- अहिंसा का अर्थ रोटी और श्रम की तरह जीवन का पहला नैतिक कानून।
- अहिंसा में कई सकारात्मक मूल्य जैसे सम्पूर्णत: घृणा का अभाव या किसी भी प्रकार की मलिन इच्छा का न होना - किसी के भी विरूद्ध, अपनाना शामिल है।
- अहिंसा, ईश्वर में विश्वास करती हैं।
- अहिंसा हमें सच्चाई के मार्ग पर चलना सीखाता है।
- अहिंसा में कायरता या कायरता का विकल्प चुनने वालों के लिए कोई स्थान नहीं है।

3.9 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी के अहिंसा पर विचारों का वर्णन कीजिए। उनका महत्व क्या है ?
2. अहिंसा से आप क्या समझते हैं? क्या वह आज भी प्रासंगिक है?
3. गाँधी की अहिंसा सम्बधित विचारों के उद्भव या क्रमिक विकास पर एक विस्तृत लेख लिखें।
4. अहिंसा के प्रकार पर गाँधी के विचारों का वर्णन कीजिए।
5. अहिंसा पर गाँधी के विचारों का पोषण करने वाले विभिन्न प्रभावों की चर्चा कीजिए।
6. गाँधी ने अहिंसा के जिन सरल सूत्रों की विवेचना की है उनका वर्णन कीजिए।

3.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. गाँधी एम.के. फ्रोम यरावदा मंदिर नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1999
2. गाँधी एम.के. सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1995
3. गाँधी एम.के. साल्ट सत्याग्रह नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1959
4. 4. कृपलानी जे.बी., गाँधी हिज लाईफ एण्ड थोट, प्रकाशन अनुभाग, भारत सरकार,नई दिल्ली, 1970
5. प्रभू आर.के. एण्ड राव - दी माइन्ड ऑफ महात्मा गाँधी, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद 1996
6. उम्मन, टी.के. प्रोटेस्ट एण्ड चैंज स्टडीज इन सोशल मूवमेंट्स, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1990
7. कुमार बी. अरूण, गांधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर. 2008
8. चटर्जी, मारग्रेट, गांधी एण्ड द चैलेंज ऑफ रिलिजियस डाइवर्सिटी, प्रोमिला & कम्पनी, प्रकाशक नई दिल्ली, 2005
9. वेबर थॉमस, गांधी एज डिसीप्लिन एण्ड मेन्टोर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2007
10. रोलैण्ड रोमन, महात्मा गाँधी, रूपा & कंपनी, नई दिल्ली, 2007

इकाई - 4
संघर्ष निवारण और सत्याग्रह

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 सत्याग्रह के नैतिक सिद्धान्त

4.3 सत्याग्रह की तकनीक

4.3.1 उपवास एवं अनशन

4.3.3 अहिंसात्मक असहयोग

4.3.3 सविनय अवज्ञा आन्दोलन

4.3.4 रचनात्मक कार्यक्रम

4.4.3.5 सत्याग्रह की अवधारणा और तकनीकी

4.4 निष्कर्ष

4.5 अभ्यास प्रश्न

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

- इस इकाई से हमारा उद्देश्य कि आपको सत्याग्रह से परिचय करवाना।
- इस इकाई का अध्ययन कर लेने पर आपको निम्नलिखित बातों का हो जाएगा।

1. सत्याग्रह के विचारों को समझना, जानना।
2. सत्याग्रह के नैतिक विचारों को जानना
3. सत्याग्रह के विभिन्न रूपों को जानना।
4. शांतिपूर्ण तरीके से विरोध करने की तकनीक को जानना।
5. वर्तमान में सत्याग्रह के महत्व को समझना।

4.1 परिचय

गांधी के चिन्तन का मूल आधार है सत्य और अहिंसा और इन्ही सिद्धांतो के आधार पर अन्याय का प्रतिरोध करने के लिए एक रामबाण या अमोघ शस्त्र का प्रयोग किया जिसका नाम दिया, 'सत्याग्रह। सत्याग्रह एक संयुक्त शब्द है जो संस्कृत भाषा के सत्य+आग्रह दो शब्दों की सन्धि से बना है, सामान्य अर्थ है सत्य पर दृढ़ता, हर स्थिति में सत्य को पकड़कर चलना है। गांधी के अनुसार सत्याग्रह है, इसमें विरोधी को पीड़ा देकर नहीं बल्कि स्वयं कष्ट उठाकर सत्य की रक्षा करना। अन्याय का सर्वथा विरोध करते हुए भी अन्यायी के प्रति वैर-भाव न रखना, सत्याग्रह का मूल लक्षण है।

गांधी द्वारा सत्याग्रह शब्द का निर्माण दक्षिण अफ्रीका में उस शक्ति के लिए किया गया था जिसका पूरे आठ वर्षो तक वही के भारतीय प्रयोग करते आ रहे थे उस समय इंग्लैण्ड

तथा दक्षिण अफ्रीका में पैसिव रेजिस्टेंस (निष्क्रिय प्रतिरोध) नाम से जो आन्दोलन चल रहा था उससे भेद दिखाने के लिए यह शब्द प्रयोग में किया गया। सत्याग्रह एवं निष्क्रिय प्रतिरोध में उतना ही अन्तर है जितना अन्तर उत्तर तथा दक्षिण ध्रुव में। निष्क्रिय प्रतिरोध तो एक निर्बल के अस्त्र के रूप में जिसमें अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शरीर बल या हिंसा का उपयोग वर्जित नहीं है, जबकि सत्याग्रह में किसी भी तरह की हिंसा का स्थान नहीं है।

सत्याग्रह निक्रिय प्रतिरोध नहीं बल्कि सत्य एवं- अहिंसा पर आधारित विरोध है। निक्रिय प्रतिरोध एक राजनीतिक अस्त्र है जबकि सत्याग्रह एक नैतिक शस्त्र है, जो शारिरिक शक्ति से ऊपर आत्मिक शक्ति की श्रेष्ठता पर आधारित है।

सत्याग्रह "सर्वोच्च अविष्कार या उत्पति थी' ' इसके माध्यम से गांधीजी ने हिंसक जगत को अहिंसा की शिक्षा दी। सत्याग्रह की पद्धति गांधीजी की राजनीति को विशेष और अपूर्व देन है। स्वयं गांधीजी के शब्दों में "अपने विरोधी को दुःखी बनाने के बजाय, स्वयं अपने पर दुःख डालकर सत्य की विजय प्राप्त करना ही सत्याग्रह है। ' सत्याग्रह शक्तिशाली और वीर पुरूष का शस्त्र है। एक सत्याग्रही अपने प्रतिद्वन्दी से आध्यात्मिक संबंध स्थापित कर लेता है। वह उसमें ऐसा विश्वास उत्पन्न कर देता है कि वह बिना अपने को नुकसान पहुंचाए उनको नुकसान नहीं पहुंचा सकता। ' 'सत्याग्रह तो सत्य की विजय हेतु किये जाने वाले आध्यात्मिक और नैतिक संघर्ष का नाम है। "

सत्याग्रह बुराई को दूर करने अथवा विवादों को अहिंसक तरीकों से दूर करने का तरीका है। साधारण भारतीय नागरिक के लिए यह अंग्रेजी साम्राज्य के विरूद्ध स्वतंत्रता की लड़ाई का तरीका था। प्रो. एन.के. बोस के शब्दों में "सत्याग्रह अहिंसक तरीकों द्वारा युद्ध का संचालन करने का तरीका है। ' डॉ. कृष्णलाल श्री धारणी के अनुसार "सत्याग्रह अहिंसक सीधी कार्यवाही है। "

साहित्यिक दृष्टि से सत्याग्रह एक संयुक्त शब्द है जो सत्य+आग्रह को मिलाकर बना है इसका अर्थ है "सत्य के विरूद्ध आग्रह करना ' अर्थात जिसे व्यक्ति सत्य समझता है उस पर जीवन-पर्यन्त हठ या टुटा रहना। यह सत्य पर आरूठ रहकर बुराई का विरोध है। जो कुछ असत्य है उसका विरोध सत्याग्रह है। हर स्थिति में सत्य को पकड़े रहना सत्याग्रह है। हिंसा, भय और मृत्यु सत्याग्रही को अपने पथ से विचलित नहीं कर सकते। यह "सत्य के लिए तपस्या" है। "यह प्रेम का कानून" है। गांधीजी ने इसे प्रेम-शक्ति या आत्मिक-शक्ति भी कहा है। जहाँ कहीं भी अन्याय और असत्य का सामना करना पड़े वहीं सत्याग्रह का प्रयोग किया जा सकता है। सत्याग्रह हर परिस्थिति में अहिंसात्मक होता है। इसमें शुद्धतम आत्मबल का प्रयोग किया जाता है।

गांधीजी का कहना था कि सत्याग्रही विचार और व्यवहारों के विभेद से बचते हुए आत्मानुशासन और लोकानुशासन से बंधा रहता है। जनता-जनार्दन की सेवा का आजीवन व्रत लेना सत्याग्रही का श्रेष्ठ संकल्प है। सत्याग्रह का उद्देश्य है- "विरोध का अंत करना, न कि विरोधी का"।

सत्याग्रह स्वाश्रित है। इसका प्रयोग करने से पूर्व विरोधी की अनुमति आवश्यक नहीं होती। वस्तुत: जब विरोधी प्रतिरोध करता है तो यह बहुत अधिक प्रकाशमान होता है। सत्याग्रही अपने विरोधी के सम्मुख अपना आध्यात्मिक व्यक्तित्व स्थापित करना है और उसके हृदय में यह भावना जगा देता है कि अपने व्यक्तित्व को हानि पहुंचाए बिना उसे हानि न पहुंच सके।

11 सितम्बर 1906 को दक्षिण अफ्रीका के जोहासनबर्ग में एम्पायर थियेटर की जनसभा में इस प्रकार की भावना थी। संवेदनशील अंतरात्मा ने मोहनदास करमचंद गांधी से कहा कि यह असाधारण घटना थी। एक इतिहास बन रहा है। ऐसा कार्य हो रहा है जिसका गवाह ईश्वर है। यह एक धार्मिक शपथ थी जिसे तोड़ा नहीं जा सकता। सार्वजनिक रूप से हाथ उठाकर कोई साधारण शपथ नहीं ली गई थी जिसे कुछ क्षण बाद भुला दिया जाए। अगले दिन 12 सितम्बर को एम्पायर थियेटर आग मे पूरी तरह जलकर राख हो गया। अनेक भारतीयों को लगा कि अध्यादेश की भी यही दशा होगी। गांधीजी के लिए यह मात्र एक संयोग था। वह किसी शकुन में विश्वास

नहीं करते थे, किसी मूक संकेत के साथ गांधी जी को भविष्य का संकेत मिला। उस भयावह घटना से उनके मन को उस बैठक में जिस आश्वासन की प्रबल अनुभूति हुई और अंतिम क्षण तक जो उनके मन में उससे स्पष्ट हो गया कि वे अकेले ही आगे बढ़ सकते हैं। 11 सितम्बर 1906 को मोहनदास करमचंद गाँधी ने सचमुच इतिहास रचा था। गांधी ने सामाजिक एवं राजनैतिक स्तर पर दक्षिण अफ्रीका में 11 सितम्बर 1906 को आरम्भ किया था वह प्राय: जुलाई 1914 तक चला उसमे उन्हें आशातीत सफलता मिली, उन्होंने वहां पर फीनिक्स आश्रम एवं ट्राल्स्टाय फार्म की स्थापना की। भारत में उन्होंने अहमदाबाद के पास कोचरब में पहले फिर बाद में साबरमती में आश्रम की स्थापना की।

4.2 सत्याग्रह के नैतिक सिद्धान्त

गांधी के अनुसार नैतिक बल के रूप मे सत्याग्रह का प्रयोग सभी के द्वारा नही किया जा सकता। सत्याग्रह केवल उन लोगों द्वारा किया जा सकता है जो सत्याग्रही मानसिक स्थिति को भी अर्जित की लें, और जिनके मन में सत्य की सर्वोच्चता और उसकी अमोध शक्ति के प्रति अडिग आस्था हो। गांधी के अनुसार "व्यक्ति का नैतिक अनुशासन ही सामाजिक पुननिर्माण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साधन हैं। " ये नैतिक सिद्धान्त ही अहिंसात्मक समाज-व्यवस्था का ढांचा निर्धारित करते है। समाज की पुनर्रचना हेतु मनुष्य की नैतिक-शक्ति को गांधी ने एक आवश्यक शर्त के रूप में माना है।,

मानव स्वभाव के बारे में गाँधी के विचार आध्यात्मिक विश्वासों और नैतिक सिद्धान्तों को साथ अविभाज्य रूप से संबंधित है। कि आत्मिक शक्ति की पूर्ण तेजस्विता को जागृत करना, एक कठिन साधन है न कि साध्य के रूप में है। अत: सत्याग्रह सब लोगों द्वारा नहीं किया जा सकता। केवल वे लोग ही सत्यागृह कर सकते है जो आचरण व अन्तःकरण शक्ति को जाग्रत कर पाने की क्षमता रखते हो। गाँधी के अनुसार अहिंसा सर्वोच्च नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक है। अहिंसा के तीन रूप हो सकते है- जाग्रत अहिंसा

(Enlightened Non-Violence), औचित्य अहिंसा (Reasonable Non-Violence) तथा भीरूओं की अहिंसा (Non-Violence of the Cowards)

जाग्रत अहिंसा वह है जो व्यक्ति मे अर्न्तरात्मा की पुकार पर स्वाभाविक रूप से जन्म है। इसे व्यक्ति अपने आन्तरिक विचारों की उत्कृष्टता अथवा नैतिकता के कारण स्वीकार करता है। इस की अहिंसा में असंभव को भी सम्भव में बदल देने की अपार शक्ति निहित होती है।

औचित्य अहिंसा वह है जो जीवन के किसी क्षेत्र में विशेष आवश्यकता पड़ने पर औचित्यानुसार एक नीति के रूप में अपनाई जाए। यद्यपि यह अहिंसा दुर्बल व्यक्तियों की है, पर यदि इसका पालन ईमानदारी दृढता से किया जाए जो काफी शक्तिशाली और लाभदायक सिद्ध हो सकती है। भीरुओं की अहिंसा डरपोक और कायरों की अहिंसा है, निक्रिय अहिंसा (Passive- Non-Violence) है। कायरता और अहिंसा, पानी तथा आग की भाँति एक साथ नहीं रह सकते। गाँधी ने कायरता को हिंसा से बुरा मानते हुए कहा कि यदि मुझे दोनों में से एक चुनना हुआ तो मैं निश्चित ही हिंसा को ही चुनुंगा। नैतिकता को आंतरिक स्वीकृति पर आधारित माना है। नैतिक लक्ष्यों से मानव स्वेच्छा से अपने स्वधर्म का पालन करता है। न केवल साध्य ही नैतिक, पवित्र, शुद्ध और उच्च होने बल्कि साधन भी उसी मात्रा में नैतिक, पवित्र और शुद्ध होने चाहिए। वे दोनों को अविभाज्य समझते है। उनके लिए "'साधन एक बीज की तरह है और साधन एक पेड़ - साधन और साध्य में वही संबंध है जो बीज और पेड में हैं" यदि कोई व्यक्ति साधनों का ध्यान रखता है तो साध्य स्वयं अपना ध्यान रखेगा। व्यक्ति और समाज दोनों के मधुर-सम्बन्ध स्थापित करना गाँधी जी का उद्देश्य था। उन्होंने व्यक्ति और समाज को समान रूप से माना है। उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया कि नैतिक मूल्यों के अभाव में इस साधन से अधिक हानि हुई।

गांधी ने कई वर्ष पूर्व शिक्षा की जिन बुराइयों की ओर संकेत किया था, वे आज भी उग्र रूप में विद्यमान है। नैतिक मूल्यों से रहित शिक्षा वर्तमान स्थिति के प्रति निष्क्रियता और असंतोष उत्पन्न करती है और ऐसी आकांक्षाओं को उभारती है जिनमें मनुष्य काल्पनिक सुखों और अवसरों की चिंता में डूब जाता है जिन्हें वह प्राप्त नहीं कर सकता और न जिनके योग्य वह वस्तुत होता है।

वे कभी ऐसे किसी कानून के सामने समर्पण करने की अनुमति नहीं दे सकते थे जो मनुष्य की नैतिक गरिमा के प्रतिकूल होता है। आत्मा अथवा अन्तःकरण की आवाज सर्वोपरि है।

सत्याग्रही के गुण - गांधी के अनुसार सत्याग्रही वही होगा जो एकादशी व्रतों का पालन करेगा वे व्रत निम्नलिखित है- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रहमचर्य, अपरिग्रह, शारीरिक श्रम, अस्वाद निर्भयता, सर्वधर्म समभाव, स्वदेशी तथा अस्पृश्यता निवारण।

4.3 सत्याग्रह की तकनीक

सत्याग्रह के अन्तर्गत गांधी ने अनेक रूपों का आग्रह किया था जो कि किसी भी मानव को कष्ट भोगने के बिना जीवन अधुरा माना तथा गांधी का मानना था कि शुद्धीकर और पाश्चाताप में उपवास, हड़ताल, सामाजिक बहिष्कार, धरना आदि को मानना उचित था जो निम्नानुसार है-

4.3.1 उपवास एवं अनशन

अनशन केवल कुछ विशेष अवसरों पर आत्मसुद्धि या अत्याचारियों के हृदय परिवर्तन के लिए ही किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त इस अस्त्र का प्रयोग हर किसी व्यक्ति द्वारा नहीं वरन् आध्यात्मिक बल-सम्पन्न व्यक्तियों के द्वारा ही किया जाना चाहिए। क्योंकि इसके सफल प्रयोग के लिए मानसिक शुद्धता, अनुशासन और नैतिक मूल्यों में आस्था की अत्यधिक आवश्यकता होती है।

यह "आध्यात्मिक ओषधि" है। जिसका प्रयोग निपुण वैध ही कर सकता हैं। यह चिकित्सा विशिष्ट रोगों में ही फलदायी होती है। अत: आत्म-शुद्धि के लिए, स्वास्थ्य के लिए, पश्चाताप के लिए, अन्याय का प्रतिरोध करने के लिए, या बुराई करने वाले का हृदय परिवर्तन करने के लिए, उपवास कैसा भी हो प्रत्येक में सावधानी और सतर्कता की आवश्यकता होती है।

गांधी के शब्दों में "लोग कहने से चेतते ही नहीं। उपवास से हजारों को सन्देश पहुँचाया जा सकता है।" गाँधी ने पाश्चात्य लोकतांत्रिक राजनीति की कटु आलोचना की क्योंकि उसमें तीन अन्तर्विरोध थे। उसके अन्तर्गत पूँजीवाद का असीम प्रचार हुआ जिनके फलस्वरूप दुर्बल जातियों का डटकर शोषण किया गया। राजनीति में लोकतंत्र का अर्थ है कि विरोधियों के साथ पूर्णत: सम्यक व्यवहार किया जाय। आर्थिक क्षेत्र में लोकतंत्र का अभिप्राय है कि सबसे दुर्बल व्यक्ति को भी वे ही सुविधाएँ मिलनी चाहिए, जो सबसे शक्तिशाली को उपलब्ध हो। वे चाहते थे कि भारत विकसित होकर "सच्चे लोकतंत्र" का रूप धारण कर लें।

4.3.2 अहिंसात्मक असहयोग

सत्याग्रह का तात्पर्य न केवल हिंसा का निषेध, वरन् विरोधी के प्रति किसी प्रकार की दुर्भावना का भी अभाव है। अहिंसा का आशय है कि " मनसा, वाचा, कर्मणा किसी भी रूप में हिंसा का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए और विरोधी के मन को भी दुःख नही पहुंचाया जाना चाहिए। "

गांधी की अहिंसात्मक सर्वोच्च प्रेम, सर्वोच्च दयालुता और सर्वोच्च आत्मबलिदान है। यही कारण है कि अंग्रेजी का नॉन-वायलेस गांधी की अहिंसा को पूर्ण रूप से व्यक्त नहीं करता।

गाँधी के अनुसार अहिंसा वह ज्योति है जिसके द्वारा मुझे सत्य का दर्शन होता है।" अहिंसा ही सर्वेश्वर का दर्शन करने का सीधा और छोटा मार्ग है।

अहिंसात्मक केवल नकारात्मक नहीं अर्थात अहिंसा का अर्थ केवल मन, वचन और; कर्म से दूसरों को दुःख पहुंचाने से नहीं बल्कि इसका अर्थ सकारात्मक भी है अर्थात मानव का यह कर्तव्य है कि वह दूसरों की भलाई के लिए कार्य करें। प्रेम, दया, क्षमा, स्व-बलिदान, अहिंसा व्यवहारोपयोगी और सामाजिक है। यह सक्रिय प्रबल और व्यवहारिक शक्ति से विभूषित है।

अहिंसात्मक के साथ-साथ सत्याग्रह की तकनीक में असहयोग प्रथम विधि है। गाँधी इसे "सन्तप्त प्रेम की अभिव्यक्ति" कहते है। इसका अभिप्राय यह है कि जिसे व्यक्ति असत्य,

अवैध, अनैतिक या अहितकर समझता है अर्थात जिसे व्यक्ति बुराई समझता है, उसके साथ सहयोग नहीं करना।

गांधी का विचार था कि सत्याग्रह में किसी भी सरकार द्वारा जनता के सहयोग से ही शोषण और अत्याचार किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में यदि जनता सरकार के साथ सहयोग करने से इन्कार कर दे, तो सरकार के द्वारा कार्य नहीं किया जा सकेगा। सन् 1919-20 में भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का विरोध करने के लिए असहयोग आन्दोलन को अपनाया गया था।

असहयोग द्वारा सरकार की भ्रष्ट नीतियों तथा जाति और समाज में विद्यमान बुराइयों को दूर करने के लिए किया जा सकता हैं। जहां दमन है, शोषण हैं, अत्याचार है वहां असहयोग सम्भव है। असहयोग त्याग का अभिप्राय यह है कि भ्रष्ट व्यक्ति, संस्था या सरकार को इतना शक्तिहीन बना दिया जाये कि वह न्याय करने पर बाध्य हो जाए। एक निरंकुश और क्रूर अधिनायक भी सहयोग के बिना बहुत देर तक शासन नहीं कर सकता। असहयोग को स्वर्णित अस्त्र' या 'देवास्त्र भी कहते है।

यदि असहयोग अन्तिम सीमा तक चला जाए तो यह सरकार या उक्त व्यक्ति व समाज का कार्य बिल्कुल ठप कर देने में सफल हो सकता है।

4.3.3 सविनय अवज्ञा आन्दोलन

इसका आशाय है कि विनयपूर्वक आज्ञा का पालन न करना। सत्याग्रह का असहयोग से अधिक प्रभावपूर्ण रूप सविनय अवज्ञा है। गांधी इसे पूर्ण प्रभावदायक और सैनिक विद्रोह का ही एक विकल्प करते थे। सविनय अवज्ञा का तात्पर्य अहिंसक और विनयपूर्वक तरीके से कानून की अवज्ञा करना है। कानुनों की यह अवज्ञा हिंसक रूप ग्रहण न कर लें, इसलिए उनका विचार था कि सविनय अवज्ञा का प्रयोग जनसाधारण द्वारा नहीं वरन् कुछ चुने हुए विशेष व्यक्तियो द्वारा किया जाना चाहिए।

'सन् 1931 में नमक आन्दोलन के रूप में महात्मा द्वारा इसी शस्त्र का प्रयोग किय गया था। ' सविनय अवज्ञा नैतिक दृष्टि से शून्य संवैधानिक कानूनों को तोड़ने का शिष्ट प्रयोग है। इस शब्द को थोरु ने सर्वप्रथम प्रयुक्त किया था। थोरू ने संवैधानिक कानूनों को तोड़ने का आन्दोलन केवल राजस्व संबंधी कानूनों जैसे कर देने तक ही सीमित रखा जबकि 1919 में सविनय अवज्ञा का (गांधी द्वारा) सभी प्रकार के दमनकारी कानूनों को तोड़ने से था। ऐसा व्यक्ति कानून की शक्तियों का आव्हान करते हुए सहर्ष कारावास भुगतने को तत्पर रहता है। ग्रह सत्याग्रह का ही अंग है। "जब सविनय प्रतियोगी किसी से घृणा नहीं करता, शस्त्र का प्रयोग नहीं करता तो अराजकता फैलाने का प्रश्न ही नहीं उठता"।

"जहाँ सत्याग्रह के अन्य स्वरूप व्यक्ति, व्यक्ति समूह, जाति, समाज तथा सरकर के विरूद्ध प्रयोग में लाये जा सकते है वहां सविनय अवज्ञा का प्रयोग केवल सरकार के विरूद्ध किया जा सकता है।" यह केवल उन कानूनों, नियमों या कार्यपालिका आदेशों के विरूद्ध होती है जिसे सत्याग्रही अनैतिक, अन्यायिक और हानिकारक समझता है। सत्याग्रही कानूनों का उल्लघंन कर परिणामों को स्वेच्छा से स्वीकार करता है। अवज्ञा प्रचार तथा शिक्षा का सर्वोतम साधन है। यह

न केवल राष्ट्र की जनता को शिक्षित करने का सर्वोतम है बल्कि विश्व जनमत को भी शिक्षित करने का तरीका है।

4. हिजरत - यदि किसी स्थान पर अत्याचार के कारण अपने आत्मसम्मान की रक्षा न कर सके तो ऐसी परिस्थितियों में उसे उस स्थान को छोड देना ही हिजरत है। स्थाई निवास स्थान का स्वैच्छिक परित्याग। सन् 1918 में बारडौली और सन् 1939 में बिट्ठलगढ और लिम्बड़ी की जनता को गांधी के द्वारा हिजरत का सुझाव दिया गया। अहिंसक ढ़ग से अपनी रक्षा नहीं कर सकता अर्थात जब व्यक्ति या जनसमूह के पास न तो आत्मशक्ति हो और न हिंसा की शक्ति हो तो उस समय अत्याचारियों के हृदय परिवर्तन के लिए उस जगह को ही छोड़ देना चाहिए।

5. हड़ताल- हड़ताल के संबंध में गांधी का विचार समाजवादियों और साम्यवादियों से भिन्न है। गांधी स्वयं वर्ग संघर्ष की धारणा मे विश्वास नहीं करते थे उनके अनुसार हड़ताल आत्मशुद्धि के लिए किया जाने वाला एक स्वैच्छिक प्रयत्न है। हड़ताल करने वाले व्यक्तियों की मांगे नितान्त स्पष्ट और उचित होनी चाहिए। राष्ट्र की राय प्रकट करने का राह तरीका विराट सभाओं की अपेक्षा कहीं अधिक प्रबल है।

6. गांधी के शब्दों में "मानव वाणी उस दूरी तक कभी नहीं पहुँच सकती जिस दूरी तक अन्तःकरण का मौन लघुवाणी पहुँचता है। " हड़ताल वैद्य मांगों के लिए ही करनी चाहिए। अनुचित हड़ताल या माँगें कभी सफल नहीं हो सकती। उन्हें सार्वजनिक सहानुभूति प्राप्त नहीं हो सकती।

7. बहिष्कार- विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार कर स्वदेशी को बढ़ावा देना तथा विदेशी शिक्षा की जगह स्वदेशी शिक्षा को बढ़ावा देना।स्वतंत्रता आन्दोलन में इसका कई बार प्रयोग किया गया।

8. धरना- यह विरोधी के हृदय परिवर्तन के लिए किया जाता है, यह शांतिपूर्ण होता है तथा उचित मांग के लिए होता है। स्वतंत्रता आंदोलन में शराब एवं विदेशी वस्तुओं के विरूद्ध धरने से सफलता मिली थी।

4.3.4 रचनात्मक कार्यक्रम

रचनात्मक कार्यो को गांधी ने सत्याग्रह का अंग बताया। उन्होंने कहा कि हमें निम्नलिखित रचनात्मक कार्य भी करने चाहिए। जिससे हम समाज के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह कर सके। रचनात्मक कार्यक्रम निम्नलिखित बताए- खादी का प्रसार करना, ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन, बुनियादी शिक्षा, नारी उद्धार, सर्वधर्म समभाव, समग्र ग्राम-सेवा, अछूतोद्धार, आदिवासी सेवा इत्यादि।

सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोध में अन्तर-

सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोध में जमीन आसमान का अन्तर है। सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ है सत्य के प्रति आग्रह और इस कारण इसे सत्य शक्ति कह सकते है। सत्य आत्मा है, अत: यह आत्मशक्ति के रूप में सर्वविदित है। यह शब्द प्रथम बार दक्षिण अफ्रीका में प्रयुक्त किया गया था ताकि दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के अहिंसक आन्दोलन को

समकालीन 'निष्क्रिय-प्रतिरोध' तथा अन्य आन्दोलनों से पृथक रूप से जाना जा सके। इसे दुर्बल के अस्त्र के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया।

निष्क्रिय प्रतिरोध को प्राचीन अंग्रेजी अर्थ में प्रयुक्त किया गया है और यह शब्द मताधिकार आंदोलन एवं नास्तिकों के आन्दोलन में प्रयुक्त हुआ है। निष्क्रिय प्रतिरोध दुर्बल का अस्त्र माना गया है। इसमें हिंसा से बचा जाता है।

सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोध दोनों आक्रमण का सामना करने, विवादों को सुलझाने, अन्याय और अत्याचारों को दूर करने तथा सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन लाने के तरीके है। इन पर भी गांधी निष्क्रिय प्रतिरोध को सत्याग्रह की अनुभूतियों में नहीं लेते। उनके लिए इन दोनों में उतना ही अन्तर है जितना कि उत्तरी ध्रुव और दक्षिण ध्रुव में है। इन दोनों में मुख्य अन्तर निम्नलिखित है-

1. सत्याग्रह एक नैतिक शस्त्र है। इसमें आत्मिक शक्ति का प्रदर्शन होता है। इसमें सत्ता तथा शक्ति की भूख नहीं होती, इसमें केवल न्याय की भूख होती है। स्वार्थ भावना नहीं होती। यह परमार्थ के लिए है। जबकि निष्क्रिय प्रतिरोध एक राजनीतिक अस्त्र है। जिसका प्रयोग इच्छा पूर्ति के लिए किया जा सकता है। इसमें स्वार्थ की भावना बनी रहती है।
2. सत्याग्रह में सत्याग्रही का बल ईश्वर श्रद्धा है। 'निर्बल का बल राम' सत्याग्रही का मूल-मन्त्र (शक्ति) है। जबकि निष्क्रिय प्रतिरोध मे आवश्यक नहीं ईश्वर श्रद्धा पर आधारित है।
3. निष्क्रिय प्रतिरोध का क्षेत्र सीमित है परन्तु सत्याग्रह का क्षेत्र असीमित है। जहाँ निष्क्रिय प्रतिरोध राजनीतिक आधारों को प्राप्त करने तक सीमित है वही सत्याग्रह का प्रयोग इन सभी क्षेत्रों में .सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक में किया जा सकता है। निष्क्रिय प्रतिरोध प्रभाव में सीमित है, परन्तु सत्याग्रह से सारा ब्रह्माण्ड प्रभावित हो सकता
4. निष्क्रिय प्रतिरोध निर्बलों का अस्त्र है जबकि सत्याग्रह वीरों का अस्त्र है। निष्क्रिय प्रतिरोधी अहिंसा का सहारा नीति के रूप में लेता है जबकि सत्याग्रह अहिंसा का पालन धर्म के में करता है।
5. निष्क्रिय प्रतिरोध में विरोधी को संग करना अथवा पीड़ा पहुंचाना शामिल है। यह विरोधी को विवश करके वांछित मार्ग पर लाना चाहता है। इसमें विरोधी के प्रति प्रेम की भावना नहीं होती दूसरी ओर सत्याग्रह में त्याग की भावना होती है। वह विरोधी को पीड़ा नहीं पहुँचाता, वह स्वयं दुःख झेलता। सत्याग्रही प्रेम से ओत-प्रोत होता है वह आत्मा की शक्ति से विरोधी को जीतता है। वह मारने के स्थान पर मरने को तैयार रहता है। वह उसका हृदय परिवर्तन करता है।
6. निष्क्रिय प्रतिरोध अन्याय और अत्याचार का सामना सुदष्ढता से नहीं कर सकता जबकि सत्याग्रह इनका सामना सुदष्ढता से कर सकता है।
7. निष्क्रिय प्रतिरोधी साधनों की शुद्धता पर बल नहीं देता। वह अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए आवश्यकता पड़ने पर हिंसा के प्रयोग की आकांक्षा करता है। दूसरे शब्दों में, निष्क्रिय प्रतिरोध में सर्वथा शान्ति धारणा किये रहने की अनिवार्यता नहीं जबकि सत्याग्रह में न केवल साध्य ही शुद्ध और पवित्र चाहिए बल्कि साधन भी शुद्ध और पवित्र होने चाहिए। सत्याग्रह में हिंसा के प्रयोग की कल्पना भी हिंसा है। इसमें शान्तिपूर्ण उपायों का अनुसरण अनिवार्य है।

8. प्रतिरोध निषेधात्मक एवं गतिहीन है, परन्तु सत्याग्रह सकारात्मक एवं गतिशील है। निष्क्रिय प्रतिरोधी बिना किसी फल की प्राप्ति के कष्ट सहन करता है, फल प्राप्त न होने पर वह और निराश हो जाता है। दूसरी और सत्याग्रही के त्याग का फल कभी निष्फल नहीं होता, वह हमेशा प्रसन्नचित है निराशा तो उससे कोसों दूर रहती है। और सत्याग्रही हमेशा सफल होता है।

9. निष्क्रिय प्रतिरोध नैतिक दृष्टि से निर्बल है, सत्याग्रह नैतिक दृष्टि से सुदृढ़ है।

10. निष्क्रिय प्रतिरोध युद्ध का नैतिक विकल्प नहीं, सत्याग्रह युद्ध का नैतिक विकल्प है।

11. निष्क्रिय प्रतिरोध प्रत्येक स्थिति में सत्य के पूर्ण आचरण की आवश्यकता नहीं मानता जबकि सत्याग्रह के लिए सत्य के अतिरिक्त बाकी सब बेकार है। हर स्थिति में सत्य का आचरण करना सत्याग्रह की आवश्यक शर्त है।

12. सत्याग्रह अहिंसा का मार्ग है लेकिन निष्क्रिय प्रतिरोध में हिंसा के लिए पर्याप्त स्थान है क्योंकि इसमें मौका देखकर शस्त्र का प्रयोग किया जा सकता है परन्तु सत्याग्रह में अनुकूल परिस्थिति रहने पर भी बल प्रयोग वर्जित है।

13. सत्याग्रह का आधार गीता का निष्क्रिय कर्मयोग है लेकिन निष्क्रिय- फलवादी है। यह लक्ष्य प्राप्ति का सिद्धान्त है। इसमें समयानुसार साधन को बदला जा सकता है, जबकि सत्याग्रह का आधार साध्य व साधन की एकता है।

4.4.5 सत्याग्रह की अवधारणा और तकनीकी

सत्याग्रह अहिंसात्मक प्रतिरोध से कहीं अधिक व्यापक है। सब प्रकार के अन्याय, उत्पीड़न और शोषण के विरूद्ध आत्म-बल का प्रयोग ही सत्याग्रह है। गांधी का राजनीतिक दर्शन आध्यात्मिकता से प्रेरित था और वे धर्म और राजनीति के पृथक्करण के पक्ष में नहीं थे। यदि सरकार जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती और बईमानी तथा आतंकवाद का समर्थन करती है तो उसकी अवज्ञा करना आवश्यक हो जाता है, पर जो अपने अधिकारों की रक्षा करना चाहता है उसे सब प्रकार के कष्ट सहने के लिए तैयार रहना चाहिए।

गांधी के सत्याग्रह के परिवेश में केवल व्यक्ति ही नहीं आते, वरन् समूह, समाज और सम्पूर्ण मानव जाति ही सम्मिलित है। सत्य का पालन धर्म, राजनीति, अर्थनीति, परिवार नीति सब में होना चाहिए। वास्तव में यह सबसे बड़ी देन थी कि उन्होंने व्यक्तिगत आधार पर सत्य की खोज के लिए किये जाने वाले प्रयासों का संबंध सामाजिक हित से जोड़ दिया।

महात्मा गांधी के तीन अमोघ अस्त्र थे- सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह। इनका प्रयोग उन्होंने देश को शांतिमय तरीके से स्वराज्य तक पहुंचाने में किया। सामाजिक और आर्थिक कोई भी क्षेत्र इन साधनों के स्पर्श से बच सकता है।

सत्याग्रह की विभिन्न प्रणालियां है, इनकी तकनीके बहुमुखी है। सबसे पहले सत्याग्रही समस्या का विवेचन करता है अर्थात सावधानीपूर्वक बिना किसी पूर्वाग्रह के शिकायत का अध्ययन करता है। सत्याग्रही का कर्तव्य है कि वह पहले अन्यायी को समझाए-बुझाए। समझाने-बुझाने के सारे प्रयासों में असफल हो जाने के बाद वह जिस अन्याय के विरूद्ध मोर्चा लेना चाहता है उसका आवश्यक प्रचार प्रारम्भ करता है। सत्याग्रह आन्दोलन में गोपनीयता का

अभाव रखा जाता है। सत्याग्रही बुराई का विरोध करता है, व्यक्ति का नहीं, सत्याग्रह आन्दोलन में अन्तर्रात्मा की आवाज का विशेष महत्व है। सत्याग्रही को नैतिक युद्ध की सारी चालों की जानकारी होनी चाहिए। सहिष्णुता उसमें कूट-कूटकर भरी होनी चाहिए।

गांधी का विश्वास था कि "अन्यायपूर्ण नियम को स्वीकार करना स्वतंत्रता का अनैतिक विनियम है"। सत्याग्रह की तकनीक किसी रूप में असंवैधानिक नहीं। यदि यह कहा जाए कि सत्याग्रह में संवैधानिक कानूनों की अवज्ञा असंवैधानिक है तो यह भी मिथ्या है क्योंकि कानूनों का मुख्य उद्देश्य सामाजिक जीवन को व्यवस्थित करना है तथा अन्याय और अत्याचार को समाप्त करना है। गांधी ने कहा कि "सविनय अवज्ञा को दबाने का प्रयास आत्मा को बंदी बनाने का प्रयास है।" यह ध्यान रखने की बात है कि सत्याग्रह तभी आरम्भ किया जाता है जब अन्याय को दूर करने में संवैधानिक तरीके असफल हो जाते है।

सत्याग्रह का मूल्यांकन

सत्याग्रह को शुरू किये हुए 100 वर्ष पूरे हो गए उसे गांधी का विरोध करने का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना जाता है, इसने भारत की आजादी के आन्दोलन में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया था। इसे विरोध करने का शांतिपूर्ण तरीका बताया गया लेकिन दूसरी ओर अनेक आधारों पर इसकी आलोचना भी की जाती है- वे निम्न है

1. सत्याग्रह का प्रयोग सभी परिस्थितियों में नहीं किया जा सकता- अत्याचारी शासकों के विरूद्ध इसका प्रयोग सफल नहीं होता, जहां स्वतंत्रता मानवता के प्रति आदर और न्याय हो वहां तो सत्याग्रह का प्रयोग सफलतापूर्वक हो सकता है लेकिन निरंकुश तंत्र एवं सैनिक शासकों के सामने यह सफल नहीं हो सकता।
2. युद्ध या आक्रमण का मुकाबला सत्याग्रह से नहीं- कोई भी राष्ट्र अहिंसक साधनों पर निर्भर रहकर अपने देश की एकता एवं अखण्डता और नागरिकों की सुरक्षा नहीं कर सकता और आज के समय हवाई हमले, परमाणु बम एवं मिसाईल तकनीक के युग में युद्ध का मुकाबला सत्याग्रह से सम्भव नहीं है।
3. अहिंसा के अनुरूप नहीं- कई आलोचक कहते है कि अहिंसा का व्यापक अर्थ है मन, वचन एवं कर्म से किसी को कोई हानि न पहुंचाना ही अहिंसा है तो जिन लोगों के विरूद्ध सत्याग्रह किया जाता है उन्हें निश्चित रूप से मानसिक एवं कई बार शारीरिक कष्ट भी पहुंचता है। आलोचक इसे - दबाव मानते है।

4.4 निष्कर्ष

सत्याग्रह गाँधी की एक मौलिक देन है। सत्याग्रह का औचित्य - अनौचित्य या श्रेष्ठता इस बात पर निर्भर करती है कि उसका प्रयोग किस प्रकार के व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। लेकिन व्यवहार में अनेक बार अवांछित तत्वों द्वारा अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु जो कार्यवाही की जाती है उसे ही सत्याग्रह का नाम दे दिया जाता है और इसी कारण सत्याग्रह की आलोचना की जाती है। वास्तव में दोष सत्याग्रह के नहीं,वरन् सत्याग्रह को प्रयोग में लाने वाले व्यक्तियों के है। इस संबंध में यह स्मरणीय है कि स्वयं गांधी द्वारा सत्याग्रह के नियम और सत्याग्रही के

गुणों का उल्लेख किया गया था और यदि उनका पालन किया जाय, तो सत्याग्रह निश्चित रूप से श्रेष्ठ, नैतिक, अहिंसक और अत्यधिक प्रभावशाली शस्त्र है।।

4.5 अभ्यास प्रश्न

1. सत्याग्रह का अर्थ क्या है इसके प्रमुख साधनों का वर्णन कीजीये।
2. सत्याग्रह की अवधारणा का विश्लेषण कीजिए।
3. सत्याग्रह के मुल सिद्धान्तों का विश्लेषण कीजिए।
4. सत्याग्रह के विभिन्न स्वरूपों को समझाईये।
5. सत्याग्रह व निष्क्रिय प्रतिरोध के अन्तर पर लेख लिखिए।

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गाँधी एम.के. सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, नवजीवन पब्लिशिंग अहमदाबाद, 1995
2. गाँधी एम.के. साल्ट सत्याग्रह नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 959
3. उम्मन, टी.के. प्रोटेस्ट एण्ड चेंज : स्टडीज इन सोशल मूवमेंट्स, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1990
4. कुमार बी. अरूण, गांधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008
5. चटर्जी, मारग्रेट, गांधी एण्ड द चैलेंज ऑफ रिलिजियस डाइवर्सिटी, प्रोमिला & कम्पनी, प्रकाशक, नई दिल्ली, 2005
6. वेबर थॉमस, गांधी एज डिसीप्लिन एण्ड मेन्टोर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस. नई दिल्ली, 2007
7. रोलैण्ड रोमन, महात्मा गाँधी, रूपा & कंपनी, नई दिल्ली, 2007
8. वी.पी. वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 2002

इकाई- 5
बुनियादी शिक्षा के विभिन्न आयाम

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 बुनियादी शिक्षा के लक्ष्य

5.3 स्व-शिक्षा के आदर्श

5.4 शिक्षा के रूप

5.5 नवीन शिक्षा का पाठ्यक्रम

5.6 राष्ट्रीय शिक्षा

5.7 राष्ट्र का पुर्नगठन

5.8 गाँधीवादी शिक्षा के आयाम

5.8.1 शिक्षा तथा सत्याग्रह

5.8.2 मूल्य शिक्षा

5.8.3 हस्तकला तथा शिक्षा

5.8.4 कृषि शिक्षा

5.9 निष्कर्ष

5.10 अभ्यास प्रश्न

5.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप सक्षम हो सकेंगे

- बुनियादी शिक्षा की धारणा को जानने में।
- स्व-शिक्षा के आदर्श को जानने में।
- गाँधी द्वारा रेखित शिक्षा की पाठ्य-वस्तु को जानने में।
- गाँधीवादी शिक्षा के विभित्र आयामों को जानने में।

5.1 प्रस्तावना

भारत में शिक्षा को आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया माना गया है। यह ज्ञान का व्यावहारिक तथा गतिशील स्वरूप है। शिक्षा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक ज्ञान के प्रवाह का माध्यम रही है, एवं व्यक्ति के सामाजिक तथा व्यक्तिगत स्वरूप को शिक्षा द्वारा प्रकट किया जा सकता है। आज नयी शताब्दी में संयुक्त तंत्र की प्रवृति का अनुसरण किया जा रहा है। भौगोलिक तथा सांस्कृतिक सीमाओं को समाप्त किया जा रहा है। इसके परिणाम स्वरूप पूरे विश्व में दूरियाँ कम की जा रही हैं तथा हिंसात्मक विधियों को गति प्राप्त हो रही है। आज

समाज में हिंसा को सामान्य घटना माना जाता है।उसका यह कारण है कि आज की शिक्षा में नीति शास्त्र और मूल्यों का कोई सार्थक स्थान नहीं है। आधुनिक शिक्षा केंद्र दुकान की भाँति काम कर रहे हैं जिनका मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना है न कि छात्रों को देश का उत्तम नागरिक बनाना। शिक्षा विचारों के संचरण का साधन है तथा उन विचारों के अनुसार चरित्र तथा समाज का विकास करने का साधन है। शिक्षा एक व्यक्ति के जीवन दर्शन को उसके व्यक्तिगत आदर्शों तथा लक्ष्यों से ही नहीं जोड़ती है, बल्कि उसको समाज से भी जोडती है। गाँधी जी का दर्शन तथा उनके विचार भी उनके संचरण का अधिकतम सशक्त साधन हैं। इसी कारण गाँधी जी को सच्चे अर्थो में एक महान, शाश्वत शिक्षक माना जाता है। गाँधी जीं के अनुसार यदि हमें समाज की वर्तमान समस्याओं से लड़ना है तो इसका हल हमें शैक्षिक प्रणाली में ढूँढना होगा। उनके शैक्षिक विचार मानव क्रिया के प्रत्येक क्षेत्र में प्रासंगिक हैं। गाँधी जी ने सच्ची शिक्षा उसे माना है जो बालकों में सीखने की प्राकृतिक शक्ति को विकसित करे।

5.2 लक्ष्य तथा उद्देश्य

गाँधी जी की बुनियादी शिक्षा या नई शिक्षा का लक्ष्य मानव. तथा आत्मा

शिक्षित करना है। उनके अनुसार सामान्य शिक्षा केवल मानव मस्तिष्क को ही विकसित करती है। नई शिक्षा केवल सूत कातने या फर्श साफ करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि मानव व्यक्तित्व के, तीन गुणों के द्वारा बौद्धिक विकास के उद्देश्य को पूरा करती है।

नई शिक्षा की योजना शिक्षित बालकों को सत्यवादी, प्रबल चेतना शक्तियुक्त तथा स्वस्थ बनायेगी। उनके हृदय ग्रामीण भारत में रहेंगें। उनके मस्तिष्क तथा हाथ समान तरीके से होंगे तथा ईर्ष्या, स्वार्थ और विश्वासघात की भावना समाप्त होगी, उनके अधिक तीव्र मस्तिष्क होंगेतथा ईमानदारी के पथ को चुनने की ओर अग्रसर होंगे। वे स्वार्थ रहित सेवा तथा सहयोग के भण्डार होंगे।

5.3 स्व-शिक्षा के आदर्श

गाँधी जी के अनुसार नई शिक्षा देश की वर्तमान परिस्थिति का परिणाम तथा समाज की आवश्यकता पूर्ण करने में सक्षम है। यह नई शिक्षा निम्न आदर्शो पर कार्य करेगी:-

- संपूर्ण शैक्षिक प्रणाली आत्मनिर्भर होगी।
- इस शिक्षा में श्रम पर अन्तिम स्तर तक पूर्ण ध्यान दिया जायेगा।
- शिक्षा का माध्यम हिंदी होगा।।
- सामाजिक या धार्मिक शिक्षा का कोई स्थान नहीं होगा बल्कि स्थान पर बुनियादी नैतिक शिक्षा दी जायेगी।
- समस्त आयु समूहों तथा महिलाओं एवं पुरूषों को प्रवेश दिया।
- समस्त शैक्षिक प्रणाली को एक समान करने के लिये इस प्रणाली में नामांकित होने वाले सभी लोगों को क्षेत्रीय भाषा सीखनी होगी।

5.4 शिक्षा का स्वरूप

इस योजना में बालकों को केवल शारीरिक तथा मानसिक शिक्षा ही नहीं दी जानी चाहिये बल्कि धार्मिक शिक्षा भी दी जानी चाहिये। शारीरिक प्रशिक्षण में बालकों को खेती, बुनाई आदि में पूर्ण दक्षता प्राप्त करनी चाहिये। इससे पर्याप्त शारीरिक विकास होगा। इनके अलावा बालकों को स्वस्थ एवं हृष्ट- पुष्ट बने रहने के तरीकों से परिचित करवाया जायेगा ताकि वे सामान्य पीड़ाओ का इलाज घरेलू उपचारो के उपयोग से कर सकें।इस कार्य को पूरा करने के लिये उन्हें स्थानीय शाकों तथा झाडियों की जानकारी दी जानी चाहिये।

मानसिक विकास के लिये छात्रों को देश की मुख्य भाषाएँ जैसे बंगाली, गुजराती, हिंदी, संस्कृत, उर्दू आदि सिखाई जाऐंगी तथा शिक्षा के प्रथम तीन वर्षो में अग्रेंजी भाषा को न्यूनतम प्राथमिकता दी जायेगी। गणित विषय को सीखने के लिये इसकी समस्त तकनीको का समावेश करना होगा जो कि पारंपरिक विधियों पर आधारित हों, जैसे पहाड़े, लेखा-बही आदि। बालकों को इतिहास,भूगोल तथा खगोल विज्ञान के साथ-साथ रसायन विज्ञान की आरम्भिक धारणा भी पढ़ायी जायेगी। धार्मिक शिक्षा में छात्रों को यह पढ़ाया जायेगा कि किसी व्यक्ति का केवल चरित्र ही उसके धर्म का प्रतिबिंब होता है। इस शिक्षा नीति में प्राथमिक स्तर तक शिक्षा का माध्यम मौखिक होगा। यदि यह योजना वास्तविकता को प्राप्त कर ले तो इस योजना के अंतर्गत दस वर्षो तक शिक्षा ग्रहण करने वाला छात्र स्नातक के समकक्ष होगा। प्रगति के परीक्षण का तरीका भिन्न होगा। छात्र के आल-विश्वास में उसकी सफल शिक्षा प्रतिबिम्बित होगी।

5.5 नवीन शिक्षा का पाठ्यक्रम

महात्मा गाँधी ने एक ऐसी शिक्षा योजना की रूपरेखा दी जो कि प्रत्येक भारतीय बालक के विकास में सक्षम थी। इसकी योजना इस प्रकार थी

1. कम से कम 8 वर्षो तक सह-शिक्षा दी जायेगी।
2. शारीरिक कार्य को शिक्षा का भाग माना जायेगा।
3. बालक शारीरिक कार्य अपनी रूचि के अनुसार निश्चित करें।
4. सामान्य शिक्षा केवल तब ही प्रारंभ की जायेगी जब छात्र को इसका ज्ञान होगा।
5. प्रारंभिक शब्द-ज्ञान का आरंभ ज्यामितिय आकृतियों के ज्ञान से किया जा सकता है तथा जब इस कार्य के लिये उंगलियों का प्रयोग किया जा सके, तब वर्ण सिखाये जा सकते हैं।
6. यह महत्वपूर्ण है कि छात्र को लिखने से पहले पढ़ना सीखना चाहिये तथा चित्रों को समझना चाहिये।
7. इस प्रकार की शिक्षा बालकों को मौखिक रूप से 8 वर्षो तक दी जानी चाहिये।
8. बालक का हृदय पढ़ते समय अवरूद्ध नहीं होना चाहिये।
9. कुल मिलाकर शिक्षा में आकर्षण होना चाहिय तथा छात्रों को यह खेल जितनी रूचिकर लगनी चाहिये।
10. भाषा का माध्यम अनिवार्य रूप से मातृभाषा होनी चाहिये।

11. बालकों को हिंदी, उर्दू राष्ट्रीय भाषा के रूप में पढ़ाई जानी चाहिये।
12. धार्मिक शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिये जो कि शिक्षक के छात्रों के साथ व्यवहार तथा अन्त: क्रिया द्वारा प्राप्त की जानी चाहिये।
13. इस शिक्षा की अगली समयावधि 9 वर्ष से 16 वर्ष होनी चाहिये।
14. यदि संभव हो तो सह-शिक्षा को ही आगे तक चलाया जाये।
15. इस अवधि में यदि छात्र हिंदू हों तो संस्कृत और यदि मुस्लिम हों तो अरबी भाषा पढ़ाई जानी चाहियें।
16. शिक्षा के इस ब्लॉक में शारीरिक शिक्षा पर बल दिया जाये तथा अध्ययन निर्देशों को भी बढ़ाया जाये।
17. इस दौरान यदि कोई छात्र पैतृक व्यवसाय को देखता है तो उसे उसमें दक्ष करने के प्रयास किये जाने चाहिये।
18. इस अवधि के अंत से पहले, छात्र को इतिहास, भूगोल, वनस्पति शास्त्र, गणित आदि पर स्वामित्व प्राप्त हो जाना चाहिये।
19. इसी प्रकार इस अवस्था में छात्राओं को सिलाई,बुनाई, तथा पाक कला सीखनी चाहिये।
20. नवीन शिक्षा की तीसरी अवस्था 16 से 25 वर्ष तक होगी।
21. इस अवधि में छात्रों को शिक्षा इच्छानुसार दी जानी चाहिये।
22. इस बात का निश्चय करने का प्रयास किया जाये कि शिक्षा का खर्च 9 वर्ष के बाद छात्र स्वंय उत्पन्न कर सकें।
23. विद्यालय तथा शिक्षा केंद्रों को रख-रखाव के लिये न्यूनतम धनराशि की होनी चाहिये।
24. इस दौरान अंग्रेजी का भी अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि अन्य देशो तथा राज्यों के साथ संप्रेषण के लिये अंग्रेजी की आवश्यकता होती है।
25. महिलाओं के लिये शैक्षिक सुविधायें पुरूषों की भाँति ही होनी चाहिये किंतु विशिष्ट परिस्थिति में ध्यान देना चाहिये।

5.6 राष्ट्रीय शिक्षा

गाँधी जी के अनुसार "यह एक छोटा कार्य नहीं है वास्तव में यह एक कठिन कार्य है जो संपूर्ण जीवन की शिक्षा की माँग कर सकता है।" जब संपूर्ण जीवन इसको समर्पित हो तो हमें एक स्वतंत्र, स्वप्रेरित तथा स्वनियंत्रित दर्शन की प्राप्ति होगी। यह एक ऐसा का है जहाँ संवेग तथा की सहभागिता होती है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये संपूर्ण जीवन का समय समर्पित करना पड़ता है। वास्तविक राष्ट्र निर्माण इसी प्रकार हो सकता है।

यह शिक्षा दर्शन संपूर्ण देश में फैल जायेगा तथा संपूर्ण देश समाज के ही उपयोगी रहेगा और संपूर्ण जनता के लिये भी अत्यधिक महत्वपूर्ण होगा। इस शिक्षा का पहला पाठ तथा स्वास्थ्य होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य शिक्षा की कमी के कारण हमारे देश में असामयिक मौत होती है। इस समस्या का एकमात्र इलाज स्वास्थ्य शिक्षा है।

इस शिक्षा दर्शन का दूसरा स्तर भोजन तथा वस्त्र की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना होगा। कोई भी व्यक्ति भोजन तथा वस्त्र के बिना नहीं रह सकता है, यह सभी के लिये

प्रकार का कार्य जैसे खाना पकाना से लेकर सिलाई तथा हल चलाना आदि के लिए आवश्यक है। अर्थशास्त्र, गणित, पशुपालन आदि की मौलिक धारणा इस पाठ्यक्रम के दौरान सीखी जा सकती है।

यदि कुछ रह जाये उसे शिक्षा की तीसरी अवस्था में पूर्ण किया जा है। जैसे एक बालक किसी भाषा का व्याकरण उस भाषा को बोलकर सीखता है इसी प्रकार भूगोल का अध्ययन भ्रमण तथा यात्रा के द्वारा किया जा सकता है। शाब्दिक अर्थो में उस व्यक्ति को स्नातक नहीं कहा जा सकता जिसने अपने देश की यात्रा नहीं की हो।

यह आवश्यक नहीं है कि समस्त शिक्षा पारंपरिक विद्यालय विधियों द्वारा प्राप्त की जाये। व्यक्ति की आवश्यकता के अनुसार किये गये बौद्धिक निर्णय अध्ययन को वास्तविक तथा सरल बनाता है। इसलिए परीक्षा की कोई आवश्यकता नहीं होगी। इस प्रकार की शिक्षा के साथ प्रारंभ से ही शिक्षा भी अवश्य दी जानी चाहिये। यह शिक्षा प्रसंग संदर्भ के साथ दी जाये बजाय सैद्धांतिक विधियों के द्वारा दिये जाने के। धार्मिक शिक्षा आध्यात्मिक तथा सामाजिक दोनों प्रकार की है। ये एक ही सिक्के के दो तथा इनको एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। शिक्षा में धर्म का स्थान है तो विश्लेषण को भी में महत्व दिया जाना चाहिये।

इसके अतिरिक्त विज्ञान की भी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। समाज सेवा का यह सफल माध्यम है। विज्ञान तथा कला दोनों जीवन में महान संतोष देते हैं तथा शिक्षा की बाद की अवस्थाओं में इनको समाविष्ट किया जाना चाहिये। गाँधी जी ने राष्ट्रीय शिक्षा की बात अपने उन भाषण में की जहाँ उन्होंने कहा कि उद्योग तथा धार्मिक मूल संपूर्ण शिक्षा को प्रभावित करते हैं जैसे यूनानियों के लिये संगीत तथा "माइनेजियम " में सब कुछ समावेशित हो जाता था इसी प्रकार हम उद्योग तथा धर्म से लगभग सभी कुछ सीखते हैं। ज्ञान तथा शिक्षा जीवन से ही प्राप्त किये जाने चाहिये। हम शिक्षा प्रणाली से भी यहीं चाहते हैं।

5.7 राष्ट्र का पुनर्गठन

गाँधी जी ने यह घोषणा की थी कि नवीन शिक्षा उनके जीवन का अंतिम किन्तु अधिकतम महत्वपूर्ण कार्य था। उन्होंने कहा यदि ईश्वर ने उनको यह कार्य पूरा करने का अवसर दिया तो भारत का संपूर्ण मानचित्र बदल जायेगा। उनका यह विचार था कि वर्तमान शिक्षा केवल शिक्षित लोगों का मूल्यहीन वर्ग तैयार कर रही है। केवल पुस्तक ज्ञान मूल्यवान लोगों को नहीं बना सकता है। देश को साक्षर लुहार, सुनार, किसान तथा

कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। गाँधी जी ने कहा कि नई शिक्षा माता के गर्भ में भ्रूण के विकास के साथ ही प्रारंभ हो जायेगी। यदि माता कठोर, परिश्रमी, सुव्यवस्थित तथा आत्म-संयमी है तो माता के चरित्र के ये सब लक्षण अगली पीढ़ी में स्वत: ही चले जायेंगे। इस प्रकार से प्रशिक्षित किये गये बालक को मोटे गद्दे पर बैठने पर खुशी नहीं होगी तथा फर्श साफ करने पर कोई शर्म नहीं महसूस होगी। उसकी कोई भी किया बेकार नहीं होगी। उसका मस्तिष्क तथा शरीर समन्वित होकर एक साथ कार्य करेंगें। इससे भुखमरी तथा गरीबी को कम करने में सहायता मिलेगी। गाँधी जी का विश्वास था कि नई शिक्षा तथा गाँव या कुटीर उद्योग एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। 5.8 गाँधीवादी शिक्षा के आयाम

5.8.1 शिक्षा तथा सत्याग्रह

सत्याग्रह शिक्षा का सर्वोच्च तथा सर्वोत्तम रूप है। इस प्रकार की शिक्षा सामान्य शिक्षा से पहले दी जानी चाहिये। सत्य तथा प्रेम में छुपी हुई शक्तियों को बालक को सबसे पहले सीखना चाहिये। वास्तविक शिक्षा को यह निश्चित करना चाहिये कि प्रत्येक बालक जीवन संघर्ष में यह सीखता है कि प्रेम, घृणा तथा हिंसा को पराजित कर सकता है।

5.8.2 मूल्य शिक्षा

गाँधी जी ने पुस्तकों के माध्यम से दी जाने वाली शिक्षा की अपेक्षा मूल्य शिक्षा को उत्कृष्ट माना था। मूल्य शिक्षा मौलिक आवश्यकता है। एक छात्र अपने अच्छे चरित्र और व्यवहार के बहुत लाभ मिलेगा। धर्म तथा मूल्य पर विचार ही नहीं किया जाना चाहिये, उन्हें चरित्र तथा व्यवहार का हिस्सा बनाकर दैनिक जीवन में प्रतिबिम्बित करना चाहिये।

5.8.3 हस्तकला तथा शिक्षा

गाँधी जी ने वर्धा शिक्षा योजना में इस बात पर बल दिया कि कोई भी विषय जो कताई के पहिये (Spinning wheel) से संबंधित नहीं हो, छात्रों को नहीं पढाया जाना चाहिये। इससे उनका अर्थ था कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन आवश्यक था। उनका सपना था कि बौद्धिक प्रशिक्षित मस्तिष्क तथा हृदय सभी संघर्षो में विजयी हो सकता है। गाँधी जी का विश्वास था कि यदि वे कवि होते तो अपनी पाँचो उँगलियों का उपयोग करते अर्थात उनकी मानसिक तथा शारीरिक क्षमताओं का अधिकतम उपयोग होता।

उन्होंने कहा कि जो लोग अपने हाथों को प्रशिक्षित नहीं करते, केवल बौद्धिक किया में विश्वास करते हैं, वे संगीत से हीन होते हैं तथा उनके जीवन में तारतम्य का अभाव होता है और उनकी क्षमताएँ निश्चित रूप से अविकसित अवस्था में होती है। केवल पुस्तकीय ज्ञान से एकाग्रता की प्राप्ति नहीं हो सकती है। वे शब्द जिनसे अर्थहीन ध्वनि निकलती है, एक निश्चित समय बाद विचलित हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप मस्तिष्क तथा शरीर अपने कार्य करने में असफल हो जाते हैं। इसी कारण हस्तकला को शिक्षा में प्राथमिकता दी जानी चाहिये। कभी-कभी हस्तकला शिक्षण के दौरान पाठन तथा लेखन कौशल (Reading and writing skill) को अधिक महत्व नहीं दिया जाता है। इसके फलस्वरूप गाँवों में कुछ कौशलों के लिए नीचा देखना पड़ता है। वर्णाश्रम व्यवस्था के विकृत होने के कारण हमें यह विश्वास करना पड़ता है कि बढ़ई, बुनकर, मोची आदि निम्न स्तर की जातियाँ हैं (वर्णाश्रम व्यवस्था में समाज को व्यवसाय के आधार पर 4 वर्णो में बाँटा गया था)। हस्तकला तथा कौशलों को बौद्दिक कौशल की अपेक्षा निम्न स्तर का माना जाता था, इसी कारण देश महान अन्वेषकों जैसे कौम्पटन तथा हरग्रीव पैदा करने में असफल रहा है। यदि हस्तकला तथा अन्य कौशलों को भी बौद्धिक शिक्षा के समान दर्जा दिया जाता तो हमारे कलाकारों में बहुत से अन्वेषक भी हो सकते थे।

5.8.4 कृषि शिक्षा

नवीन शिक्षा, गाँधी जी के अनुसार एक अपूर्ण मनुष्य को पूर्ण बनाती है।फल तथा सब्जियों को उगाना केवल शारीरिक श्रम नहीं है किंतु मस्तिष्क को भी शिक्षित करता है। अनाज उत्पादन लाखों भारतीयों की आवश्यकता की पूर्ति करता है। नवीन शिक्षा प्रणाली में शिक्षक पहले दर्ज का हस्तकला विशेषज्ञ होगा।ग्रामीण युवक गाँवों में ही रहेंगे तथा अपने शिक्षक के निर्देशन में अपने लिए आवश्यक सामग्री का उत्पादन करेंगें। इससे लोगों को निःशुल्क शिक्षा मिलेगी। इससे शोषण का समापन होगा क्योंकि लोग को अपने उत्पाद का पूर्ण अधिकार होगा तथा उसके स्वंय मालिक होंगे।

5.9 निष्कर्ष

यदि हमें भारत तथा विश्व की वर्तमान समस्याओं का हल ढूंढना है तो हमें, जी के सिद्धांतो को याद करना होगा चाहे हम पसंद करे या नहीं। रूस के पतन के समय जो कभी सर्वश्रेष्ठ था, मिखाईल गोर्वाशेव ने कहा था "हमें विकास की विरोधाभासी प्रकृति को मस्तिष्क में रखना होगा। हमें प्रकृति तथा उपभोक्तावाद के बीच तनाव को भी दिमाग में रखना होगा। मैं ऐसे समाज की कल्पना करता हू ए जहाँ प्रकृति के साथ सही संतुलन बनाया गया है। मैं ऐसे राष्ट्र की कल्पना करता हूँ जहाँ नैतिक संतुलन हो- एक ऐसा राष्ट्र जिसमें वर्षो पुरानी परंपराएँ तथा नैतिक मूल्य पुनर्जीवित हो गये हैं तथा इन पुराने मूल्यों को नये मूल्य और अधिक समृद्ध बना रहे हैं। ' यह भाषण संक्षिप्तता गाँधीवाद को प्रतिबिम्बित करता है। जहां नीति शास्त्र तथा राष्ट्र को महत्व दिया गया है। स्वतंत्रता के बाद भारत सर्वोच्च शक्ति बनने के कगार पर खड़ा है तथा विश्व की आर्थिक सर्वोच्च शक्ति बन रहा है। ग्रामीण भारत के लाखों लोगों की समस्याओं का समाधान विशेष रूप से मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति आत्म-निर्भरता तथा विकास आदि केवल नवीन शिक्षा के पथ में ही निहित हैं। दर्शन की प्रासंगिकता को आज की शिक्षा नीती का नारा माना जा सकता है। यह नीती इस तथ्य पर आधारित है कि सभी के लिये सामाजिक न्याय तथा समानता के लक्ष्य की प्राप्ति भी केवल शिक्षा के द्वारा ही की जा सकती है। गाँधी जी के अनुसार शिक्षा सामाजिक क्रांति का माध्यम है। उन्होंने प्रयोगों द्वारा सिद्ध भी कर बौद्धिक रूपांतरण के बिना सामाजिक परिवर्तन संभव नहीं है। इसी कारण उन्होंने दक्षिणी अफ्रीका में क्रूरता के विरोध में लड़ने के लिये तथा बाद में भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष में शिक्षा को एक माध्यम बनाया था।

गाँधी जी के शिक्षा के दर्शन का सार है कि शिक्षा केवल उत्पादक कार्य के द्वारा दी जानी चाहिये। इस उत्पादक कार्य में शारीरिक तथा बौद्धिक अभ्यास दोनों समाविष्ट होने चाहिये। यह जीवन में स्वतंत्रता तथा आत्म-निर्भरता का सार है। गाँधी जी द्वारा नैतिक शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान देना तथा 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीती में भी महत्व देना हमें यह संदेश देता है कि भावी पीढ़ी में मानवीय मूल्यों विकसित करने की दिशा में एक तीव्र प्रतिबद्धता स्थापित करनी है। उन्होंने वसुधैव कुटुम्बकम की बात भी कही,। उन्होंने यह भी विचार दिया है कि एक ग्रामीण विश्वविद्यालय बुनियादी शिक्षा से संबंधित विभिन्न संस्थाओं की से चलाया जायेगा। किंतु विभिन्न समस्याओं के कारण, गाँधी जी का यह स्वप्न साकार नहीं हो सका कुल

मिलाकर गाँधी जी की नई शिक्षा उच्च नैतिक चेतना का प्रतीक है, जिसको लागू करना आज भारत में कार्य है।

5.10 अभ्यास प्रश्न

1. बुनियादी शिक्षा की धारणा तथा उद्देशयों की व्याख्या कीजिये।
2. बुनियादी शिक्षा की पाठ्य-वस्तु की व्याख्या कीजिये।
3. गांधी जी के बुनियादी शिक्षा के दर्शन की व्याख्या कीजिये।

5.11 संदर्भ ग्रन्थ

1. पटेल एम. एस., दी एडुकेष्नल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गांधी, नवजीवन पब्लिषिंग हाउस अहमदाबाद, 1958
2. चटर्जी, मारग्रेट, गांधी एण्ड द चैलेंज ऑफ रिलिजियस डाइवर्सिटी, प्रोमिला & कम्पनी, प्रकाशक नई दिल्ली, 2005
3. वेबर थॉमस, गांधी एज डिसीप्लिन एण्ड मेन्टोर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2007
4. रोलैण्ड रोमन, महात्मा गांधी, रूपा & कंपनी, नई दिल्ली, 2007

इकाई - 6
रचनात्मक कार्यक्रम

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रम

- 6.2.1 सर्वधर्म समभाव-सभ्यता संघर्ष का प्रतिहार
- 6.2.2 अस्पृश्यता-मानवाधिकार का हनन
- 6.2.3 मद्यनिषेध - मानव गरिमा को बढ़ाना
- 6.2.4 खादी -प्रत्येक नागरिक में आत्म सम्मान जगाना
- 6.2.5 स्थानीय आत्मनिर्भरता हेतु ग्रामीण उद्योग
- 6.2.6 ग्राम सफाई और सामूहिक सुरक्षा के लिए दृढ़ होना
- 6.2.7 नागरिक प्रशिक्षण के लिए बुनियादी शिक्षा
- 6.2.8 प्रौढ़ शिक्षा और राष्ट्र निर्माण में भागीदारी
- 6.2.9 महिलाऐं - समान भागीदार के रूप में
- 6.2.10 स्वास्थ्य और शुद्धता की शिक्षा
- 6.2.11 विरासत और सामाजिक सम्बद्धता के संरक्षण हेतु प्रान्तीय भाषा
- 6.2.12 एकता व समान सोच के लिए राष्ट्रीय भाषा
- 6.2.13 आर्थिक समानता - सामाजिक कल्याण की पूर्व शर्त
- 6.2.14 कृषि स्थिरता संरक्षण हेतु किसान
- 6.2.15 उत्पादन व वितरण में श्रमिकों की सहभागिता
- 6.2.16 आदिवासी - मानव भिन्नता से पीड़ित
- 6.2.17 कुष्ठ रोग और सहानुभूतिपूर्ण लगाव
- 6.2.18 विद्यार्थी - भविष्य के नेतृत्वकर्ता

6.3 एक नयी सामाजिक व्यवस्था की रूप रेखा : रचनात्मक कार्यक्रम

6.4 विनोबा की रचनात्मक व्याख्या

6.5 रचनात्मक कार्यक्रमों की समकालीन उपादेयता

6.6 मूल्यांकन

6.7 अभ्यास प्रश्न

6.8 संदर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई में आपको महात्मा गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों की जानकारी दी जायेगी। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जानेंगे

- रचनात्मक कार्यक्रम का अर्थ
- रचनात्मक कार्यक्रमों का महत्व
- विनोबा द्वारा रचनात्मक कार्यक्रमों की व्याख्या
- रचनात्मक कार्यक्रमों की समकालीन प्रासंगिकता

6.1 प्रस्तावना

स्वराज के लिए किए जा रहे अहिंसक आन्दोलन में विभिन्न स्तरों पर समाज के सम्पूर्ण विकास के लिए गांधी ने अनेक कार्यक्रम दिए। उन्होने 'स्वराज' शब्द का प्रयोग बार-बार किया जिसका आशय राष्ट्र की राजनीतिक स्वतंत्रता से कहीं अधिक था और व्यक्ति के आर्थिक कल्याण से जुडा था। गाँधी के लिए 'स्वराज' शब्द बहुत भावार्थ और गहन अर्थ रखता था। इसका अर्थ था, भय से मुक्ति, स्व पर अधिकार, राजनीतिक और आर्थिक आत्मनिर्भरता अन्य लोगों की चेतना और सामाजिक संस्थाओं का सम्मान क्योंकि ये संस्थाऐं वर्षो की सामुहिक विचारों और भावनाओं के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आई हैं। गाँधीजी की समाज सम्बन्धी मान्यता ने सामाजिक संस्थाओं की पवित्रता और अनुल्लंघनीयता को पुर्नस्थापित किया हैं। वे जिस आमूल-चूल परिवर्तन की वकालत कर रहे थे वह प्रेम, करूणा, मूल्यों के सम्मान और परम्पराओं पर आधारित था और घृणा, असहिष्णुता, हिंसा (रक्तपात) आदि का पूर्णतया विरोध करता था। उन्होंने राष्ट्र को कर्म की सुविचारित योजना दी जिसे रचनात्मक कार्यक्रम के रूप में जाना जाता है।

6.2 विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रम

इस मॉडल के विकास के लिए गाँधी के सुझाव और एक अहिंसक सामाजिक रूपान्तर तथा व्यक्ति के उद्वार और सशक्तिकरण की जिन तकनीकों को गाँधी ने अपनाया वे किसी भी रूप में तुरन्त पूरी करने अथवा बिना सोचे विचारे करने से सम्बन्धित नहीं थी। आज जिसे रचनात्मक कार्यक्रम के रूप में रजाना जाता है, जिसे गाँधी ने राष्ट्र निर्माण और इसके खोए हुए गौरव को पुन: प्राप्त करने के लिए दिया है, वह बताता है कि परिवर्तन के लिए गाँधी ने स्वयं इंगित किया कि ये कार्यक्रम केवल उदाहरण मात्र हैं।

हमें इन कार्यक्रम पर एक नजर डालनी चाहिए, जिसके तीन मुख्य भाग है

1. व्यक्ति के स्वयं के जीवन और जीवन जीने की पद्वति में सुधार
2. हालांकि पुराना सामाजिक ढ़ाचा मौजूद है लेकिन नये सामाजिक ढाचें के निर्माण के लिए रचानात्मक कार्यक्रम और
3. विशिष्ट सामाजिक बुराइयों के विरूद्व अहिंसक तकनीक के विभिन्न रूपों के प्रयोग का अभ्यास विभिन्न कार्यक्रमों के सावधानीपूर्वक विश्लेषण के बाद जीन शार्प ने गाँधी के दृष्टिकोण की व्याख्या इस प्रकार की गाँधी की मान्यता थी कि आत्मनिर्भर और स्वतन्त्रता की

विशेषताओं वाली समाज व्यवस्था को इस तरह कि विशेषताओं से पूरीपूर्ण आन्दोलन चलाना चाहिए। इसलिए गाँधी ने एक नयी समाज व्यवस्था विकसित करने का विचार दिया, जिससे राज्य व अन्य पुरानी व्यवस्था में स्वेच्छा से स्वतन्त्र रचनात्मक कार्यक्रम चलाऐं जाऐं। उनके प्रयास प्रयोगात्मक थे, इन प्रयासों को पर्याप्त कहने वालों में वे आखिरी थे। रचनात्मक कार्यक्रमों के सिद्वान्त के प्रति उनकी सोच केवल इस दिशा में सुझावात्मक थी, वे सिद्वान्त निर्माता नहीं थे। हालांकि यह एक दिशा-निर्देश ही प्रतीत होता है जो इसे समझने के लिए गंभीर प्रयासों की सामर्थ्य रखता है और इसकी समस्याओं और सम्भावनाओं को ढूंढ निकालता है।

6.2.1 सर्वधर्म समभाव

सभ्यता संघर्ष का प्रतिहार गाँधी ने धर्म को पूरी तरह अनुभव किया कि धर्म का सृजनात्मक स्वरूप सामाजिक मूल्यों के एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। एक नये दृष्टिकोण की वकालत करते हुए उन्होंने लोगों को याद दिलवाया कि धर्म, एक लक्ष्य तक पहुँचने का अभिन्न मार्ग हैं। और वास्तव में जब हम लक्ष्य पर पहुँच जाते हैं तो इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि हमने किस मार्ग को अपनाया था। सभी धर्म प्रेम की शाश्वत शिक्षा देते हैं। अभी तक हमने अपने चारों और दूसरों के धर्म को नीचा दिखाने की प्रवृति को विकसित होते और अपने धर्म का गुणगान करते देखा है। बहुत लोगों की मूल सोच में ही इस बात का अभाव होता है कि विविध परिस्थितियों में सहिष्णुता समाज के ताने बाने के बनाए रखनें में गोंद का काम करती है। वे इस सामान्य से सत्य को भूल जो है कि सहिष्णुता हमें आध्यात्मिक अन्तदृष्टि और भुजाओं को साहस का दृढ़विश्वास देते हैं जिससे विभिन्न धर्मा व विश्वासों के बीच के अवरोधक टूट जाते हें। इससे मानव समझ का दायरा भी बढ़ेगा। इस प्रकार गाँधी ने एक नयी सोच-सर्व धर्म समभाव (सभी धर्मो की समानता) की वकालत की।

गाँधी द्वारा समर्थित 'सर्वधर्म समभाव, सभी धर्मो के प्रति समान व्यवहार की क्रान्तिकारी सोच है और जहाँ प्रत्येक धर्म अपने मत के अनुसार समृद्ध, और आशाओं से पुष्पित हो। भारत और विश्व में अन्य स्थानों पर अस्तित्वमान बहुलवादी धर्म में प्रत्येक धर्म को सम्मान, महत्व और बढ़ावा दिया जाना चाहिए। उभरते बहु जातीय, बहुनस्तीय, बहुभाषायी परिदृश्य में शान्तिपूर्वक एक साथ रहने विकास और शान्ति को सुनिश्चित करने के लिए एक साझा लक्ष्य को पाने हेतु विविधता और बहुलवाद को प्रत्येक व्यक्ति में बढ़ाना और पोषित करना होगा। यह तब तक संभव नहीं होगा जम तक प्रत्येक व्यक्ति अपने विचारों की संकीर्णता को नहीं हटाता और सभी धर्मो के साथ सम्मानपूर्ण व्यवहार करना नहीं सीखता। सम्मान और सहिष्णुता को धर्म का हिस्सा बनना होगा सांमजस्य तथा बंधुत्व को पोषित करने के लिए व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयत्न करने पड़ेगें।

6.2.2 अस्पृष्यता - मानवाधिकार का हनन

गाँधी का मानना था, किसी विशेष समुदाय में जन्म के आधार पर, त्वचा के रंग के आधार पर, व्यवसाय के आधार पर, जनसंख्या के किसी भी हिस्से को पृथक करना

मानवाधिकार का हनन है और मानवता के विरुद्ध पाप है। इसलिए उन वंचित वर्गो के प्रति होने वाले गलत व्यवहार को, साहस व विश्वास से व्यक्तिगत व सामाजिक प्रयास से उन्मूलन करना चाहिए। गाँधी ने कहा कि इन दलित लोगों को रूढ़िवादी और अमानवीय व्यवहार से मुक्ति दिलवानी होगी। उन्होंने लिखा, " प्रत्येक हिन्दू को उनकी परेशानी के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए और उनकी दुःख भरी पृथकता / अलगाव में उनसे मित्रता करनी चहिए पृथकरण का ऐसा डरावना विशालकाय स्वरूप भारत के अलावा शायद और कहीं दिखाई नहीं देता। मैं जानता हूँ कि यह कार्य कितना कठिन है। परन्तु स्वराज रूपी विशाल भवन के निर्माण का यह एक हिस्सा है। और रस्वराज तक जाने का मार्ग फिसलन भरा और संकरा है। इस मार्ग में अनेकों रपटने वाली चढ़ाई और गहरी खाईयां है। इससे पहले कि हम चोटी तक पहुँच सके और स्वतंत्रता की खुली हवा में सांस लें हमें बिना लडखडाऐं बाधा पार कर लेनी होगी।"

दक्षीण अफ्रीका में गाँधी जी के 21 वर्षा के कार्य को अब ऐसे अभियान के रूप में समझा जा रहा है जिसका उद्देश्य मुख्य रूप से तीन चीजों को जीतना था :-

1. बिना रंग भेद के सभी नागरिकों के साथ निष्पक्ष व्यवहार को सुनिश्चित करना।
2. शैक्षिक कार्य योजनाओं के द्वारा भारतीय परमिट मजदूरों और अन्य लोगों को संगठित और शिक्षित करना।
3. जिनके विरूद्ध अभियान चल रहा था उनके तर्क सुनना और दूसरे की भावनाओं का सम्मान करना।

गाँधी का दक्षिण अफ्रिका प्रवास, जो कि गाँधी के जीवन के लिए अत्यन्त निर्णायक था, युवा वकील से गाँधी के महात्मा बनने का भी गवाह बना। गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने गाँधी को 'महात्मा' की उपाधि दी और नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने गाँधी के योगदान को महत्व देते हुए उन्हें 'राष्ट्र पिता' का सम्बोधन दिया।

6.2.3 मद्य निषेध - मानव गरिमा को बढ़ाना

शराब पीने की बुराई, जो दुःख इसके माध्यम से महिलाओं पुरूषों व बच्चों के जीवन में आते हैं परिवार की बर्बादी, गाढ़ी मेहनत की कमाई का घटिया शराब बेचने वालों के हाथों में जाना और शराब पीने से स्वास्थ्य सम्बन्धी संकटों ने गाँधीजी का ध्यान आकर्षित किया और वे इस बुराई से संघर्ष करना चाहते थे। गाँधी द्वारा मद्य निषेध समिति की पहल की गई, जिसने शराब की बुराईयों को सामने लाने सम्बन्धी शिक्षा का अभियान हाथ में लिया,

इसमें संदेह नहीं कि इसने सामान्य जागरूकता उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसके साथ ही गाँधी जी के नेतृत्व में भारत के सभी हिस्सों में शराब बंदी का जोरदार अभियान चलाया गया। गाँधी लिखते है " हमें अहिंसक प्रयासों से अपने लक्ष्य तक पहुँचना होगा, हम उन लाखों आदमियों, महिलाओं के भाग्य को सरकार पर नहीं छोड़ सकते जो शराब और नशीली वस्तुओं के अभिशाप से पीड़ित है। चिकित्सा से जुड़े लोग इस बुराई को खत्म करने में सबसे ज्यादा योगदान दे सकते हैं। उन्हें शराब छुड़ाने और अफीम के आदी अभिशप्त लोगों को मुक्त करने के तरीके ढूंढने पड़ेगें। महिलाओं और विद्यार्थियों को यह सुधार लाने में आगे

आने का सुअवसर है। बहुत तरीकों की अच्छी सेवा से वे व्यसन के आदी लोगों को मना कर इस बुरी आदत को छोड़ने को बाध्य करने की अपील कर सकते हैं।

हालांकि भारत में मद्य निषेध परिषद, राज्य और केन्द्र सरकार तथा हजारों स्वयंसेवी समूहों ने इस बुराई को खत्म करने के लिए अनेको कदम उठाऐं हैं लेकिन वास्तविक स्थिति में सुधार अभी भी नहीं हो पाया है।

6.2.4 खादी - प्रत्येक नागरिक मे आत्मसम्मान जगाना

खादी को सच्चे अर्थो में गाँधी की क्रान्ति की आत्मा पुकारा जा सकता हैं और गाँधी के लिए खादी, व्यक्ति व राष्ट्र दोनों के लिए स्वावलंबन का प्रतीक था। गांधी ने खादी को 'आर्थिक' आत्मनिर्भरता की शुरुआत और देश में सभी के लिए समानता के रूप में वर्णित किया है। व्यंजन की पहचान खाने पर ही होती है। हर व्यक्ति को प्रयास करने दो, और मैं जो कह रहा हूँ उसे निहितार्थो में समझना होगा। इसका अर्थ है सम्पूर्ण रूप में स्वदेशी मानसिकता। भारत में जीवन की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने का निश्चय और यह भी ग्रामवासियों की मेहनत व बुद्धिमता के माध्यम से। इसका अर्थ है वर्तमान में मौजूद प्रक्रिया को बिल्कुल उलटना।

उत्पादन में रचनात्मक लगाव उत्पन्न करके प्रत्येक नागरिक में राष्ट्रगौरव उत्पन्न करना और अच्छी आय के लिए कार्य स्वयं और विश्व को श्रम के प्रति प्रतिबद्धता स्थापित करना खादी के मूलभूत सिद्धान्तो में है। गांधी का कताई, बुनाई और हाथ के बुने कपड़े पर जोर देना उस समय एक क्रांतिकारी विचार था जो विश्व में कहीं भी किसी भी रूप में नहीं था। आज भारत में खादी केन्द्र रोजगार दे रहे हैं और दूर दराज इलाकों में रहने वाले उपेक्षित लाखों महिलाओं, पुरूषों और दस्तकारों को अच्छी आय का स्त्रोत है। गांधी ने यह भलीभांति जान लिया था कि आधुनिक युग के सभी विकास सीधे नागरिको के आर्थिक कल्याण से जुड़े है। गांधी के लिए खादी, भारतीय मानवता और इसकी आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा समानता का प्रतीक था। जवाहर लाल नेहरू ने काव्य रूप में, खादी को भारतीय स्वतंत्रता की पोशाक (वर्दी) कहा। इस प्रकार गांधी के मतानुसार खादी जीवन की आवश्यकताओं का पूरा करने का साधन है। यह ग्राम स्वावलम्बन की ओर भी एक कदम था और ग्राम के प्रत्येक सदस्य के लिए अतिरिक्त आय का साधन। इस प्रकार गांधी को आशा थी कि यह कई स्तरों वाला एक ऐसा कार्यक्रम था,जो ग्रामीण लोगों में नई आशा का संचार करेगा।

6.2.5 स्थानीय आत्मनिर्भरता के लिए ग्रामीण उद्योग

आम जनता द्वारा उत्पादन, गांधी के मतानुसार, विकास समानता और शांति की आवश्यक शर्त है जो इस बात पर जोर देता है कि प्रत्येक गांव को एक स्वतंत्र, आत्मनिर्भर इकाई माना जाए जहाँ हस्तशिल्पियों, दस्तकारों, मजदूरों को उपयोगी कार्य में लगे रहने के पर्याप्त अवसर मिले जो उन्हें इनके परम्परागत और जीवन जीने योग्य साधनों को प्राप्त करने में सक्षम है। ये भिन्न गतिविधियाँ न केवल रोजगार उत्पन्न करेगी वरन् गांवो में व्यक्ति की आय में वृद्धि भी सुनिश्चित करेगी। बुनाई, तेल पिराई, शहद निकालना, पापड़ बनाना, चावल

तैयार करना, हस्तनिर्मित कागज, साबुन बनाना, ग्रामीण उद्योगो की उस सम्पूर्ण सूची में ये कुछ थोड़े से काम है जो गांवो में हाथ से की जा सकते है। गांधी ने लिखा "हाथ से पिसाई, कटाई, साबुन बनाना, कागज बनाना, माचिस बनाना, रंगाई तेल पिराई आदि जैसे आवश्यक ग्रामीण उद्योगों के बिना ग्रामीण अर्थव्यवस्था पूरी नही हो सकता। सभी को जब भी जहां भी यह उपलब्ध हो इसके उपयोग को आत्मसम्मान का मसला मानना चाहिए। मांग आने के बाद इसमें संदेह नही कि हमारी ज्यादातर आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों से हो सकती है। जब हम गांव के बारे में सोचेगें तो हमें पश्चिम की नकल और मशीन से बनी वस्तुओं का उपयोग ही नही करेंगे बल्कि हम एक नये भारत की कल्पना पर आधारित सच्ची राष्ट्रीय भावना विकसित करेंगें जिसमें दरिद्रता, भूख व बेकारी बिल्कुल नहीं होगी। "

6.2.6 ग्राम सफाई एवं सामूहिक सुरक्षा के लिए दृढ़ होना

गांधी जी ने सही कहा है कि "राष्ट्रीय और सामाजिक सफाई (स्वच्छता) का गुण हम लोगों में नहीं है। हम स्नान कर सकते है लेकिन हम कुएं, तालाब या नदी गंदा करते समय नही सोचते जिनके किनारे या उनमें अन्दर हम नित्यकर्म करते है। मैं इस दोष को एक बड़े दुर्गुण के रूप में देखता हूँ जो हमारे गांवों, पवित्र नदियों के पवित्र तटो की असम्मान जनक स्थिति, बीमारियों के लिए जिम्मेदार है। "

भारत के शहरी और ग्रामीण दोनों इलाको में सबसे घृणित बात सफाई को नकारना है। गांवो में स्थिति कहीं ज्यादा भयानक है। जीवन शैली से नागरिक समझ की कमी देखी जा सकती है। यहां तक शिक्षित लोग भी इस व्यापक पक्ष की अवहेलना करते है।

आज भी बहुत से गांवो में, मानव मल को हाथ से उठाना और सिर पर ढोने का दिखाई देता है। शौचालयो के बाहर पेशाब करना भी ऐसा ही दृश्य है और ऐसे भी अनेक उदाहरण है जहां गांव ही शौचालय के रूप में बदल गया है। यहां तक कि गांव तक पहुँचने वाली सड़के भी इस बीमारी से मुक्त नहीं है। इन सभी बातों से इस महत्वपूर्ण पहलू की तरफ लोगो के व्यवहार को प्रतिबिम्बित करता है।

6.2.7 नागरिक प्रशिक्षण के लिए बुनियादी शिक्षा

गांधी ने शिक्षा पर एक दृढ़ विचार विकसित किया जो बच्चें को एक चैतन्य मानव के रूप में महत्व देने पर बल देता है और तीन 'र' के गुण पर जोर दने वाली शिक्षा के सामान्य विचार की करता है।

उनका तर्क था कि जो स्वराज के ढाचें को मजबूत नींव पर रखना चाहते है वे बच्चों की उपेक्षा नही कर सकते। हांलाकि निश्चित रूप से नही लेकिन विदेशी शासन ने अनजाने ही बच्चों को शिक्षा देना शुरू किया। बुनियादी शिक्षा, भारत में रहने वाले सभी बच्चों को सबसे अच्छो और स्थायी व्यवस्था से जोड़ती है, फिर बच्चे चाहे शहरी हो या ग्रामीण। यह शरीर और मस्तिष्क दोनों का विकास करती है और भविष्य की सुनहरी कल्पना के साथ बच्चे को उसकी जडों से इस बात कि अनुभूति के साथ जोड़े रखती है कि स्कूली शिक्षा शुरू होने के साथ ही उसे उसके हिस्से का ज्ञान मिलेगा। गांधी शिक्षा के परम्परागत दृष्टिकोण विरोध नही करते,

उनका विश्वास था कि शिक्षा की उपयोगिता तभी है जब यह बच्चे को उसके आत्मज्ञान विकसित करने के रचनात्मक अवसर दे और समाज और सामाजिक जरूरतों से कुद को जोड़ने का माध्यम बने। उन्होनें इस बात पर जोर दिया कि एक बच्चे को मशीनी साधन बनाने के स्थान पर शिक्षा व्यवस्था बालक की पूर्ण क्षमता को विकसित कर बाहर लाए।

बुनियादी शिक्षा अथवा नई तालीम 'एच' के सार पर जोर देती है 'एच' (हैड)मस्तिष्क (बुद्धि), एच (हार्ट) हृदय, एच (हैंड) हाथ (शरीर)। बच्चे को मस्तिष्क अथवा बुद्धि से सोचना चाहिए। हृदय से देनी चाहिए और हाथों (शरीर) से कार्य करना चाहिए।

इस प्रकार तीनों भागों के समान विकास आवश्यक है क्योंकि इससे ही बच्चे का विकसित होगा और बच्चा स्वतंत्र, स्वावलंबी तथा रचनात्मक बनेगा। गांधी ने इस बात पर भी बल दिया कि प्रतियोगी बनने के स्थान पर शिक्षा स्वाभाविक रूप से बालक को सहभागी बनायें। प्रतियोगिता बच्चे में बुरी प्रवृतियां लाती है जबकि सहभागिता इसे प्रयोगो और उत्पादक कार्य में इच्छा से संलग्न करती है। बाहरी सूचनाओं को इकट्ठा कर बच्चे को मशीन के स्तर पर लाने के बजाय गांधी चाहते थे उसमें मानवीय भावनाएं, मूल्य व गुण विकसित हो। यह केवल तभी सम्भव है जब बच्चे को पढ़ाई के साथ साथ दस्तकारी कृषि कार्य अपने पास-पड़ोस की साफ-सफाई और अपने स्कूल की देखभाल करने जैसे हाथ के कामों के महत्व को भी सिखलाया जाए। इन गतिविधियों में सहभागिता शारीरिक व बौद्धिक दोनों तरह से स्वस्थ बच्चे का विकास करता है।

6.2.8 प्रौढ़ शिक्षा और राष्ट्र निर्माण में भागीदारी

देश में अक्षर ज्ञान से वंचित और उपेक्षित प्रौढ़, जो अपने कर्त्तव्यों व अधिकारो से अनभिज्ञ है, यदि शिक्षा से वंचित रह जाते है तो यह शर्मनाक व पाप है। गांधी ने इसे प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक जिम्मेदारी मानते हुए प्रौढ़ शिक्षा के महत्व पर जोर दिया। गांधी प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम सरकार (राज्य) द्वारा चलाऐ जाने का समर्थन नहीं करते। इसके विपरीत, प्रत्येक शिक्षित व्यक्तियों द्वारा प्रौढ़ शिक्षा का दायित्व अपने कंधो पर उठाने पर बल देते हैं। गांधी लिखते है "यदि प्रौढ / व्यस्क शिक्षा का दायित्व मुझ पर हो तो मुझे इन व्यस्क शिष्यों के दिमाग को उनके देश की विशालता और महानता की ओर ले जाना चाहिए। एक ग्रामीण का भारत उसके गांव में है। यदि वह दूसरे गांव में जाता है तो वह अपने गांव की बात ऐसे करता है जैसे वह उसका घर हो। अज्ञान का कोई विचार गांवो में फैला नही मिलता। गांववासी विदेशी शासन और उसकी बुराईयों के बारें में कुछ नही जानते। जो थोड़ी बहुत जानकारी उन्हें थी उससे विदेशियों के प्रति भय होता था। इसका परिणाम विदेशियों और उनके शासन के प्रति भय, आशंका व घृणा थी। इससे पीछा छुड़ाना उन्हें नहीं आता। वे लोग ये नहीं जानते कि विदेशियों के भारत में होने का कारण उनकी स्वयं की कमजोरी और शासन से मुक्त होने की शक्ति पर ध्यान नहीं देना है। इस प्रकार व्यस्क शिक्षा से मेरा अर्थ है - शब्दों से लोगों को सच्ची राजनीतिक शिक्षा दी जाए। इसे देखते हुए ऐसी रूपरेखा तैयार की जाए जिसके द्वारा बिना भय की शिक्षा दी जा सके। मेरी कल्पना में इस प्रकार की शिक्षा में सत्ता के हस्तक्षेप की बहुत देर

हो चुकी है पर यदि हस्तक्षेप होता है तो इस अधिकार के लिए संघर्ष अवश्य होना चाहिए क्योंकि इसके बिना स्वराज का कोई अस्तित्व नहीं होगा। "

स्वतंत्रता के बाद देश में प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में प्रभावशाली उपलब्धिया प्राप्त हुई। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि 1970 से 1993 के दौरान प्रौढ़ शिक्षा की दर 34 प्रतिशत से बढ़कर 51 प्रतिशत हो गई। सकल प्राथमिक भर्ती दर का औसत लगभग विश्व औसत के बराबर आ गया, शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय (सकल राष्ट्रीय उत्पाद % के अनुसार) 1970 से 1993 के बीच बढ़कर 61 प्रतिशत हो गया। जहाँ ये आकड़े मानव उन्नति के संतोषजनक विकास को इंगित करते हैं वही कुछ निराशाजनक पहलू भी है जब यह ध्यान आता है कि 1995 में भारत मे 291 लाख प्रौढ़ अभी भी अशिक्षित हैं और 45 लाख बच्चे प्राथमिक विद्यालय भी नहीं जा रहे है।

6.2.9 महिलाऐं - समान भागीदार के रूप में

गाँधी ने महिलाओं को न्याय स्वतन्त्रता और मानव सम्मान के सभी अभियानों में आन्दोलनकारियों की अग्रिम पंक्ति में खड़ा किया। इससे पूर्व भारतीय इतिहास में सार्वजनिक गतिविधियों में महिलाओं ने स्वेच्छा से भाग नहीं लिया था जैसा कि महात्मा के आह्वान पर उन्होंने लिया।

गाँधी जी महिलाओं का बेहद सम्मान करते थे और मानते थे कि उनमें अहिंसा की उच्च आन्तरिक क्षमता होती है। जिस तरह गाँधी महिलाओं को जागरूकता अभियान के केन्द्र में लाए और मानव अधिकार सुनिश्चित करने के लिए दक्षिण अफ्रीका और भारत दोनों जगह भेदभाव के विरूद्व राजनीतिक संघर्ष में पहल की वो भी उस समय जब आज का नितान्त परिचित व अधिकतर बोला जाने वाला 'मानव अधिकार' शब्द प्रयुक्त नहीं होता था, यह बताता है कि वे महिलाओं के प्रति कैसा व्यवहार करते थे और सामाजिक जीवन में महिलाओं की रचनात्मक भूमिका के प्रति उनकी क्या अपेक्षा थी। दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह के दौरान विशेष रूप से 'फीनिक्स बहिनों और 'टालस्टाय बहिनों की पहले अभियान की भूमिका जिसमें प्रेरणा प्राप्त महिलाऐं पुरूषों के बराबर भाग लेती है, हिला देने वाला था।

अपने दूसरे पुत्र मणिलाल की शादी के अवसर पर गाँधी द्वारा दी गई सीख याद रखने योग्य है। अपने पुत्र की दुल्हन को स्वीकृति देते हुए गाँधी जी अपने पुत्र से एक आश्वासन चाहते थे। कि वह अपनी पत्नी की स्वतंत्रता का सम्मान करेगा, उसके साथ अपने साथी की तरह व्यवहार करेगा, गुलाम की तरह नहीं, जैसे वह स्वयं की सुरक्षा, देखभाल करता है वैसे ही उसकी करेगा।

दक्षिण अफ्रीका के समय में गाँधी के सहयोगी श्री पोलक ने गाँधी के बारे में जो कहा था वह उनका महिलाओं के प्रति व्यवहार को व्यक्त करता है -

ज्यादातर महिलाऐं पुरूषों से स्नेह करती है जिसे अधिकतर पुरूषों के प्रति आकर्षण के रूप में जाना जाता है जबकि अनेक महिलाओं द्वारा गाँधी को स्नेह इसलिए मिला क्योंकि उनमें वे गुण थे जो स्त्री स्वभाव से मेल खाते थे। स्त्रियां समझती थी कि गाँधी में उन्हें एक सहयोगी दिखाई देता है जो उनके साथ-साथ चल रहा हैं और उन्हें बिना काम भावना के गहरा,

निर्मल और अनछुआ स्नेह दे सकता है। सभी महिलाऐं उनसे अपने जीवन की सभी समस्याओं पर खुलकर विचार कर सकती थी, यह हैरानी और परेशानी का विषय था। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनकी समस्याओं को दूर किया जा सकता था और गाँधी की राह उन्हें अधिक कठिन नहीं लगती थीं। 6.2.10 स्वास्थ्य व शुद्धता (स्वच्छता) की शिक्षा

भारत में निजी व सार्वजनिक स्वच्छता, ग्रामीण व शहरी दोनों ही शहरों में उपेक्षित रही है और गाँधी जी ने विशेष तौर पर ग्रामीणों में, अपने गाँव व आस-पास के वातावरण को साफ रखकर स्वच्छता का माहौल विकसित करने की त्वरित आवश्यकता पर बल दिया है। गाँव तब तक साफ नहीं रहेगें जब तक कि स्वयं का घर, गलियां और सार्वजनिक स्थानों को साफ नही रखा जाएगा। जगह-जगह एकत्र कूड़ा-करकट, अवरूद्व नालियां, कुत्ते व सुअरों का आवारा घूमना, मक्खियों का भिनभिनाना और आवारा गायों व भैसों का घूमना न केवल घृणा उत्पन्न करने वाला होता है वरन् एक ऐसा दृश्य प्रस्तुत करता है जिसे वास्तव में नरक कहा जा सकता है और बहुत से गाँव बीमारियों के प्रजनन क्षेत्र बन गए है। गाँधी जी इस स्थिति से बेहद चिंतित थे और इन्होंने प्रत्येक व्यक्ति में सफाई और स्वच्छता की भावना जगाने के लिए एक समन्वित कार्य योजना का सुझाव दिया।

गाँधी ने एक सुविचारित कार्य योजना की कल्पना की जिसमें प्रत्येक गाँव घर, गलियों ओर सार्वजनिक स्थानों की सफाई में सक्रिय भागीदारी देगा। गाँधी के स्वास्थ्य व्यवस्था के स्वप्न में कूड़े को डालने। के लिए खाद के गड्डे ग्राम स्वास्थ्य केन्द्र और रोग मुक्त जीवन के लाभ बताकर शिक्षित करने वाले स्वास्थ्यकर्मी थे।

गाँधी के स्वास्थ्य व स्वच्छता को बढ़ाने से जुड़ाव का महत्व समझने के लिए, गाँधी के शब्दों को समझना उपयोगी है-

अपने शरीर की रक्षा करना और तन्दुरूस्ती के नियमों को जानना एक अलग ही विषय है, जिसका सम्बन्ध अभ्यास से और अभ्यास द्वारा प्राप्त ज्ञान के आचरण से है। जो समाज सुव्यवस्थित है उसमें रहने वाले सभी लोग स्वास्थ्य के नियमों को जानते हैं और उन पर अमल करते है। अब तो यह बात निर्विवाद सिद्व हो चुकी है कि स्वास्थ्य के नियमों को न जानने से और उन नियमों के पालन में लापरवाह रहने से ही जिन-जिन रोगों से मनुष्य जाति का परिचय हुआ है उनमें से ज्यादातर रोग उसे होते है। हमारे देश की दूसरे देशों से अधिक मृत्युदर का मुख्य कारण निश्चय ही वह गरीबी है जो हमारे देशवासियों के शरीरो को कुरेद कर खा रही है लेकिन अगर उनको सेहत के नियमों की सही शिक्षा दी जाए तो इसमें बहुत कमी की सकती हैं।

स्वास्थ्य प्रबन्धन के क्षेत्र में प्राप्त प्रभावशाली उपलब्धियां -

स्वतन्त्रता के बाद के समय में स्वास्थ्य और कल्याणकारी योजनाओं के क्षेत्र से स्वास्थ्य प्रबन्धन के क्षेत्र में महती उपलब्धियां प्राप्त की गई हैं।

1960 में प्रति 1000 पर 21 बच्चों की मृत्युदर 1994 में घटकर 10 हो गई। 1960 से 1990 के बीच स्वस्थ्य पर सार्वजनिक व्यय दो तिहाई से भी अधिक बढ़ गया। अभी भी यह चिन्ताजनक है कि 135 लाख लोग मूलभूत स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित हैं। इसी प्रकार 226 लाख लोग साफ पीने के पानी और 640 लाख लोग शौचालयों की बुनियादि सुविधा के अभाव

में जीवनयापन कर रहे हैं। 15 से 49 वर्ष की गर्भवती महिलाओं में से 88 प्रतिशत महिलाऐं एनिमिया (खून की कमी) से पीड़ित हैं।

6.2.11 विरासत व सामाजिक सम्बद्धता को संरक्षण हेतु

एक स्वतन्त्र राष्ट्र जिसे अपनी अनेकों भाषाओं पर गर्व है उसे विभिन्न भाषाओं के विकास को प्रोत्साहित करना चाहिए। गाँधी का मानना था कि प्रान्तीय भाषाऐं महान् बुद्विमत्ता की घाटी है और साहित्य समाज का दर्पण है। लोगों के भाग्य निर्माण में भाषाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को कोई राष्ट्र नकार नहीं सकता है।

गाँधी ने इस सम्बन्ध मे लिखा, "भारतीय भाषाओं ने दरिद्रता भोगी है। जब हमने अपनी मातृभाषा में अस्पष्ट विचारों को प्रकट करने का प्रयास किया तो हमने हाथ-पैर मारें। यहां वैज्ञानिक शब्दावली के समरूप शब्द नहीं है। परिणाम विनाशकारी है। आम जनता आधुनिक विचारों से बिल्कुल अपरिचित रह जाती हैं। भाषायी उपेक्षा के कारण भारत में होने वाले नुकसान को अपने ही समय मे आंक रहे है। यह समझना काफी सरल है कि जब तक हम इस भूल को उलट नहीं देते साधारण जनता की सोच गुलाम की ही रहेगी। आम जनता स्वराज निर्माण में कोई महती भूमिका नही निभा सकती।

6.2.12 एकता व समान सोच के लिए राष्ट्रीय भाषा

विश्व में मौजूद कुछ प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक भारत जैसे देश की एक राष्ट्र भाषा होनी चाहिए जो बिना प्रान्तीय भाषा अथवा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा जैसे अंग्रेजी के प्रति पूर्वाग्रही हुऐ बिना राष्ट्रीय भावनाओं को सच्चे रूप में प्रतिबिम्बित करे। जब सभी भाषाएं सांस्कृतिक जीवन और प्रतिदिन के प्रशासन में समान स्थान प्राप्त करती हैं तब एक भाषा बहुमत की सहमति से राष्ट्रभाषा के रूप में उभरकर सामने आती है जो स्वाभाविक रूप से देश के लिए सूची में सबके ऊपर होती है। इसमें कोई दो राय नही है कि एक स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी राष्ट्रभाषा होनी चाहिए और भारत के संदर्भ में 'हिन्दुस्तानी' इस खाई को पाटेगी क्योंकि यह लोगों के बड़े बहुमत के द्वारा बोली जाती है।

6.2.13 आर्थिक समानता - सामाजिक कल्याण की पूर्व शर्त

गांधी जी इस बात पर दृढ़ थे कि किसी भी देश में बिना आर्थिक समानता, के जनता जनार्दन के लिए स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं हैं। सामान्य जन को अपने हाल पर अकेला नहीं छोड़ा जा सकता, और जब तक किसी सम्प्रभु गणतंत्र के द्वारा उनके भोजन, वस्त्र और मकान की आवश्यकताऐ पूरी नही की जाती, स्वतंत्रता की बात करना अर्थहीन और खोखला नजर आता है। एक प्रजातंत्र की स्थिरता सच्चे अर्थो में इस बात पर निर्भर करती है कि यह सामान्य व्यक्ति के विकास के अवसर देने के लिए कितना चिन्तित है। विशेष रूप से रोजगार के और राज्य से जुड़े सभी स्त्रोतो तक उसकी समान पहुँच हो। गांधी जी ने आर्थिक समानता को 'अहिंसक स्वतंत्रता की कुंजी' के रूप में वर्णन किया है। उन्होनें इसे विस्तार देते हुए कहा "यह अहिंसक स्वतंत्रता की कुंजी है। आर्थिक समानता के लिए काम करने का अर्थ है पूँजी व श्रम के बीच मौजूद सनातन संघर्ष को समाप्त करना। इसका अर्थ है एक ओर उन थोड़े से धनवानों को

निचले स्तर पर लाना जिनके हाथ में देश की अधिकांश सम्पति केन्द्रित है दूसरी ओर अधभूखे नंगे लाखो लोगो को ऊपर उठाना। जब तक कि अमीरों और लाखों भूखे लोगो के बीच खाई बनी रहेगी सरकार की अहिंसक व्यवस्था को पाना स्पष्टतया नामुमकिन है। नई दिल्ली के महलों और गरीब श्रमिक वर्ग की टूटी फूटी झोपडी के बीच का अन्तर एक दिन स्वतंत्र भारत में खत्म हो सकता है। तब गरीब भी उसी तरह आनंद मनाएंगे जैसे धनवान मनाते है। यदि धनवान स्वेच्छा से अपने धन का परित्याग नहीं करते और अपनी शक्ति को आम व्यक्ति के हित में प्रयुक्त नही करते तो एक दिन निश्चित रूप से हिंसक व खूनी क्रांति होगी।

उभरते समकालीन परिदृश्य में यह एक चौकाने वाला विरोधाभास है कि पिछले तीन दशकों में जनसंख्या के दुगुने हो जाने के बावजूद भी औसत वास्तविक जी.डी.पी. प्रति व्यक्ति दुगुनी हो गई और पूरी जनसंख्या के 44 प्रतिशत लोग पूरी तरह गरीबी में रह रहे है। यह तथ्य हृदय विदारक है कि विश्व के गरीबी के लगभग एक तिहाई लोग भारत में रहते है।

6.2.14 कृषि की स्थिरता संरक्षण हेतु किसान

पांच लाख से अधिक गांवों वाले इस देश में खेती स्वाभाविक रूप से ग्रामीण क्षेत्रो का सबसे बड़ा व्यवसाय है और आय का स्त्रोत है। इसके अलावा भारत कृषि प्रधान देश है और दुर्भाग्य से जो अच्छी फसल देने के लिए उत्तरदायी है उन किसानों के साथ सम्मानजनक व्यवहार नहीं होता और उचित प्रगति आदि के लिए अवसर प्रदान नही किये जाते क्योंकि जागरूकता और सुविधाओं के अभाव में खेती के पुराने तरीके और कार्यविधि ही काम में ली जा रही है। जब तक किसानों के उत्पादन के लिए आधुनिक तकनीक और प्रतियोगी मूल्य के लिए लगातार प्रयास नही किये जायेंगे देश में कृषि के क्षेत्र में क्रांति की आशा एक दूरगामी सपने की तरह रहेगी। चम्पारण आन्दोलन में जो गांधी जी ने कहा था उसे याद करना चाहिए - जो किसानों को संगठित करने के मेरे तरीके को जानना चाहते है उनके लिए चम्पारण आन्दोलन का अध्ययन करना उपयोगी रहेगा। जब भारत में सत्याग्रह की पहल पहली बार की गई थी और उसका परिणाम पूरा भारत जानता है। यह उन आन्दोलन बन गया था जो शुरू से अन्त तक अहिंसक रहा था। इसने 20 लाख से ज्यादा किसानों को प्रभावित किया था। एक शताब्दी से भी पुरानी एक विशिष्ट शिकायत को केन्द्रित कर यह संघर्ष किया गया था। इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए बहुत सी हिंसक क्रांतिया की गई। किसान शोषित थे। अहिंसक उपाय से पूरे 6 महिनों मे सफलता प्राप्त की गई। चम्पारण के किसान बिना किसी सीधे प्रयास के राजनीतिक रूप से जागरूक हो गये।

6.2.15 उत्पादन व वितरण में श्रमिक की सहभागिता

अन्य विकासशील देशों की तहर, इस देश के श्रम को बजाय पश्चिमी मॉडल को सामने रखने के अहिंसक नीतियों को विकसित करना चाहिए जो उनके सामान्य व्यवहार में निश्चय और जुड़ाव के साथ बदलाव लाएगा। श्रम का शोषण पाप है जो स्वाभाविक रूप से मुख्य भाग तक फैलकर घृणा व अविश्वास को जन्म देगी। गाँधी के अनुसार, अहिंसा के प्रति प्रतिबद्धता और सेवा भाव के साथ अहमदाबाद श्रमिक संगठन पूरे भारत के लिए एक मॉडल है। गाँधी के समय में इसने बहुत सी लोक कल्याणकारी गतिविधियों को हाथ में लिया और श्रमिकों

के सम्पूर्ण विकास के लिए ढेर सारी प्रतिबद्वताऐं दी। इसने अपना पूरा प्रयास श्रमिक जी स्थिति को सुधारने पर केन्द्रित किया और राजनीति के धर्म संकट से अपने आपको अलग कर लिया।

6.2.16 आदिवासी - मानव भिन्नता से पीड़ित

आदिवासी के रूप में पहचाने जाने वाले कबीले समृद्व संस्कृति के उत्तराधिकारी है और उनको किसी भी तरह अलग-थलग नहीं किया जा सकता है। उन्हें न केवल विकास के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए वरन् आधुनिकता के सपने दिखाकर उनकी जीविका छीनना तथा प्रगति व सभ्यता के नाम पर उनका शोषण करने का प्रयत्न करना अपराध है, ऐसा गाँधी का विश्वास था। शिक्षा सम्बन्धी अवसर देना श्यौर जंगल से इकट्ठा किए गए उनके उत्पादन की कीमतें निर्धारित करने तथा उनकी सांस्कृतिक विरासत को रखने के अवसर देने चाहिए। आदिवासियों की समस्याओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने की आवश्यकता है उनके प्रति संवेदनशील रवैया भी जरूरी है। गाँधी ने बताया कि इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर किसी भी प्रकार का भेदभाव राष्ट्रीय हित को हानि पहुँचाएगा॥

6.2.17 कुष्ठ रोग और सहानुभूतिपूर्ण लगाव

गाँधी लिखते है, "कुष्ठ शब्द से ही बुरी गंध आती है। मध्य अफ्रीका के बाद केवल भारत ही शायद कुष्ठ रोग का घर है। फिर भी वे समाज के उतने ही महत्वपूर्ण हिस्से हैं जितने कि हम हैं। वे हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं जबकि उन्हें उसकी सबसे कम आवश्यकता होती है। अधिकतर कुष्ठ रोगी जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है वे उपेक्षित रहते है। मैं इसे हृदयहीनता कहता हूँ जो अहिंसा के संदर्भ में निश्चित रूप से हैं। गाँधी चाहते थे कि कुष्ठ को एक असाध्य रोग और कुष्ठ रोगी को घृणित मानव मानने के व्यवहार को छोडकर एक सहानुभूतिपूर्ण ओर मानवीय दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। लोगों को यह विश्वास दिलाने की आवश्यकता है कि अनेक दूसरे रोगों के समान कुष्ठ रोग का भी इलाज है और उचित चिकित्सा आदि की सुविधाओं के साथ-साथ रोगी को उचित पुनर्वास का प्रयास होना भी आवश्यक है। गाँधी ने स्वयं कुष्ठ रोग का गहन अध्ययन किया और एक प्रेरणास्पद घटना गाँधी के जीवन से जुड़ी है जिसमें बापू कुटीर के निकट स्थित अपने स्वयं के आश्रम सेवाग्राम में उन्होंने परचुरे शास्त्री की सेवा की। गाँधी ने कुष्ठ के प्रति जिस तरह के सकारात्मक कदम उठाएं ऐसे बहुत ही कम उदाहरण हैं। गाँधी की पहल से ही स्वतंत्र भारत में कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम को बड़े पैमाने पर चलाया गया है।

6.2.18 विद्यार्थी - भविष्य के नेतष्त्वकर्त्ता

भारत और दक्षिण अफ्रीका दोनों ही जगह, जिस तरह युवाओं के साथ गाँधी ने संचार किया और उनके आहवान पर युवाओं ने जो प्रतिबद्वता दिखाई है और परिवर्तन के प्रेरक ऐजेंट की तरह उनके चारों तरफ इकट्ठे हो गए, यह उल्लेखनीय पक्ष है। गाँधी चाहते थे कि पुरानी पीढी युवाओं पर विश्वास करे और न केवल उनकी भावनाओं का सम्मान करे वरन् युवाओं को नेतृत्व की भूमिका देने पर जोर दिया। निस्संदेह, गाँधी छात्रों के राजनीति में उतरने को उनके

माता-पिता की मेहनत की कमाई को उड़ाना और इन सबसे विद्यार्थी द्वारा अपना बहुमूल्य समय गंवाना मानते थे। इसके साथ-साथ वे छात्रों को केवल किताबी कीड़ा बनाने के भी विरूद्व थे। गाँधी ने विद्यार्थियों को सामाजिक परिवर्तन के बैरोमीटर के रूप में वर्णित किया था पर ऐसा बैरोमीटर बनने के लिए विद्यार्थी को उचित मनोवृति विकसित करनी होगी। हस्तशिल्प के साथ शिक्षा और उत्पादक सामाजिक गतिविधियों में संलग्नता विद्यार्थियों को सम्माजनक नागरिक बनाएगी। गाँधी ने विद्यार्थियों के लिए ग्यारह सूत्रीय कार्यक्रम दिया

1. विद्यार्थियों को दलगत राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिए। वे विद्यार्थी, शोधार्थी है न कि राजनीतिज्ञ।
2. उन्हें राजनीतिक हड़तालों में शामिल नहीं होना चाहिए। उनके अपने आदर्श (पुरूष) होने चाहिए। उनके अपने आदर्श पुरूष के प्रति श्रद्धा, उन्हें अच्छाइयों को अपनाना चाहिए न कि हड़ताल पर जाने में, जेल जाने मे अथवा फाँसी पर चढ़ने में तत्परता।
3. यदि दुःख असहनीय है और यदि सभी विद्यार्थी समान रूप से ऐसा ही महसूस करते हैं तो उनके प्राचार्य की सहमति से स्कूल अथवा कॉलेज को ऐसे मौकों पर बंद रखा जा सकता है। यदि प्राचार्य नहीं सुनते हैं तो विद्यार्थी अपनी संस्थाओं को छोड़ सकते हैं जब तक की संस्था प्रबन्धक पश्चाताप कर उन्हें नहीं बुलाता। बिना किसी कारण वे असहमत और सत्ताधारियों के विरूद्व अवपीड़न का प्रयोग नहीं कर सकते। उन्हें यह विश्वास होना चाहिए कि यदि वे संगठित हैं और अपने व्यवहार मे सम्मानजनक हैं तो वे निश्चित रूप से विजयी होंगे।
4. इन सभी को वैज्ञानिक तरीके से कताई अवश्य करनी चाहिए उनके औजार साफ, स्वच्छ व अच्छी हालत में होने चाहिए। उन औजारों को बनाना भी उन्हें सिखना चाहिए। उनका काता हुआ धागा स्वाभाविक रूप से अच्छी गुणवत्ता का होगा। उन्हें कताई के आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक निहितार्थो से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करना चाहिए।
5. वे हमेशा खादी का प्रयोग करेंगे और विदेशी अथवा मशीन से बनी पुर्जो वाली या अन्य वस्तुओं को छोड़ कर गाँव मे उत्पादित वस्तु का प्रयोग करेंगे।
6. उन्हें वन्देमातरम् अथवा राष्ट्रीय ध्वज को अन्य लोगों पर नहीं थोपना चाहिए। वे राष्ट्रीय ध्वज के बटन (बिल्ले) पहन सकते हैं पर ऐसा करने के लिए दूसरों को बाध्य नही कर सकते।
7. वे अपने लोगों के बीच तिरंगे झण्डे का संदेश दे सकते हैं और उनको तथा अस्पश्यता दिल से निकाल देना चाहिए। उन्हें अपने से अन्य धर्मो को मानने वाले व हरिजनों के थ सच्ची दोस्ती इस प्रकार करनी चाहिए मानो उनसे खून का रिश्ता हो।
8. वे अपने घायल पडोसियों को प्राथमिक चिकित्सा अवश्य दें तथा पड़ौसी में कूड़ा करकट इकट्ठा कर सफाई करें साथ ही गाँव के बच्चों व बड़ों को इस बारें मे बताऐं।
9. वे राष्ट्रभाषा सीखेंगें हिन्दुस्तानी के वर्तमान स्वरूप मे दोहरा रूप, दो बोली दो लिपि जिससे वे सहज महसूस करें चाहे हिन्दी बोले अथवा उर्दू ओर नागरी लिपि लिखें अथवा उर्दू।

10. जो भी वह नया सीखेंगे उसे अपनी मातृभाषा में अनुवाद कर पड़ोसी गांवा के अपने साप्ताहिक दौरे के दौरान वहां के लोगों में प्रसारित करेंगे।

11. वे रहस्यमयी रूप से कुछ भी करने से स्वयं को पृथक रखेंगे। वे नैतिक जीवन व्यापन करेंगे जो आत्म नियंत्रण और भयमुक्ति के मूल्यों से परिलक्षित हो। वे अपने कमजोर साथियो की रक्षा करने के लिए तत्पर रहेंगे तथा अहिंसक प्रयासों से हिंसक उपद्रवों को समाप्त करने के लिए तैयार रहेंगे। संघर्ष के आखरी पड़ाव में वे अध्ययन संस्थाओं को छोड राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए अपना जीवन भी न्यौछावर करने के लिए तैयार रहेंगे।

12. अपनी सह-छात्राओं के प्रति उदात्त एवं रहेंगे।

6.3 एक नयी सामाजिक व्यवस्था की रूप रेखा : रचनात्मक कार्यक्रम

बहुत से विद्वानो ने गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रम को एक एसी नयी समाज व्यवस्था की संकल्पना के रूप में देखा है जहाँ गरीबी, अशिक्षा और इसी तहर की अन्य सामाजिक असमानताएं बीते समय की बात होगी। जीने शार्प इन्हें एक ऐसे अस्थायी ढांचे के रूप में सम्बोधित करते हैं जिसके ऊपर नये समाज का निर्माण किया जाएगा। शार्प लिखते हैं, "रचनात्मक कार्यक्रम पुराने सामाजिक ढांचे के विद्यमान रहते नई समाज व्यवस्था के निर्माण का प्रयास है। अहिंसक क्रान्तिकारी - जैसा कि गाँधी दावा करते हैं - इस, नये सम (समान) के निर्माण का प्रारम्भ है जब यह विषम (विपरीत) के विरूद्व संघर्ष कर रहा है।

15 अगस्त, 1947 को भारत का राजनीतिक स्वतन्त्र होना गाँधी के लिए अन्तिम उद्देश्य नहीं था। उनके लिए देश की अपनी अस्मिता और स्वराज की यह खोज के दूसरे पक्ष की शुरुआत थी। फरवरी, 1948 के प्रथम सप्ताह में जैसे ही वे सेवाग्राम लौटे वैसे ही अपने संघर्ष को मजबूत करने का पक्का उन्होनें कर लिया था, एक सपना, जिसे वो पूरा नहीं कर सकें, क्योंकि दिल्ली प्रवास के दौरान बिड़ला के लॉन में 30 जनवरी, 1948 को ही गोली मार कर उनकी हत्या कर दी गई।

6.4 विनोबा की रचनात्मक व्याख्या

गाँधी के रचनात्मक कार्यो तथा ट्रस्टीशिप सम्बन्धी विचारों को उनके उत्तराधिकारी विनोबा भावे ने आगे बढ़ाया। उन्होनें गाँधी को इन सिद्वान्तों मे भूदान और ग्रामराज जोड़कर नया जीवन और शक्ति फूंकी। विनोबा भावे ने उनके कार्यो का महत्व इस प्रकार गिनाया :-

1. गरीबी से मुक्ति

2. भूमिपतियों के हृदय में लगाव और प्रेम की भावना जगाना, इस प्रकार देश में नैतिक वातावरण विकसित करना।

3. समाज को परस्पर सहयोग और बन्धुत्व की भावना से मजबूत करना। इस प्रकार भूपति व भूमिहीनों के मध्य जहां कहीं भी वर्गीय घृणा, किसी भी रूप में मौजूद है, उसे दूर करना।

4. 'यज्ञ' 'दान' और 'तप जैसे विशिष्ट दर्शन पर आधारित भारतीय संस्कृति को पुनर्जीवित कर आगे बढ़ाना, इस प्रकार सच्चे धर्म में मानव विश्वास को मजबूत करना।

5. स्वेच्छिक कायिक श्रम अपरिग्रह सहयोग और आत्मनिर्भरता पर आधारित नयी समाज व्यववस्था का निर्माण करना।
6. देश के सभी राजनीतिक दलो को एक साथ एक मंच पर आने और संगठित होकर कार्य करने का अवसर देना। इससे कडवाहट और आत्म प्रशंसा खत्म होगी।
7. **विश्व शान्ति बढ़ाने मे सहायता करना।**

एक समाज सुधारक के रूप में, गाँधी हमें सिखाते है कि भौतिक सम्पत्ति और दासता, हिंसा, अन्याय और भेद-भाव सत्य के साथ मेल नहीं खाते। गाँधी हमें जो बातातें हैं वह सैद्वान्तिक फार्मूलों का कोई समूह नही है। इसके विपरीत, उनके विचार आंगिक रूप से मजबूत, परस्पर सहयोगी, और स्वतन्त्र समाज व्यवस्था का आदर करने वाली विकसित सोच पर आधारित है। तीन महाद्विपों में, सार्वजनिक जीवन के छः दशकों (6 दशक) में गाँधी ने नये सामाजिक और राजनीतिक ढ़ाचे के लिए अनेकों आन्दोलनों का नेतृत्व किया, जिसमें सभी स्त्री व पुरूषों के साथ भाई व बहिनों की तरह व्यवहार किया गया, परिवर्तन के लिए क्रान्तिकारी लालसा की विश्वसनीय सहृदयता प्रदर्शित की गई - सर्वसहमति से परिवर्तन -जिसका देश या विश्व राजनीति में अभी तक प्रयोग नहीं हुआ था। सहिष्णुता, मेलजोल (भाईचारा) सभी धार्मिक व नास्तिक प्राणि की एकता में गहरा विश्वास, गाँधी की कल्पना के संसार का सार है जिसमें भगवान के बनाऐं सभी प्राणियों को सामंजस्य, सभी दृश्य व अदृश्य में आवश्यक रूप में अच्छाई का पोषण करेगा और सम्पूर्ण मानवता को एक पहचान के रूप में संगठित करेगा।

20वीं शताब्दी के बाद के आधे दशकों में विज्ञान और तकनीकी के तीव्र विकास से अविश्वसनीय बदलाव आया है, यहां तक की सभी समाजों के प्रत्येक स्तर पर भी। उच्च उपभोक्तावाद और भौतिकवादी संस्कृति में पोषित नयी पीढ़ी अस्तित्व में आयी है। तेज रफ्तार और आश्चर्यजनक परिवर्तन एक के बाद एक तेजी से बदल रहे हैं, यहां तक की समाज रूपी बड़ी इमारत जिस नींव पर खड़ी है उसमें भी ये बदलाव आ रहे हैं। गाँधी व अन्य विद्वान, जो मूल्य आधारित सामाजिक रूपान्तरण पर बल देते हैं, आज की कम्प्यूटर पीढ़ी का विरोध करते नजर आते है जो नये, मौज मस्ती के संसार के अलावा और कुछ नहीं जानते प्रत्येक व्यक्ति की प्राथमिकताओं और लगाव को पुनः परिभाषित करना, नया आकार देना जैसी बातें आज या तो कल्पना लोक माना जाता है या इस संसार के लायक नही है। नयी समाज व्यवस्था में जो महसूस किया गया वह था, जीवन सम्बन्धी मूल्यों जैसे चेतना, चरित्र, नैतिकता, मानवीय त्याग इत्यादि महत्वपूर्ण नहीं रहे हैं अथवा अप्रासंगिक हो गए हैं। सामान्य तौर पर भौतिक सफलता या प्राप्तियों के पीछे भागना ही प्रगति के रूप में देखा जाता है। भौतिक विकास को ही साधारण तौर पर, विकास के रूप में समझा और विकसित किया जाता है। ऐसा दिखाई देता है कि अनगिनत वस्तुओं की सूची में सबसे नया नाम 'मानव' का जुड़ा हैं जिसकी कीमत या मूल्य का आकलन, पैसे और केवल पैसे पर उसके अधिकार से होता है।

गाँधी को आशा थी कि रचनात्मक कार्यक्रम आशा का स्त्रोत बनेंगे और आमजन तथा कामगारों के बीच पुल का काम करेंगे तथा जिन लोगों के नाम से यह सब किया जाएगा उनके साथ सीधा सम्बन्ध बनाएगें। इस सम्बन्ध में शार्प के विचार थे-

"साधारण तौर पर थोड़े-थोड़े हिस्सों में प्रयास कर पुनर्निर्माण करने के स्थान पर स्वनात्मक कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं की कल्पना, सामाजिक पुनर्निर्माण को अन्तर्सम्बन्धित कार्यक्रम के रूप में थी। यह कार्यक्रम, नये समाज को मूलभूत सिद्वान्तों द्वारा एक करने तथा विशिष्ट कार्यो के आपसी जुड़ाव के रूप में दिखाई दिया। सम्पूर्ण योजना को क्रियान्वित करते हुए - जैसे-जैसे कार्य आगे बढ़े यदि पुनरीक्षण की आवश्यकता हो - यह सम्भव था कि इसके विशिष्ट भागों (हिस्सों) के साथ आगे कार्य किया जाए ताकि सम्पूर्ण कार्य में अपनी भागीदारी दे सके। ' गाँधी द्वारा दिए गऐ रचनात्मक कार्यो का बाहरी स्वरूप, संक्रमण काल में भारत का आर्थिक और सामाजिक उद्वार करना था, व्यवहार में अहिंसा इसका सार था और सत्याग्रह इसका मूल सुंदर रूप। रचनात्मक कार्यनीति गाँधी के उन साथियों और शिष्यों के प्रति प्रतिक्रिया का प्रतिबिम्ब भी था जो सत्याग्रह को केवल राजनीतिक कार्यसाधक समझते थे। गाँधी जानते थे कि उनके ज्यादातर अनुयायी सत्याग्रह और अहिंसा के मूलभूत सिद्वान्तों के रूप में नहीं मानते। उनके लिए (अनुयायियों) अहिंसा व सत्याग्रह केवल युद्व नीति थी। आध्यात्मिक अथवा नैतिक चरित्र ही सत्याग्रह को सविनय अवज्ञा से अलग पहचान देता या जो या तो नये शासकों की समझ से परे था अथवा उन्हें तीव्र आर्थिक प्रगति को रामबाण औषधी मानने के विचार की धुन सवार थी। गाँधी की सोच जबकि बुद्विमत्ता पूर्ण व स्थिरता देने वाली थी और वृहत्तर रूप में अन्तर्निहित क्षमताओं और स्वदेशी को स्थापित करने पर निर्भर थी, परन्तु राजनीतिक क्षेत्र में गाँधी के शिष्यों ने राजनीतिक और आर्थिक दोनों ही क्षेत्र में अलग मॉडल अपनाए।

राजनीतिक दासता से मुक्ति 1947 में मिल गई थी जब ब्रिटेन ने भारत को स्वतन्त्र कर दिया था। दुर्भाग्य से पश्चिम की सांस्कृतिक विजय का जादू चलता रहा, अब इसके साथी समाजवादी और अमेरीकी क्षेत्र से आये थे।

प्रत्येक व्यक्ति यह आकलन करने में असफल रहा कि इस उभरते परिदृश्य में हिंसा, गरीबी, गंदगी की अंधेरा गहरा हुआ है और अहिष्णुता, तथा सांस्कृतिक राजनीतिक पतन बढ़ा है। आध्यात्मिक परम्पराओं का पोषण करना मात्र कर्मकाण्डी दावे रह गए। गाँधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी विनोबा भावे और महान् जैन संत आचार्य तुलसी महाप्रज्ञ नये कार्यक्रमों के माध्यम से जन सामान्य को शामिल करते हुए अहिंसा के क्रियात्मक स्वरूप की मशाल को लेकर आगे चले। उनका सारा ध्यान आध्यात्मिक परम्पराओं के पोषण और पुन: स्वीकृति दिलवाने पर केन्द्रित था। उन्होंने अलग तरीके अपनाए। जहाँ विनोबा भावे और जयप्रकाश नारायण ने भूमि बटवारे के काम को हाथ में लिया और गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों में सुविधाजनक व उचित फेर बदल किया वही आचार्य तुलसी व आचार्य महाप्रज्ञ ने अणुव्रत और जीवन विज्ञान के माध्यम से व्यक्ति में परिवर्तन लाने के कार्य पर अपना ध्यान केन्द्रित किया।

यह देखा जा सकता है कि बहुत से कारणों से, गाँधी ने जो रचनात्मक कार्यक्रम दिए थे, वे गाँधीवादी संस्थाओं और सर्वोदय आन्दोलन के साहसिक प्रयासों के बावजूद भी आमजन

का ध्यान अपनी ओर बनाए रखने में असफल रहे। जैसा कि मैरी किंग ने विश्लेषित किया, "कि दुर्भाग्य से रचनात्मक कार्य बहुत से लोगों को आकर्षित नहीं कर सका और ये कार्य सविनय अवज्ञा की तरह उत्तेजित करने वाले या खुशनुमा नहीं था, यह अत्यधिक आत्मानुशासन जनभावना और समर्पण चाहता था, इसलिए यह लोकप्रिय नहीं हुआ। " स्वतन्त्रता के बाद का नेतृत्व और कुछ हद तक भारतीय जनता का एक बड़ा भाग गाँधी द्वारा दी गई जन भावना और आत्मानुशासन के लिए तैयार नही थी। गाँधी के शिष्य डी. जी. रामचन्द्रन इस स्थिति का सह बताते हुए कहते हैं -

" रचनात्मक कार्य योजना, जैसा कि इसके बारे में प्राय दावा किया जाता है, एक क्रान्तिकारी कार्यक्रम है न कि केवल राहत कार्य है। हर प्रकार का राहत कार्य अपने आप में अच्छा और यदि रचनात्मक कार्यो को इस तरह देखा जाए और इसमें कमी भी मिले तो भी यह अपने आप में बहुत अच्छा कार्यक्रम हैं। रचनात्मक कार्यक्रम में होने वाले बहुत सी ठोस योजनाऐं निश्चित रूप से राहत कार्य है। परन्तु रचनात्मक कार्यो की कल्पना, योजना और उसे क्रियान्वित करना अपने आप में क्रान्तिकारी कार्य था। आखिर क्रान्ति की आधारभूत विशेषता क्या है? लोग कल्पना करते हैं कि हिंसा और रक्तपात हर क्रान्ति की विशेषता होती हैं यह मूर्खतापूर्ण विचार है। निश्चित रूप से बहुत सी क्रान्तियां हिंसक और खूनी हुई हैं। परन्तु इतिहास में हुई महानतम क्रान्तियां प्रेम व शान्ति से हुई है न कि घृणा और हिंसा से। यूनानी दार्शनिकों, भारतीय ऋषियों, बुद्व, क्राइस्ट और मोहम्मद साहब के ज्ञान से आयी सम्पूर्ण क्रान्ति की तुलना में फेंच, अमेरीकी, रूसी, चीनी व दूसरी अन्य क्रान्तियां बहुत छोटी हैं। इन क्रान्तियों (युनानी, भारतीय आदि) ने व्यक्तियों के चरित्र और सोच को पूरी तरह बदल दिया और सभ्यता और संस्कृति का नया युग प्रारम्भ हुआ। केवल राजनीतिक क्रान्ति और महान् पैगम्बरों के द्वारा बुद्वि और सोच से सम्पूर्ण जीवन में परिवर्तन की क्रान्ति में अन्तर केवल इतना ही नहीं है कि पहली केवल क्रान्ति है जबकि दूसरी केवल नैतिक रूपान्तरण अथवा सुधार मात्र हैं। इसके विपरीत प्रत्येक क्रान्ति में नैतिक रूपान्तरण होना चाहिए। प्रत्येक राजनीतिक क्रान्ति भी केवल तभी तक वैध है जब यह मानव समाज के चरित्र में नैतिक परिवर्तन करता है। "

6.5 रचनात्मक कार्यक्रमों की समकालीन उपादेयता

उभरते राष्ट्रीय और वैश्विक परिदृश्य में समाज परिवर्तन और व्यक्ति के सशक्तिकरण में रचनात्मक कार्यक्रमों की प्रासंगिकता नही हैं जब पीड़ित मानवता वैश्विकरण के विकल्प ढूढ़ रही है, ऐसे में पर्यावरण के प्रति संवेदनशील, सम्पूर्ण व स्थिर समाज व्यवस्था के लिए गाँधीवादी सोच और प्रयोग पूरे विश्व के विभिन्न भागो में अब बाजार द्वारा संचालित अर्थव्यवस्था और वैश्विकरण के क्रान्तिकारी विकल्प के रूप में सामने आये हैं जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए न्याय को सुनिश्चित करता है। शायद इसके लिए जरूरी है अन्धी नकल करने के स्थान पर उभरते राष्ट्रीय और वैश्विक स्थितियों की वास्तविकताओं को रचनात्मक और वास्तविक रूप में बदलना। अचानक से 'अर्थशास्त्र ने मानव प्रयासों की सभी शाखाओं को पीछे छोड़ दिया है और उन सभी को महत्वहीन स्थिति में धकेल दिया है। धार्मिक और नैतिक मूल्य,

जो सदियों से सभ्यता को पोषित और स्थायित्व प्रदान कर रही थी, अब महत्वपूर्ण नहीं माने जाते।

परम्परागत समाज टूटने की खतरनाक स्थिति मे हैं और हिंसा के प्रति विश्वास बढ़ रहा है। अनैतिक राजनीतिक व्यवस्था और उदेश्यहीन सांस्कृतिक विरासतों का पोषण करने, सैनिक तंत्र को आवश्यकता से अधिक प्रोत्साहन देना, गरीबी और पोषण का बने रहना, जो जैसी स्थितियों की ओर विश्व के भाग्य निर्माताओं का ध्यान नहीं है। सभी बहादुरीपूर्ण बयानों और पहल के बावजूद, उदासीनता और एक प्रकार की सनक, जिससे नैतिकता और मूल्यों को गलत कहा गया, धरती माता के और मूल्यों के प्रति उदासीनता और जिस तरह प्रकृति विदोहन यह सोच कर किया जा रहा है कि पृथ्वी के नीचे अथाह सम्पति छुपी है जिसे मनचाहे भौतिक सुखों के लिए प्रयोग किया जा सकता है। और इसी प्रकार के अन्य बाधक और गलत प्रवृतियों से, जिन से आधुनिक सभ्यता जुड़ी है, खतरनाक संकेत दे रही है।

परिदृश्य पूरी तरह असहाय नजर आता है और किसी भी व्यक्ति का अपने भविष्य पर कोई नियन्त्रण होता प्रतीत नहीं होता। उन लोगों की धन जमा करने की प्रवृति इसे बढ़ा रही है जो बाजार द्वारा दी जा रही सभी चीजों से आकर्षित होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हम सभी पर एक संतुष्ट न होने वाले लोभ ने नियन्त्रण कर लिया है और अपनी आवश्यकताओं को सीमित करने का कोई प्रयास कहीं भी नहीं किया जा रहा है। यह वैश्यिक दृश्य बन गया है और कोई भी देश इससे मुक्त नहीं है। इस प्रकार एक सामान्य व्यक्ति स्वयं को पूरी तरह निराशा और असहाय स्थिति में पाता है। वह भौतिकवाद और उपभोगवाद की शक्तिशाली आधी में पीछे छोड़ दिए गए हैं। जीवन का एकमेव उद्देश्य आर्थिक कल्याण के रूप में सामने आया है और जिस तरह मूल्य व्यवस्था को कुचला गया है उससे यह बडा प्रश्न उठता है हम कही जा रहे है?

आयोजक, हिमायती और इस उभरती प्रवृति के स्वयंभू संरक्षक इन विरोधाभासों की ओर से आँख मूंदे है:-

- जब सम्पूर्ण गरीबी विश्वस्तर पर घटी, सापेक्ष गरीबी बढी।
- पहले से अधिक शिक्षित हुए परन्तु सूचना और तकनीकी तक पहुँच केन्द्रीकृत हुई हैं।
- पहले से अधिक देश प्रजातांत्रिक हुए हैं लेकिन शक्ति का अत्यधिक केन्द्रीकरण हुआ है।
- जबरदस्त क्रान्ति हुई है पर अलगाव बढ़ा है, परिवार टूटे, व्यक्तिगत स्तर पर संवादहीनता अपने चरम पर पहुँची है।

आज प्रगति का अर्थ है आर्थिक प्रगति और अचानक, मानव वस्तु के स्तर पर आ गया जिसकी कीमत उन चीजों से निर्धारित हो रही है जो मानव व पशु में भेद करते है।

ग्लोबल कम्युनिटी द्वारा प्रस्तावित इस शताब्दी के विकास के उद्देश्यों की पहुँच गाँधी के सोच संघर्ष के नजदीक नजर आती है गाँधी ने सर्वोदय समाज के लिए ऐसे आदर्श रखे थे जैसे न्याय दिलवाना और समाज के अन्तिम व्यक्ति तक सभी समान अवसर पहुँचाना। अब जबकि बड़े अवसर सामने आ रहे हैं और बहुत से क्षेत्रों में समझदारीपूर्ण और प्रशंसनीय सुधार

हुआ हैं लेकिन साथ ही साथ खेदजनक कमियां भी विद्यमान है जिसे सामूहिक कार्य करके दूर किया जाना चाहिए।

इस खाई को पाटने के लिए प्रत्येक नागरिक की महत्वपूर्ण भूमिका है और सभी को साहस और दृढ़ता से आना होगा जैसा गाँधी ने अपने देशवासियों को प्रेरित किया था।

6.6 निष्कर्ष

सभी समाजों में कुछ ऐसे नायक या नायिका होती है जिनके दर्शन व जीवन से प्रेरित होकर उनके

प्रशंसक या शिष्य उनकी याद अथवा उनके कार्य को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। फिर भी गाँधी के सुझाव जो उन्होंने लिखे और किये, उनके बाद भी जीवित और फलदायी है। गाँधी के कार्यो, विचारों और सोच के महत्व पर सम्पूर्ण विश्व में उभरते परिदृश्य के संदर्भ में एक बहस छिड़ी हे जो उनके चिन्तन के महत्व की पड़ताल कर रही है। आज जिसे 'गाँधी दर्शन' के नाम से जाना जाता है वह उनके जीवन, कार्यो, व्यक्तियों और समाज के सम्बन्ध में उनके विचारों से विकसित हुआ है।

गाँधी के कार्यो और जीवन से यह प्रकट होता है कि वे विचारों के महान् संगम थे। उन्होनें पश्चिम से बहुत कुछ सीखा और उसे आत्मसात् किया और विश्व के सभी प्रमुख धर्मो की शिक्षाओं की ग्रहण किया। उन्होनें टॉलस्टाय, रस्किन और अन्य पश्चिमी विचारकों तथा भारतीय विद्वानों और चिन्तकों से विचार लिये। इस प्रक्रिया में वे अनेको विचारों और प्रमुख व्यक्तियों के मिलनें का आधार बन गए। ' एक व्यवहारिक आदर्शवादी, जैसा वे स्वयं के लिए कहते थे, के रूप में उन्होने अपने पीछे मानव उद्वार की समृद्ध परम्परा छोडी है। संदेश देने के लिए बल देने पर वे काफी प्रचलित कहावत मेरा जीवन ही मेरा संदेश है' देते थे। गाँधी के परम्परागत तरीके का दार्शनिक में पुकारना या वर्णित गलत होगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि उनकी जीवन के प्रति अपना अलग दर्शन था।

गाँधी की विशिष्ट पहचान का एक महत्वपूर्ण पहलू उनकी प्रशंसा दिए गए वे कथन है जो बताते है कि जो वे कहते थे वही करते थे, इसी से वे 20 वीं शताब्दी के महान् व्यक्ति के रूप में जाने गाँधी की विशिष्ट पहचान का एक महत्वपूर्ण पहलू उनकी प्रशंसा में दिए गए वे कथन है जो बताते है कि जो वे कहते थे वही करते थे, इसी से वे 20 वीं शताब्दी के महान् व्यक्ति के रूप में जाने गए। मान्यताओं, धारणाओं और अनुमानों पर आधारित व्यवस्था विकसित करने के स्थान पर गाँधी ने कठोर परिश्रम से यह प्रदर्शित किया कि अनुनय शिक्षा व्यक्तिगत त्याग और सामूहिक हित था लाभ हेतु सार्वजनिक सहमति विकसित करके कैसे सामाजिक रूपान्तरण प्रभावित हो सकता है। गांधी की पहल अपने आप में अलग थी और पूरे विश्व में अनगिनत स्वतंत्रता सेनानी तथा सामाजिक सुधारक गांधी से प्रेरित हुए और आज पूरे विश्व में जीवन के सबसे गंभीर दर्शन और सामाजिक परिवर्तन की बहस में गाँधी के पूर्ण विकास की सोच की बहस सबसे अधिक हो रही है।

गाँधी की समाज व्यवस्था की सोच, जिसमें सभी बराबर है और सभी समान अवसरों के लिए योग्य है, आज सर्वोदय समाज के रूप में जाना जाता है। गाँधी ऐसे समाज को राम-राज्य

के रूप में वर्णित करते हैं। दुर्भाग्य से राम-राज्य शब्द को धार्मिक कट्टरता की ध्वनि प्रदान करने के कारण गैर व्यक्ति के मन में संदेह उत्पन्न हो गया है। गाँधी ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा कि उनका राम अयोध्या के हिन्दू राजा नही थे, न ही वे राज्य में राजा दशरथ के पुत्र थे। यह एक हिन्दू राज नही था अपितु 'सत्य और न्याय पर आधारित राज्य था जहाँ किसी के साथ भेद-भाव नही होता। यह पृथ्वी पर ईश्वर का राज्य है।

गाँधी मानते थे कि इस व्यवस्था में मानव का ही सर्वोच्च महत्व हैं और जन्म, रंग, प्राप्तियां, धार्मिक विश्वास, लिंग आदि कोई ऐसा कारक तत्व नहीं हैं जिनसे व्यक्ति का महत्व खत्म हो अथवा न्याय समाप्त हो या उसे विशेषाधिकार मिले। इस प्रकार गाँधी दर्शन मानव, उसके समाज और प्रकृति और उसके समान्तर विकास के चारो ओर घूमता हैं। यह विकास तभी सम्भव है जब जीवन के प्रति सम्मान जैसा बौद्व लाना चाहते थे, प्रत्येक व्यक्ति के लिए विश्वास के रूप में आये। जीवन ईश्वर द्वारा प्रदत्त मूल्यवान उपहार है और मानव एक श्रेष्ठ रचना। गाँधी के अनुसार जीवन का लक्ष्य इसे श्रेष्ठतर बनाना है जो केवल मिले-जुले और पूर्ण दृष्टिकोण से ही सम्भव है। एक अन्तर्सम्बन्धित और अन्तर्निर्भर दृष्टिकोण समय की आवश्यकता है। गाँधी ने इंगित किया कि सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं को अलग-अलग नहीं किया जा सकता।

विकास से गाँधी का तात्पर्य है समान्तर रूप से और दैवीय संरचना के अनुसार, बिना जीवन की मूल लय को बिगाड़े, सभी भागो में सुधार करना।

ऐसा न करना मानव व्यक्तित्व में केवल असंतुलन और कुरूपता ही उत्पन्न करेगी, इस प्रकार समाज के सभी अंगो के समान्तर रूप से विकास को सुनिश्चित करने के प्रयत्न करने की आवश्यकता है। यह विचार ही पूर्णतावादी है। संक्षिप्त में यह सम्पूर्ण विकास हैं।

6.7 अभ्यास प्रश्न

1. 'गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों' के बारे में आप क्या जानते है?
2. गाँधी जी द्वारा दिए गए विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रम कौन से थे?
3. गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों की प्रासंगिकता बताइये।

6.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. टरचेक,रोनाल्ड जे.,गाँधी: स्ट्रगलिंग फॉर ऑटोनॉमी, विस्तार पब्लिशर्स ,नई दिल्ली,2006
2. परेल, ए.जे., हिन्द स्वराज एंड अदर राइटिंगस, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2004
3. वेबर, थॉमस, गाँधी: एज डिस्पिप्लिन एंड मेंटर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2007
4. गाँधी एम. के., कन्सट्रक्टिव प्रोग्राम: इट्स् मीनिंग एण्ड प्लेस, नवजीवन पब्लिषिंग हाउस्, अहमदाबाद.2006

इकाई - 7

गाँधी आश्रम और अहिंसात्मक आन्दोलन

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 आश्रम की प्रेरणा एवं उद्देश्य

7.3 फोनिक्स आश्रम

7.4 टॉलस्टाय आश्रम

7.5 सत्याग्रह आश्रम

7.6 साबरमती आश्रम

7.7 आश्रम का सविनय अवज्ञा आन्दोलन में योगदान

7.8 सेवाग्राम

7.9 निष्कर्ष

7.10 अभ्यास प्रश्न

7.11 संदर्भ ग्रंथ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- गांधी द्वारा कौन से आश्रम कब और कहाँ स्थापित किए गए थे इसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- इन आश्रमों के उद्देश्य तथा संचालन के बारे में जान सकेंगे।
- श्रेष्ठ व्यक्तित्व निर्माण तथा आदर्श समाज की स्थापना के सन्दर्भ में इनकी भूमिका को समझ सकेंगे।
- स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए इनके द्वारा प्रदान किए गए योगदान का आकलन कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तवना

महात्मा गांधी ने अपने सक्रिय राजनीतिक जीवन में ऐसे आश्रमों की स्थापना की जहाँ उन्होंने अपने दर्शन को व्यावहारिक रूप प्रदान करने या उन्हें परीक्षण करने का प्रयास किया। जहाँ दक्षिण अफ्रीका में गांधी जी ने 'फिनिक्स एवं टॉल्सटाय फार्म' की स्थापना की वहीं भारत में उन्होंने सावरमती आश्रम, सत्याग्रह आश्रम और विनोबा भावे के माध्यम से सेवाग्राम की स्थापना की थी। इन आश्रमों के माध्यम से गांधीजी आदर्श समाज की स्थापना के लिए ऐसे कर्मठ व्यक्तियों का निर्माण करना चाहते थे जो निस्वार्थ रूप से अपनी सेवायें प्रदान कर सकें। आश्रम से जुड़े ऐसे व्यक्तियों को सत्य, अहिंसा, स्वावलम्बन, स्वदेशी सत्याग्रह इत्यादि के सन्दर्भ में प्रशिक्षण प्रदान करने का प्रयास किया गया। उन्हें सादगी, शारीरिक श्रम, चर्खा

चलाना तथा अनेक रचनात्मक कार्यक्रम के सन्दर्भ में शिक्षा एवं प्रशिक्षण दिया गया। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन तथा स्वतंत्र भारत में गाँधीवादी

उद्देश्यों को साकार करने में इन आश्रमों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

7.2 आश्रम की प्रेरणा एव उद्देश्य।

गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम ऐसी प्रयोगशालाये थी जहां वे और उनके सहयोगी जीवन - पद्धति के एक विकल्प के रूप में अहिंसा के साथ प्रयोग करते थे। आश्रम उनके विभिन्न आन्दोलनों को संचालित करने वाले सदस्यों के लिए आवश्यक अनुशासन एवं चेतना विकसित करने के साथ-साथ आर्थिक एवं नैतिक समर्थन भी उपलब्ध करवाते थे। गाँधीजी का विश्वास था कि पारस्परिकता, सादगी तथा कठोर। परिश्रम पर आधारित आश्रम-जीवन एक ऐसे संयमवाद को विकसित करेगा जो समाज-सुधार के लिए सिद्ध होगा। उन्हें आश्रमों को स्थापित करने की प्रेरणा प्राचीन भारतीय गुरूकुलों, तपोवनों, दक्षिण-अफ्रीकी ईसाई ट्रेपिस्ट-संघो, स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशनों तथा गोखले के भारत सेवक-समाज ते, मिली थी। इस दिशा में वे हेनरी थोरो से भी अत्यधिक प्रभावित थे। गाँधीजी सत्य एवं अहिंसा पर आधारित एक ऐसी स्वच्छ एवं निष्पक्ष सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक-व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे जिसमें व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का संर्वागीण विकास कर सके। उनका मानना था कि ऐसी व्यवस्था की स्थापना की दिशा में प्रयास करने हेतु कुछ ऐसे व्यक्ति तैयार करने होंगे जो सामान्य व्यक्तियों को तैयार कर एक आदर्श-समाज की स्थापना करने में सहायक हो सके। गांधीजी ने ऐसे व्यक्तियों को तैयार करने के लिए एक औपचारिक प्रशिक्षणालय की स्थापना की दिशा में सोचा। भारतीय इतिहास, परम्पराओं एवं संस्कृति के अनुरूप ऐसे प्रशिक्षणालय को ' 'आश्रम ' के नाम से अभिहित करने का निर्णय लिया गया। आश्रम-व्यवस्था के माध्यम से गांधी कुछ लोगों को सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, स्वावलम्बी आदि के लिए तैयार करने हेतु औपचारिक प्रशिक्षण देने और ऐसे व्यक्ति प्रशिक्षण प्राप्त कर समाज के लोगों को इस दिशा की ओर प्रेरित व अग्रसर करने का उद्देश्य रखते थे।

आश्रम व्यवस्था की स्थापना, आश्रम का संगठन, आश्रम में प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम एवं। कार्यक्रम का निर्धारण, उनका समय-समय पर मूल्यांकन गांधीजी की प्रशासन एवं प्रबन्ध विज्ञान में रूचि, एवं परिज्ञान का परिचय देती है। आश्रम एक प्रकार से गांधी की प्रयोगशाला थी और आश्रमवासी उनके यंत्र।

गांधीजी द्वारा स्थापित आश्रम-व्यवस्था का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर हम पायेंगे की ये आश्रम ' 'वसुधैव कुटुम्बकम' ' के सिद्धान्त पर आधारित हैं तथा इन आश्रमों मे ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, जातिप्रजाति आदि के लिए कोई स्थान नहीं था। आश्रम के जीवन का सार था-

' 'जात पात पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई। "

गाँधीजी एक संयुक्ता परिवार के सदस्य थे और अपनी माता पुतली बाई के विचारों से अत्यंत प्रभावित थे। उनकी आश्रम सम्बन्धी व्यवस्था में उनकी माता का प्रभाव स्पष्टत: देखा

जा सकता है 'यथा प्रार्थना, उपवास, एकादशी, प्रदोष-व्रत आदि, अल्पाहार, शाकाहार तथा ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन भी आश्रमवासियों के अनिवार्य व्रतों में से था।

गाँधी द्वारा स्थापित 'आश्रम' ' निःसंदेह पहले दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह से तथा - में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े हुए थे। गाँधीजी का विश्वास था कि समाज की सेवा का अर्थ " आत्मदर्शन' है और आश्रमवासियों का यह प्रमुख उद्देश्य था।

गाँधीजी ने दक्षिणी अफ्रीका तथा भारत में आश्रम के द्वारा सत्याग्रहियों को प्रशिक्षण देकर भावी आन्दोलन में भाग लेने हेतु तैयार किया तथा सविनय अवज्ञा आन्दोलन को इससे निर्णयकारी ' बल प्राप्त हुआ।

गाँधीजी ने बचपन से ही आश्रम जैसी झाँकी अपने संयुक्त परिवार (पोरबन्दर) में देखी थी और उस सामुदायिक जीवन से गाँधीजी ने यह पाठ सीखा कि ' 'हमें न केवल मनुष्यता के लिए जीना है परन्तु हमें मनुष्यता में जीना है। " (Living not only for mankind but also living in mankind) गाँधीजी ने आश्रमों को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित किया। सभी आश्रमवासी एक परिवार के सदस्य की भांति वहाँ रहते थे अथवा आश्रम एक परिवार की भांति था। सभी आश्रमवासी यहां तक बच्चे भी कुछ कार्य करते थे। आश्रम में नौकर या सेवक नहीं रखे जाते थे।

कहा जाता है कि जहां सन्त रहते हैं वहीं आश्रम होता है, पर ऐसी बात नहीं है। सन्त तो पर्वत की गुफाओं में, एकान्त कुटियाओं में और खुले जंगलों में भी रहते हैं, लेकिन जहां पर संत के साधक अपनी साधना अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु करते हैं उसे भी आश्रम कहते हैं। आश्रम के अपने उद्देश्यों के साथ कुछ नियम भी होते हैं। इसी भावना से ओत-प्रोत दिखाई देते हैं गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम। गाँधीजी के अनुसार आश्रम का अर्थ सामूहिक धार्मिक जीवन से था और गाँधीजी के अनुसार आश्रम उनके स्वभाव में ही था।

आश्रम स्थापना के पीछे गाँधीजी की भावना यही थी कि व्यक्ति स्वयं को पहचाने तथा सम्पूर्ण समाज को अपना ही परिवार समझे। प्रेम, अहिंसा, सत्य समानता एवं इन सबसे बढ़कर मानवता की भावना का विकास करें। उनकी मान्यता थी कि सभी प्राणी एक ईश्वर की संतान है, न कोई उच्च है न कोई निम्न, ईश्वर के लिए सभी प्राणी समान है, फिर मानव-मानव में भेद कैसा?

7.3 फोनिक्स आश्रम

जब गाँधीजी सन् 1895 में दक्षिण-अफ्रीका आये तब वे न महात्मा थे न ही नेता तथा दक्षिण अफ्रीका के बारे में भी उन्हें तब तक कोई विशेष जानकारी नहीं थी। किन्तु दक्षिण-अफ्रीका की समस्याओं के सम्बन्ध में संघर्ष करते-करते उन्होंने अपने आपको दो दशकों के लम्बे प्रवास-काल में एक धनाढ्य वकील से एक सफल जनसेवक नेता बना लिया। गाँधीजी में सामुदायिक-जीवन बिताने का प्रयोग करने की अभिलाषा प्रारम्भ से ही विद्यमान थी। सन् 1903 के आसपास गाँधीजी के चारों ओर ऐसे लोग एकत्रित होने लगे थे जो उनकी योजनानुसार सहकारी-जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार थे। सन् 1903 में गाँधीजी ने ' 'इण्डियन

ओपिनियन' (Indian Opinion) के माध्यम से भारतीय समुदाय की सेवा करने तथा उसे संगठित करने का निर्णय लिया। जोहन्सबर्ग के पास प्लेग फैल जाने के कारण उन्हें रस्किन की पुस्तक ' 'अनटू दिस लास्ट' ' में उल्लिखित रूपरेखा के आधार पर एक साम्यवादी-कृषि-समुदाय स्थापित करने का विचार आया। उन्होंने डरबन पहुंचने पर 'इण्डियन ओपिनियन' ' को सहकारी आधार पर चलाने का निर्णय लिया और प्रेस तथा उसके कर्मचारियों के लिए एक कृषि-फार्म खरीदा। कर्मचारियों को प्रतिमाह अग्रिम वेतन दिया जाता था तथा वर्ष के अन्त में बचे हुए सम्पूर्ण लाभ को उनमें ही वितरित कर दिया जाता था। गाँधीजी ने इस क्रान्तिकारी योजना में सभी कर्मचारियों को सम्मानित किया और एक ओर 'इण्डियन ओपिनियन' ' को प्रकाशित करने का खर्च कम किया तो दूसरी ओर कर्मचारियों के जीवन में गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास किया। नेटाल की उस सुन्दर भूमि को ' 'गार्डन कॉलोनी' का नाम दिया गया जहां यूरोपीय एवं भारतीय कर्मचारी भाईचारे की भावना से रहते थे तथा एक दूसरे. की सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभावित थे। प्रेस के सह-स्वामी ' 'व्यावहारिक' ' को यह योजना पसन्द नही आई और उसने अपना हिस्सा (Share) गांधीजी को बेच दिया। इसके बाद डरबन से चौदह मील दूर फोनिक्स रेल्वे स्टेशन से अढाई मील दूर पिजंग नदी के किनारे एक सौ एकड भूमि खरीदी गई। इसके लिए गाँधीजी द्वारा प्रारम्भ मे एक हजार पौण्ड तथा बाद में पांच हजार पौण्ड निवेश किये गये। उस स्थान को 'फोनिक्स' ' नाम इस नये समुदाय के प्रयोगात्मक स्वरूप को देखते हुए दिया गया था। कि पौराणिक दन्तकथा है कि ' 'फौनिक्स ' पक्षी बार बार मरकर जीवित हो जाता है अर्थात् वह कभी नहीं मरता।! गांधीजी भी अपने इस प्रयोग को इतिहास में अमर कर देना चाहते थे।

सन् 1904 में अक्टूबर एवं नवम्बर माह में ' 'इण्डियन-ओपिनियन' ' प्रेस को से फानिक्स में स्थानान्तरित करने का निर्णय लिया गया। फोनिक्स में भवन-निर्माण की सामग्री प्रदान। की गई। कुछ ने टीन की चद्दरें तथा भवन-निर्माण की सामग्री प्रदान की। कुछ भारतीय कारीगरों तथा बढ़इयों, जिन्होंने गाँधीजी के साथ ' 'बोअर युद्ध' ' में काम किया था, की सहायता से एक महीने के भीतर ही प्रेस के लिए भवन तैयार कर दिया गया। सांपों तथा जंगली घास से भरे सुनसान प्रदेश में यह कार्य अत्यन्त दुष्कर था। गाँधीजी कलात्मकता के बजाय कठोर संयम पर अधिक जोर देते थे।

डरबन से फोनिक्स तक भारी प्रेस मशीनों को ले जाने में तीन नदियों तथा उबड-खाबड रास्ते के कारण कठिनाई हुई। उन्हें सोलह बैलो द्वारा खींचकर फोनिक्स तक पहुंचाया गया। बैस्ट नामक व्यक्ति ने तेल का इंजन लगाकर बिजली की आवश्यकता को पूरा किया क्योंकि उसके अभाव में चार आदमी मिलकर छपाई मशीन का हाथों से पहिया घूमाने के लिए आवश्यक थे। धीरे-धीरे समाचार पत्र के स्वरूप में भी सुधार किया गया। गाँधीजी उन लोगों से भी काम ले लेते थे जो थक चुके हों अथवा जिन्हें उस काम के सम्पादन का दायित्त्व नहीं सौंपा गया हो। बैस्ट ईश्वर से प्रार्थना करता था और सभी व्यक्ति इससे काफी प्रेरित होते थे। सम्पूर्ण फोनिक्स आश्रम में सहयोग का ऐसा वातावरण बना कि अब समाचार-पत्र स्वालम्बन के आधार पर नियमित रूप से छपने लगा। भाड़े के व्यक्तियों तथा पशुओं से सहायता कभी-कभी ही ली

जाती थी। यप्तपि अन्य स्त्रोतों तथा गाँधीजी की वकालत के पारिश्रमिक से होने वाली आय सन् 1909 तक कम पड़ने लगी फिर भी यह निर्णय लिया गया कि ' 'इण्डियन-ओपिनियन' ' कम से कम एक पृष्ठ का तो छपता ही रहेगा। फोनिक्स आश्रम पर भी आन्तरिक दबाव बढ़ता चला गया।

बन्दी-सत्याग्रहियों के बच्चों को भी वहां रखा गया जिनके कारण आश्रम-वासियों पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ बढ़ता चला गया। इस अवसर पर गाँधीजी ने ऐसे संघर्ष काल को अपनी आध्यात्मिक शक्ति तथा सेवा करने का उपयुक्त अवसर मानने का आह्वान किया। उनके अनुसार फोनिक्स न केवल अपने जीवन तथा समाचार पत्र के स्तर को सुधारने का अवसर ही था अपितु समाचार-पत्र के माध्यम से शिक्षा-प्रसार तथा जनहित से सम्बन्धित कार्यो के सम्पादन का भी अच्छा स्थान था। वे लोगों को आपस में झगड़ा। न करने तथा उपलब्ध साधनों के दुरूपयोग न करने का परामर्श देते थे। जहां तक हो सके लोगों को प्रयासों से आश्रम की आर्थिक स्थिति को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

सत्याग्रह आन्दोलन में व्यस्त रहने तथा लन्दन में जाकर भारतीयों के हितों के लिए कार्य करने के कारण गाँधीजी आश्रम व्यवस्था पर अधिक ध्यान नहीं दे पाये। अत: उन्होंने पद से सम्बन्धित कार्य-भार अपने एक निकट सहयोगी मदनलाल गाँधी को सौंपा। गाँधी के अभाव में आश्रम अपना पूर्ववत् कार्य सम्पादन में सक्षम नहीं हो सका क्योंकि मूलत: आश्रमवासियों का आधार गाँधीजी के प्रति निष्ठा तथा भारतीय हितों के प्रति लगाव था, न कि प्रत्येक के लिए स्थान प्रदान करना। फिर भी एक समुदाय के रूप में फोनिक्स-आश्रम। चलता रहा और उसने धीरे-धीरे एक छोटी बस्ती का स्वरूप धारण कर लिया। वहां रहने के लिए कुछ और जमीन खरीदी गई तथा कुछ नये मकानों का निर्माण किया गया। जॉन कोर्डिस ने वाष्प-स्नानागार का भी किया। फोनिक्स आश्रम में विस्थापितों की संख्या निरंतर बढती गई। गाँधीजी ने कस्तूरबा गाँधी तथा भतीजे गोकुलदास को लम्बे समय तक वहां रखा। जोहान्सबर्ग पहुंचकर गाँधीजी ने पोलक को रस्किन की पुस्तक ' 'अनटु दिस लास्ट' ' का उन पर पड़े प्रभाव के बारे में बताया। पोलक भी इससे बड़ा प्रभावित हुआ और इसके परिणामस्वरूप वह भी गाँधीजी की योजना में खुशी-खुशी शामिल हो गया। पोलक ने ' 'ट्रान्सवाल क्रिटिक' ' के उप सम्पादक के पद को त्याग दिया और वह ' 'इण्डियन ओपिनियन' ' के लिए कार्य करने लगा। पोलक बैस्ट के साथ उसके बंगले में रहने लगा और दोनों ब्रह्मचर्यत्व का पालन करते हुए अपना भोजन स्वयं पकाते थे और सादा जीवन व्यतीत करते थे। गाँधीजी के प्रभाव के अन्तर्गत दोनों का अविवाहित जीवन बदल गया। पोलक आराम और सामाजिक जीवन बिताने लगा तथा गाँधीजी ने उसे अपनी वकालत में सहायता देने हेतु बुला लिया। गाँधीजी ने ही दोनों को विवाह करने का परामर्श दिया था।

बैस्ट की पत्नी श्रीमती पाईवेल (गांधीजी उसे ग्रेनी कह कर पुकारते थे) आश्रम की महिलाओं को सिलाई-बुनाई सिखाती थी। वही उनको संगीत आदि का भी अनौपचारिक शिक्षण प्रदान करती थी। पोलक का विवाह सबके लिए अनुकरणीय हो गया और भारतीय आश्रम-वासी भारत से अपने परिवारों को बुलाने लगे। फोनिक्स आश्रम शनै: शनै: एक छोटे गाँव का स्वरूप

धारण करता चला गया। उसमें निवास करने वाले परिवारों की संख्या बढ़ती चली गई। उस समय तक गांधीजी ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण पूर्णत: पुष्ट एवं विकसित नहीं कर पाये थे किन्तु सादगी एवं आत्मनिर्भरता पर उनका विश्वास सदैव बढ़ता चला गया। उन्होंने अपने स्वयं के ऊपर होने वाले व्यय को कम करने का प्रयास शुरू किया। वे अपने कपड़े स्वयं धोते थे। स्वयं ही अपने सिर के बाल काटते थे। जोहन्सबर्ग तक वे पैदल आते और पैदल ही जाते थे। अपना काम अपने हाथों से करना फोनिक्स आश्रम का प्रमुख सिद्धान्त था। आटा-पीसने के लिए हाथों से चलाई जाने वाली चक्की खरीदी गई। इस कार्य में आश्रम में रहने वाले बच्चों को भी कभी-कभी शामिल किया जाता था। इसे बच्चों की खेलकूद की एक प्रक्रिया का हिस्सा ही बना दिया गया था। प्रत्येक व्यक्ति को शौचालय भी साफ करने का दायित्व दिया गया था। कुल मिलाकर गाँधीजी की दृष्टि से अभी चरित्र निर्माण की प्रक्रिया ही चल रही थी। फोनिक्स की यह कहानी मुख्यत: गाँधीजी के एक सफल बेरिस्टर, सार्वजनिक कार्यकर्त्ता तथा भारतीय समुदाय के प्रवक्ता बन जाने से सम्बन्ध रखती है। वे ' 'इण्डियन ओपिनियन' ' के छपने के लिए अधिकांश विषय-सामग्री को तो उपलब्ध करवाते ही थे साथ ही अपने पास से प्रतिवर्ष चार पांच हजार पौण्ड वित्तीय सहायता भी प्रदान करते थे। इस दौरान एक वकील तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में उनकी प्रतिष्ठा में अत्यधिक वृद्धि हुई। इसी समय पाश्चात्य लोगों में भी उनका प्रभाव निरन्तर बढ़ता चला गया। इसी के फलस्वरूप एक जर्मन यहूदी वास्तुकार हर्मन केलनबाख तथा एक पादरी जॉसफडाक ने अपना सर्वस्व गाँधीजी को सौंप दिया और गाँधीजी के साथ रहने लगे। इनके साथ गाँधीजी भगवद्गीता, ईसा के उपदेशों, मेटलैण्ड तथा टॉलस्टाय के उपदेशों पर लम्बी-लम्बी बहस करते थे। गाँधीजी अपनी सेवाओं के बदले में दी गई अनेक कीमती भेंटों को कस्तूरबा के घोर विरोध के बावजूद भी समुदाय को समर्पित कर देते थे।

गाँधीजी के जीवनी लेखकों ने यह आरोप लगाया है कि फोनिक्स आश्रम सत्तावादी (Authoritarian) रीति से चलाया जाता था और एक सामन्त की भांति गाँधीजी ही उस समाचार-पत्र एवं कृषि-फार्म के स्वामी थे। किन्तु इस आलोचना से सहमत होना कठिन है क्योंकि गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व का उनके सहयोगियों पर बहुत प्रभाव था और वे आश्रम में नैतिक परामर्श तथा अनुनय के माध्यम से ही अपने साथियों का दिल जीत लेते थे। उनका आश्रम में सदैव कठोर संयम एवं कायिक श्रम, अहिंसा, अपरिग्रह तथा समभाव पर जोर रहता था। गाँधिजी पर लगाये गये इस आरोप से भी सहमत नहीं हैं कि उन्होंने अपनी पत्नी तथा पुत्रों की अवहेलना की। उनके द्वारा अपने आपको तथा अपने निर्णयों को सही मानने की प्रवृत्ति को भी उपयुक्त बताया गया है। गाँधीजी का नेतृत्व वस्तुत: करिश्मात्मक शैली का था और वे आत्म-त्याग एवं विशुद्ध सेवा भावना पर जोर देते थे, किन्तु वे अपने अनुयायियों में विवेकपूर्ण अनुशासन की भावना को विकसित करना चाहते थे। सन् 1906 से पहले भले ही उनकी जीवन-शैली उनके आदर्शों के उतनी अनुकूल नहीं रही हो किन्तु वे प्रारम्भ से ही ' द्वारा दृष्टव्य मार्ग पर आगे बढ़ते चले गये। उन्होंने सभी सहयोगी विदेशी तथा हिन्दू परिवारों में समभाव ' निस्वार्थ-सेवा-भावना कूट-कूट कर भरने का प्रारम्भ से ही भरसक प्रयास किया और इस उद्देश्य में वे अत्यधिक सफल भी हुए वे 'फोनिक्स-आश्रम' ' को इन्हीं आदर्शों पर

संस्थापित करते हुए उसे स्वास्थ्य, कृषि एवं शिक्षा का सर्वोत्कृष्ट केन्द्र बना देना चाहते थे। इसी का परिणाम यह हुआ कि फोनिक्स ने न केवल दक्षिण-आफ्रीका' में गाँधीजी को सत्याग्रही दिये अपितु उनमें से अनेक गाँधीजी से पहले और बाद में भी उनके कार्यो एवं -उद्देश्यों ' को आगे बढ़ाते रहे

7.4 टॉलस्टाय - फार्म

टॉलस्टाय फार्म को फोनिक्स-आश्रम योजना के पूरक के रूप में स्थापित किया था। दक्षिण-अफ्रीका में संचालित सत्याग्रह के द्वितीय चरण से सम्बन्धित निर्धन भारतीय परिवारों के की समस्या आयी तो गाँधीजी ने उन्हें बसाने हेतु टॉलस्टाय-फार्म स्थापित कर उन्हें वहां बसाकर उनकी, तत्सम्बन्धी समस्या का निवारण किया। इसे गाँधीजी ने ट्रान्सवाल में फोनिक्स आश्रम के ढंग पर एक ऐसे -परिवार-मण्डल के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया था जहां सत्याग्रहियों के परिवार आत्म- रहते हुए एक नवीन प्राकृतिक (प्रकृति से तादात्म्य स्थापित) सादा, निर्मल तथा स्वच्छ जीवन का निर्वाह कर '। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु केलनबाख ने जोहन्सबर्ग से इक्कीस मील दूर ग्यारह सौ एकड़ का फार्म खरीद कर गाँधीजी को सौंप दिया। गाँधीजी तथा सत्याग्रहियों को बिना किसी किराये तथा बिना किसी धन के 30 जून, 1910 में तब तक के लिए दे दिया जब तक कि सत्याग्रह का संघर्ष समान्त नहीं हो जाता। गाँधीजी फोनिक्स। के अनुभवों का लाभ उठाते हुए इसे एक सफल संस्था बनाना चाहते थे।।

7.5 सत्याग्रह आश्रम

जो लोग फोनिक्स आश्रम छोडकर भारत आये और रवीन्द्रनाथ टैगोर के 'शान्ति निकेतन'' में आकर रहने लग गये थे, गाँधीजी ने भारतवर्ष पहुंचकर उन पर शान्ति निकेतन पद्धति से भिन्न अपने नवीन शैक्षिक-प्रयोग करने शुरू कर दिये। उन्होंने अहमदाबाद के समीप आश्रम स्थापित करने का निर्णय लिया। यह नवीन आश्रम सत्याग्रह-आश्रम के नाम से अभिहित किया गया। उन्होंने 25 मई सन् 1915 को इसकी रखी। स्वयं गाँधीजी ने भी यह अनुभव किया कि वे अपने ' 'जन्म स्थान' ' वाले प्रान्त में रहकर मातृ-भाषा के माध्यम से देशवासियों की अधिक सेवा कर सकते हैं। अहमदाबाद बुनाई-कताई के लिए प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है। वित्त की कमी को वहां के गुजराती धनिकों ने पूरी कर दी थी। वस्तुत: पहले आश्रम अहमदाबाद के निकट ' 'कोचरब' ' नामक गांव में स्थापित किया गया था। अहमदाबाद के एक वकील देसाई ने गाँधीजी एवं उनके पच्चीस स्त्री-पुरूष साथियों को अपना बंगला भेंट कर दिया था। सब लोगों ने उसके नामकरण हेतु सेवाश्रम, सेवामन्दिर और तपोवन आदि अनेक नाम सुझाये लेकिन गाँधीजी ने उसका नाम ' 'सेवाश्रम' ' रखना इस आधार पर पसन्द किया कि यह नाम किसी पद्धति विशेष से सम्बन्धित नहीं था। गाँधीजी ने शीघ्र ही आश्रम के लिए एक संविधान के रूप में आचरण के नियम बनाये तथा उन्हें अपने मित्रों के मध्य ' विमर्श हेतु रखे। गाँधीजी ने वस्तुत: पहली बार अपने इस प्रयोग को आश्रम - ' 'धार्मिक पुरूषों का समुदाय'' ' कहा है। ' 'धर्म' ' शब्द से उनका तात्पर्य सत्य एवं अहिंसा में दृढ़ विश्वास से था जिन्हें

सत्याग्रह के प्रयोग के ' अत्यावश्यक माना गया है। कोचरब में स्थापित सेवाश्रम में कोई नौकर आदि की व्यवस्था नहीं थी। सभी को शाकाहारी भोजन, कायिक श्रम, समाज सेवा, ब्रह्मचर्य, प्रार्थना आदि का कठोरतापूर्वक पालन करना होता था। आश्रमवासियों को नौ संकल्प लेने होते थे जो कठोर संयमवाद के प्रतीक थे। यथा-सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, विदेशी वस्तु-बहिष्कार, अभय एवं अस्पृश्यता। इन संकल्पनाओं का विवेकपूर्ण एवं रचनात्मक ढंग से पालन करना आवश्यक था। गाँधीजी के अनुसार इन्हें हिन्दू-परम्परावाद की अभिव्यक्ति नहीं माना जाना चाहिए। गाँधीजी अस्पृश्यता, जाति-प्रथा तथा ऐसी ही अनेक अन्य सामाजिक बुराईयों जैसे बाल विवाह, देवदासी प्रथा, पशुबलि आदि के सभी सख्त विरोधी थे। वहां बच्चों एवं वयस्कों के साथ समान व्यवहार किया जाता था। सबको समान रूप से कताई-बुनाई, कृषि, गोपालन आदि से सम्बन्धित कार्य करने होते थे। बच्चों को धन एवं सुख सुविढाओं की तृष्णा एवं भूख से दूर रखा जाता था। गांधीजी ने अपने आश्रम में जब अछूतों को सम्मिलित किया जो उसका वहां जबर्दस्त विरोध किया गया। किन्तु वे अपने सिद्धान्तों पर अडिग रहे। अस्पृश्यता का विरोध करने के लिए गाँधीजी ने कष्ट सहन करते हुए विरोधियों का हृदय जीतने का प्रयास किया। स्वयं गाँधीजी के परिवार अर्थात् कस्तूरबा भी उनसे असहमत थी परन्तु सभी को अन्ततः गाँधीजी के विचारों से सहमत होना पड़ा। इस प्रकार गाँधीजी ने विचार एवं व्यवहार दोनों के द्वारा समस्त विश्व के समक्ष अस्पृश्यता के विरूद्ध बिगुल बजाया।

यद्यपि लगातार पांच वर्षो तक किसी भी प्रकार के सत्याग्रह करने का अवसर नहीं आया किन्तु जब भी ऐसा अवसर आया आश्रमवासियों ने अपनी असाधारण प्रतिज्ञा का परिचय देते हुए आश्रम में प्राप्त शिक्षा एवं अनुभव के आधार पर क्रान्तिकारी काम करके दिखा दिया।

7.6 साबरमती - आश्रम

कोचरब में अत्यधिक सफाई का ध्यान रखते हुए भी प्लेग फैल गया और आश्रमवासियों के बच्चों की सुरक्षा कठिन हो गई। यह सोचकर गाँधीजी ने पंजाभाई हीराचन्द की सहायता से साबरमती जेल के समीप, कोचरब से तीन चार मील दूर साबरमती नदी के किनारे एक अन्य महत्त्वपूर्ण स्थान देखा। यह स्थान गाँधीजी को बहुत पसंद आया। इस नये स्थान पर कच्चे मकान, पाठशाला, भोजनालय, रसोईघर, पुस्तकालय तथा हथकरघा हेतु बनातशाला आदि मगनलाल गाँधी के निरीक्षण तथा देखरेख में बनवाये गये। गाँधीजी के परिवार के लिए निवास स्थान नदी के समीप मुख्य स्थान से थोड़ा सा पीछे बनाया गया। जो भी स्त्री, पुरूष बालक आश्रम में रहते थे उन्हें गाँधीजी ने सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, शरीर श्रम आदि आश्रम-व्रतों की दीक्षा दी जाती थी। भारत के दलित-पीड़ित मानव-समाज की सेवा के लिए तैयार किया और उन सबको अपने कुटुम्बी-जन मानकर प्रेम, करूणा, ममता तथा वात्सवल्य की अमृतवर्षा की।

आश्रम से सेवा का और सेवा की पद्धति का भाव सहज ही प्रकट होता है। साबरमती आश्रम में उस समय कुछ बहन-भाई व बच्चे मिलाकर लगभग एक सौ पचास थे। आश्रम में विभिन्न प्रकार के और विभिन्न प्रान्तों के लोग थे। आश्रमवासियों में मेल-मिलाप आपसी भाई चारे व प्रेम भावना का विकास व व्यवस्था बनाये रखना आश्रम की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी।

आश्रम निश्चित कार्य-पद्धति एवं नियमावली के अनुरूप कार्य करता था। आश्रम की दिनचर्या प्रात: चार बजे जगने की घण्टी से प्रारम्भ होकर रात नौ बजे सोने की घण्टी तक सुव्यवस्थित तरीके से चलती थी। प्रात: 4:20 से 5:00 बजे तक सर्व धर्म प्रार्थना, आश्रम भजनावली एक भजन और रामधुन तथा सात दिन में एक बार गीता-पारायण होता था। शाम की प्रार्थना में गीता के दूसरे अध्याय के अंतिम 19 श्लोक, भजन और रामधुन गायी जाती थी। गाँधीजी के अनुसार सुबह-शाम की ये प्रार्थनायें आश्रम की सबसे बड़ी खुराक एवं औषधि थी। गाँधीजी भोजन के बिना जिन्दा रह सकते थे, लेकिन प्रार्थना के बिना जिन्दा रहना उनके लिए असम्भव था। उनके दूसरे कामों में भंग पड़ सकता था, लेकिन प्रार्थना में भंग पड़ना सम्भव नहीं था। अपने जीवन के अंतिम दिन (30 जनवरी, 1948) की प्रार्थना में वे थोड़ी देर से आये थे अगर उनको बोलने का अवसर मिला होता तो वे यही कहते कि ' 'मैं प्रार्थना में देर से आया उसकी यह सजा या चेतावनी भगवान ने मुझे ने हैं। ''

सुबह-शाम की प्रार्थना तो उनकी आत्मा को सात्विक पोषण देने वाली खुराक ही थी। उनका कहना था - ' 'रात की जडता और निद्रा में बुरे स्वप्न भी देखे हों तो उन्हें धोने के लिए प्रार्थना साबुन का काम करती है और हमारा नया जीवन-कार्य प्रार्थना से आरम्भ होता है। प्रार्थना दिन की थकान को दूर करने और दिन के व्यवहार में हमसे कुछ भूलें हुई हों तो उनका प्रायश्चित करने तथा प्रार्थना के वाद हम भगवान का नाम रटते हुए निद्रा देवी की गोद में शांतिपूर्वक सो सकें, इसके लिए अमोघ औषधि के इमान है। '

आश्रम में नौकर रखने का रिवाज था ही नहीं। टट्टी-सफाई से लेकर भोजनालय तक का सारा काम आश्रम-वासी बहन-भाई ही करते थे। बीमारी को छोडकर किसी काम के लिए कोई अपवाद नहीं था। गाँधीजी स्वयं इन कार्यो में हिस्सा लेते थे। कताई, बुनाई, धुलाई, खेती, गौशाला, चर्मालय शिक्षण आदि काम सभी आश्रमवासी करते थे। कोई काम छोटा और बड़ा नहीं था। जो काम जिसको सौंपा जाता था वह उसे बड़े ही आत्मीय भाव से सम्पन्न करता था। यहां तक कि वर्षो साथ में रहने पर भी एक दूसरे की जाति तक जानने का विचार किसी के मन में नहीं आता था।

हरिजनों का प्रवेश आश्रम में निषिद्ध नहीं था। उनके लिए आश्रम के द्वार खुले थे, दादाभाई, उनकी पत्नी, दानी बहन और दूध पीती लक्ष्मी को आश्रम के नियमों के पालन करने की स्वीकृति देने पर आश्रम में प्रवेश दिया गया। दादाभाई के आश्रम में प्रवेश करने से पूरे अहमदाबाद में खलबली मच गई और नौबत यहां तक आई कि आश्रम को मिलने वाली आर्थिक मदद बंद हो गई। आश्रम की अन्य बहनें भी दानीबहन को घृणा की दृष्टि से देखती थी। गाँधीजी ने दोनों को धीरज से काम लेने को कहा। गाँधीजी ने हरिजन बस्ती में जाने की सोची परन्तु ठीक समय एक सेठ तेरह हजार रूपये सहायता हेतु थमा कर चला गया। तत्पश्चात् अनेक हरिजन आश्रम में आये और लोगों का विरोध भी शांत हो गया।

गाँधीजी एक पिता की भांति आश्रमवासियों के लिए थे तथा आश्रम की सारी समस्याओं का समाधान भी वे एक मुखिया की भांति करते। इस तरह आश्रम एक परिवार की तरह हो मया। खाने की बात किसी को समझानी हो तो गाँधीजी उसमें घण्टों लगा देते थे। अपने हाथ से

बीमार को देते, एनिमा देते और स्पंज करते। कुष्ठरोगी जैसे भयंकर रोगी की मालिश करते। बीमारों को नित्य देखते और उनके खान-पान, नींद व आराम के समाचार जानकर आगे की सब बातें बता देते। अपने हाथ से माँ की तरह परोसकर खाना खिलाते। आश्रम-परिवार अपने ही ढंग का अनोखा परिवार था। आश्रम जीवन की अपनी निराली विशेषता थी। जिसको उसका रंग लगा उसने पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा। गाँधीजी ' 'आश्रम' ' के द्वारा ' 'विश्व-कुटुम्ब' ' की भावना सिद्ध करना चाहते थे। इसीलिए आश्रम के द्वारा सभी बहन-भाइयों के लिए थे और सभी को आश्रम में स्थान मिलता था।

चरखे का स्थान आश्रम में महत्त्वपूर्ण था क्योंकि ' 'हिन्द स्वराज्य' ' में भी गाँधीजी ने यह माना था कि चरखे के जरिये हिन्दुस्तान की कंगालियत मिट सकती है। जिस रास्ते भुखमरी मिटेगी उसी रास्ते स्वराज्य मिलेगा। आश्रम के खुलते ही उसमें करघा शुरू किया गया था, करघा प्रयोग से आ अपरिचित थे। काठियावाड़ और पालनपुर से ही करघा मिला और वहीं से सिखाने वाले मिले। मगनलाल गाँधि ने बुनने की पूरी कला सीख ली थी। फिर आश्रम में एक के बाद एक नये-नये बुनने वाले तैयार हुए। आश्रमवासियों ने मिल के कपड़े पहनना बंद कर दिया और निश्चय किया कि हाथकरघे पर देशी मिल के सूत का बुना हुआ कपड़ा ही पहनेंगे।

गाँधीजी ने चरखे को राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक स्वतंत्रता का सर्वश्रेष्ठ साधन माना है, परन्तु करोड़ों ने उसे नहीं अपनाया है। अगर अहिंसा का प्रतीक समझकर चरखे को देश ने अपनाया होता, तो आज की विषम स्थिति नहीं होती।

इमामसाहब ने, जो दक्षिण अफ्रीका से ही गाँधीजी के साथी थे तथा अपनी पुत्री अमीनाबहन और दामाद गुला मरसूत कुरेशी के साथ साबरमती-आश्रम में रहते थे, खादी का महत्त्व हिन्दू और मुसलमान तथा अन्य सभी के लिए बताते हुए कहा ' 'खादी तो हिन्दु, मुसलमान, पारसी, सिक्स, ईसाई सभी के लिए एकसी है। हिन्दू स्त्रियां तो बाहर निकल कर दूसरे काम भी कर सकती हैं लेकिन मुसलमान स्त्रियां तो वह भी नहीं कर सकती। मुसलमान पर्दानशीन औरतों के लिए तो चरखा रोजी का बहुत ही अच्छा साधन है। मुसलमान जुलाहे बुनते धुनते हैं। अगर हिसाब निकाला जाए तो खादी से मुसलमानों को पहुंचने वाला फायदा हिन्दुओं से कम नही पाया जाएगा।

गाँधीजी कहते थे कि आश्रम एक महाशाला हे, जिसमें एक निश्चित समय ही शिक्षा के लिए नहीं होता बल्कि सारे समय शिक्षा का कार्य चलता रहता है। ऐसा हर आदमी, जो आत्मदर्शन, संयमदर्शन की भावना से आश्रम में रहता है शिक्षक भी है और विद्यार्थी भी है। जिस काम में वह कुशल है उसका शिक्षक है जो काम उसे सीखना है उसका वह विद्यार्थी है।

7.7 आश्रम का सविनय अवज्ञा आन्दोलन में योगदान

जिस प्रकार दक्षिण-अफ्रीका के आश्रमों ने दक्षिण-अफ्रीकी-सत्याग्रहों में योगदान किया था उसी प्रकार सन् 1930 के सविनय-अवज्ञा आन्दोलन ने साबरमती-आश्रम को इतनी प्रतिष्ठा दिलाई कि भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता के सारे दाग स्वत: ही समाप्त हो गये। इसके पहले भी साबरमती के कार्यकर्त्ताओं ने. चम्पारन अहमदाबाद और बारदोली के आन्दोलनों में भाग लेकर

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। सविनय अवज्ञा आन्दोलन अथवा नमक सत्याग्रह के स्वरूप एवं संचालन का सम्पूर्ण भार गाँधीजी पर ही था। 12 मार्च सन् 1930 से प्रारम्भ होने वाले डाण्डी-अभियान ने स्वराज के महान् आदर्श हेतु आश्रम के 78 सदस्यों को यह अवसर प्रदान किया कि वे अपनी निष्ठा एवं क्षमता का प्रदर्शन कर सकें। गाँधीजी ने इन सभी के नाम ' 'यंग इण्डिया' ' में पहले ही प्रकाशित कर दिये थे। 24 दिन के लम्बे प्रयास में 241 मील की यात्रा की गई। गाँधीजी ने घोषणा की कि ' 'हम ईश्वर के नाम पर यह अभियान शुरू कर रहे हैं। '' गांधीजी ने इन साथी सत्याग्रहियों के माध्यम से भारतीय जनजीवन से सम्बद्ध कर्मशीलता विजय-श्री का वरण किया। सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय खुले आकाश के नीचे प्रार्थनाएं की जाती थी तथा सभी आश्रमवासी प्रतिदिन एक घण्टा कताई करते थे और अपनी डायरी लिखते थे। इस यात्रा की आधी में अनेक स्थानीय प्रशासन धराशायी हो गये क्योंकि तीन सौ नब्बे गांवों के सरपंचों ने अपने पदों से त्यागपत्र दे दिये थे। धीरे-धीरे अभियान-कर्त्ताओं की संख्या सैकड़ों से हजारों हो गई जिनमें व्यापारी, स्त्रियां आदि भी शामिल थी। सम्पूर्ण विश्व का ध्यान गांधीजी तथा इन विविधतापूर्ण सत्याग्रहियों पर केन्द्रित हो गया। समुद्र किनारे स्थित डाण्डी पहुंचकर गाँधीजी ने गैर-कानूनी ढंग से नमक चुनते हुए नमक कानूनों को तोड़ दिया और इसके बाद सामूहिक असहयोग आन्दोलन, जिसमें गैर-कानूनी ढंग से व्यापक स्तर पर नमक बनाने तथा विदेशी वस्त्रों एवं शराब की दुकानों का बहिष्कार प्रारम्भ हुआ। इस आन्दोलन में लाठियों एवं डण्डों की मार खाते हुए आश्रम की अनेक महिलाओं ने शौर्य एवं साहस का प्रदर्शन किया। ज्यों-ज्यों आन्दोलन आगे बढ़ा तो गाँधीजी को बन्दी बना लिया गया और हजारों सत्याग्रहियों को बहुत बुरी तरह से मारा गया और पीटा गया और अन्ततः जेल में बंद कर दिया गया। गाँधीजी को यह जानकर अत्यन्त खुशी हुई कि आश्रमवासियों ने इतना महान् त्याग एवं कष्ट-सहन का प्रदर्शन किया है तथा उन्हें जबर्दस्त तरीके से पीटा गया है और जेल में बन्द कर दिया गया है। गाँधीजी ने कहा कि यह तो बहुत ही -सम्मान की घड़ी है। उन्होंने इसे अपनी पद्धतियों एंव आदर्शो की विजय बताया। अनेक आश्रमवासी भारत स्वराज दिलाये बिना आश्रम जाने को तैयार नहीं थे। जिन लोगों को गाँधीजी के साथ जेल जाने का मौका नहीं मिला वे रास्ते में आने वाले गाँवों में ही रहकर जनता की सेवा में संलग्न हो गये। इस प्रकार गाँधीजी का रचनात्मक कार्यक्रम स्थान-स्थान पर साकार रूप लेने लगा। '

7.8 सेवाग्राम

मध्य-भारत में वर्धा नामक स्थान पर रमणीकलाल मोदी ने 14 जनवरी, 1921 को जो आश्रम स्थापित किया था उसे गांधीजी के निर्देश पर विनोबा भावे ने सम्भाला। विनोबा भावे ही। गाँधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी कहे जाते हैं। विनोबा भावे ' 'कोचरब आश्रम' ' के महत्वपूर्ण सदस्य थे। विनोबा भावे ने कोचरब एवं साबरमती से प्रेरणा एवं प्रशिक्षण लेकर सेगांव (बाद में सेवाग्राम) में सत्याग्रह-आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम का उद्देश्य गाँधीजी ने ग्राम सेवा तथा ग्राम विकास रखा। उन्होंने कहा कि यह आश्रम मौलिक रूप से रचनात्मक कार्यो के सम्पादन से सम्बन्धित होगा। राजनीति आदि के लिए इसमें कोई स्थान नहीं होगा। गाँधीजी ने

कांग्रेस-जनों पर रचनात्मक कार्य करने के लिए अत्यधिक जोर दिया था। उन्होंने कहा था कि उसके अभाव में वे एक दिन भी देश का शासन चलाना नहीं सीख सकते। सन् 1930 के बाद में सामूहिक कार्यो के बजाय स्थानीय सुधारों एवं ग्रामोन्नति की गतिविधियों में व्यक्तिगत प्रयासों पर जोर देने लगे। फिर भी कांग्रेसियों ने गाँधीजी के कार्यक्रमों के प्रति केवल मौखिक-प्रशंसा का भाव ही जताया। कांग्रेस की विभिन्न समितियों ने राजनीति में रूचि रखने वाले छोटे-छोटे ठेकेदारों से अथवा स्थानीय सत्ताधीशों से ही सम्बन्ध रखा। इन गतिविधियों से गाँधीजी ने आत्म-पीड़ा महसूस की। उन्होंने राजनीति के बाहर ऐसे व्यक्तियों से सम्पर्क करना शुरू किया जो ग्राम-सेवा के कार्यो में संलग्न होने को तैयार हों। इस दिशा में उनका एक समृद्ध मारवाड़ी उद्योगपति जमनालाल बजाज से सम्पर्क हुआ जिसने साबरमती तथा अन्य ' कार्यक्रमों में भारी वित्तीय सहायता की थी। वह गांधीजी द्वारा स्थापित बीस समाज सुधार संगठनों में तेरह का सदस्य था। इस तरह इसी मार्ग पर चलते हुए गाँधीजी ने स्वयं के कार्यक्रमों को राजनेताओं के प्रभाव से बचाया। गाँधीजी ने यह पहले ही अनुभव कर लिया था कि सन् 1922 जैसी घटनाओं, जिसमें सत्याग्रह के समाप्त होते ही जनता का जोश ठण्डा पड़ गया था, बचा जा सके। उन्होंने सन् 1933 में हरिजन-सेवक संघ स्थापना की जिससे सवर्णो को अछूतों की सेवा के लिए संगठित किया जा सके। किन्तु हरिजन सेवा का, खादी-कार्यक्रम जैसे विशाल कार्यक्रमों की भांति नहीं किया जा सका। उनका उच्च तथा परम्परागत ' द्वारा विरोध किया गया। हरिजन-सेवक-संघ उच्च जाति के हिन्दुओं को अधिक उन्नत सफाई में दीक्षित भंगियों के रूप में तैयार करना था जो शौचालय साफ करने, हरिजनों के लिए मन्दिर, तालाब, स्कूल खोलने का कार्य करता था। चारों तरफ से इसके लिए गाँधीजी का विरोध हुआ लेकिन उनके भारी प्रचार ' प्रसार ने अन्ततोगत्वा सफलता को समीप ला दिया।

सन् 1934 में कांग्रेस छोड़ने से पूर्व गाँधीजी ने अखिल भारतीय ग्रमिण उद्योग संघ (All India Villages) की स्थापना की थी। गाँधीजी द्वारा कांग्रेस छोड़ने कदम से नेहरूजी व्यक्तिगत रूप से बहुत दुःखी थे किन्तु गाँधीजी निःस्वार्थ ग्राम सेवा के कार्यक्रमों को अपनाना चाहते थे जिसके लिए कांग्रेसी तैयार नहीं हुए तो स्वयं उन्होंने ही कांग्रेस छोड़ दी। हरिजन-सुधार एवं ग्राम सेवा, ग्राम-विकास का कार्य भी गाँधीजी की उपस्थिति एवं प्रेरणा से ही सम्भव हो सकता था। गाँधीजी ने स्वयं को कांग्रेस से दूर रखकर ग्राम-सेवा का संकल्प लिया।

सन् 1933 में साबरमती-आश्रम को बन्द कर दिये जाने के पश्चात् वहां के अनेक आश्रमवासी वर्धा में विनोबा भावे द्वारा स्थापित सत्याग्रह आश्रम में रहने लगे। उस समय गाँधीजी हरिजन-सेवा एवं ग्रामोद्योगों के विकास आदि कार्यो में संलग्न थे। गाँधीजी ने घोषणा की कि उनका साबरमती के पद-चिन्हों पर चलते हुए वैसे आश्रम की स्थापना का कोई इरादा नहीं है। वहाँ गुजरात विद्यापीठ के अध्यापकों ने उनकी प्रेरणा से जनता को शिक्षित करने के लिए गांव को अपनाया (गोद लिया) था। सन् 1934 में जमनालाल बजाज के परामर्श पर गांधीजी ने अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ के मुख्यालय के रूप में वर्धा का चयन किया था। इस स्थान के चयन के अनेक कारण थे, किन्तु सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि इस जिले में जमनालाल स्वयं बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे और वे ही वर्धा आश्रम के प्रमुख वित्तीय

प्रायोजक थे। इसके अतिरिक्त जमनालाल बजाज ने मगनलाल गाँधी की स्मृति में गाँधीजी को नारियों की बीस एकड़ क्षेत्रफल वाला बगीचा दान किया था। इसका नया नामकरण ' 'मगन-बाड़ी' ' नाम से किया गया जो अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का प्रशासनिक मुख्यालय बन गया। अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का प्रबन्ध प्रसिद्ध गांधीवादी अर्थशास्त्री जेसी. कुमारप्पा के हाथ में था। यह एक विचित्र संयोग है कि सेवाग्राम के स्थान चयन के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी व्यक्ति अंग्रेज महिला मेडम स्तैट (मीरा बहन) थी। उसी ने गाँधीजी के ग्राम-योजना की प्रयोगशाला के रूप में इस स्थान का चयन किया था। गांधीजी के साथ मगन-बाड़ी में रहते समय वह एक सिण्डी (Sindi) नामक ग्राम के बीच से गुजरा करती थी। इस गांव में भयानक गन्दगी थी। ' 'हरिजन' ' के नये सम्पादक महादेव देसाई के सहयोग से मीरा बहन ने सिण्डी में सफाई कार्यक्रम शुरू किया। फिर भी गांव वाले गन्दगी फैलाने से बाज नहीं आये। इस असफलता पर गांधीजी ने दो-तीन स्वयंसेवकों की सहायता से मीरा बहन को प्रतिदिन सुबह-सुबह गाँव की सड़कें साफ करने का निर्देश दिया। स्वयं गाँधीजी एक दिन सुबह सफाई-दल के साथ गये और गाँव वालों के समक्ष सादे मिट्टी के शौचालय बनाने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने इन कार्यो के द्वारा उत्पन्न खाद को पैदावार बढ़ाने तथा पूरे वर्ष सब्जी आदि उगाने के काम में लिये जाने का आग्रह किया। सन् 1935 के अन्त में उच्च-रक्त चाप के कारण गाँधीजी का स्वास्थ्य गिर गया। उन पर मगन-बाड़ी के परिवेश का तथा सिण्डी में कोई प्रगति नहीं होने का भी अत्यधिक बुरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने सिण्डी में अकेले ही रहने का निर्णय किया। इसके लिए वहां गाँधीजी तथा मीरा बहन के लिए ईटों का एक कोटेज बनाया गया। गांव के अधिकांश लोग अछूत कहलाने वाले महार-जाति के थे। महारों के अलावा एक दो सवर्ण परिवारों को छोडकर सभी और भी अधिक निम्न कहलाने वाले लोग रहते थे। शीघ्र ही इस गाँव से मीरा बहन को पानी प्राप्त करने की कठिनाई आई। हरेक जाति का अपना अलग कुआ था। एक दिन घूमते समय जब मीरा ने निम्नतम समझे जाने वाले अछूत से पानी ग्रहण कर लिया तो अन्य सभी जातियों ने उसके लिए अपने कुएं का पानी बन्द कर दिया किन्तु अपने कार्य की प्रगति एवं सेवा-सफाई के आधार पर मीरा ने शीघ्र ही गाँव वालों का विश्वास जीतने में सफलता अर्जित कर ली।

जमनालाल बजाज वर्धा जिले के एक प्रसिद्ध व्यापारी ही नहीं थे अपितु वे (बाद में सेवाग्राम) के मालगुजार (मराठा राजस्व-प्रबन्धक) अथवा बड़े जमींदार भी थे, उनको सेगांव की मालगुजारी का 75 प्रतिशत तथा स्थानीय बाबा साहब देशमुख को 25 प्रतिशत माजगुजारी मिलती थी। गांव की कुल जमीन 1550 एकड़ में से 220 एकड़ मालगुजारों के पारा थी और शेष 60 छोटे जमीदारों में बंटी हुई थी। प्रारम्भ में, मीरा बहन ने जमनालाल बजाज द्वारा दिये गये एक खाली गौशाला के स्थान में रहना शुरू किया। सिण्डी में उसके स्थान पर मक्म बाड़ी से आया कार्यकर्त्ता गजानन नामक व्यक्ति कार्य करने लगा। मीरा बहन अपनी इस नई जीवन-शैली के प्रति अति उत्साहित थी। उसने कहा कि ' 'गांव जीवन और सुन्दरता का स्त्रोत है। '' शीघ्र ही उसका उत्साह ठण्डा पड़ गया। इसका कारण यह था कि स्वयं उसका स्वास्थ्य गाँधीजी से विछोह के कारण गिर गया। उसकी सदैव यह तीव्र इच्छा रहती थी कि वह गाँधीजी के पास

ही रहे। जब उसने सुना कि गाँधीजी का रक्तचाप बढ़ गया है तो उसके स्वास्थ्य को और भी अधिक गहरा आघात लगा। गाँधीजी को सेगांव के पास एक आश्रम में ले जाया गया किन्तु जमनालाल बजाज ने आगन्तुकों एवं आश्रमवासियों के द्वारा उनसे सम्पर्क पर पूर्णतया रोक लगा दी। इससे मीरा बहन को गहरा आघात पहुंचा। अन्ततः उसे गाँधीजी से मिलने अनुमति मिली किन्तु उसे गाँधीजी के द्वारा बताया गया कि उनका रक्तचाप और भी अधिक बढ़ जायेगा यदि गांव में नहीं रहेगी। गाँधीजी के स्वास्थ्य में सुधार हुआ और वे डॉक्टरों के परामर्श पर कुछ समय के अहमदाबाद में रहने लगे। परन्तु मीरा बहन ने यह पाया कि गाँधीजी और उसके बीच में एक कृत्रिम दीवार खड़ी हो गई है। इसका कारण यह था कि उसमें गाँधीजी पर एकाधिकार करने की तीव्र भावना उत्पन्न हो गई थी।, और यही उसकी पीड़ा का मुख्य कारण था। उसे पुनः मगनबाड़ी चले जाने के लिए कहा गया। गाँधीजी ने अपने स्वास्थ्य के गिर जाने पर भी सेगांव में ही रहने का निश्चय किया। यद्यपि उनके इस निर्णय का जमनालाल बजाज ने विरोध किया पर गाँधीजी के तर्को के सामने उनकी एक भी नहीं चली। बजाज ने भी सभी प्रकार गाँधीजी को सहायता देने का कार्यक्रम बनाया। सेगांव में उनके लिए झोंपडा बनाया गया। उन्होंने अपने की कोई परवाह नहीं की। उनका झोपड़ा लकड़ी एवं बांस से बनाया गया। सेगांव में 118 डिग्री तक पारा पहुंच। जाया करता था। डाक्टरों ने उनके उच्च रक्तचाप को देखते हुए उन्हें ठण्डे स्थान पर जाने का परामर्श दिया जब वे दक्षिणी भारत की "नन्दी पहाड़ी" विश्राम हेतु गये तब उनकी अनुपस्थिति से ' सेगांव ' का आश्रम के रुप में विकास होने लगा था। यह सबको ज्ञात ही था कि सेगांव का गाँधीजी ने ग्रामीण-जीवन का आदर्श विकासित करने का निर्णय ले रखा है किन्तु वे यह नहीं चाहते थे कि उसकी सफलता केवल उनके निजी विश्वास पर हो। वे स्वयं ग्रामीणों में चेतना जागृत कर यह कार्य सम्पन्न करना चाहते थे। इस प्रयोग की सफलता का आधार वास्तविक रूप में किया गया सुधार था। गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व के ऊपर भरोसा करके ही उनके कार्य करते थे। गाँधीजी यह बिल्कुल भी नहीं चाहते थे कि उनके व्यक्तिगत करिश्मा पर आश्रित रह कर काम किया जाये। फिर भी गाँधीजी इस करिश्मा के शिकार बनते चले गये। अल्पकाल में ही सेगांव सेवाग्राम बन गया और गाँधी जी के इर्द-गिर्द फिर से एक नया आश्रम उठ खड़ा हुआ। वे प्रयास करते रहे कि उनसे मिलने कोई भी नहीं आये। वहां आने वालों के लिए ठहरने एवं खाने की कोई व्यवस्था नहीं की गई फिर भी भारत के वायसराय सहित सभी वर्गो के लोगों के आने जाने वालों का तांता लगा रहता था। सन् 1940 तक वर्धा से सेवाग्राम तक टखनों तक के कीचड़ से भरे रास्ते को पार करके आना पड़ता था। इस तरह गाँधीजी आगन्तुकों को आने से रोक पाने में असमर्थ थे। मीरा बहन के लिए एक मील दूर बरेड़ा गांव में एक झोपड़ी बना दी गई। केवल बलवन्त सिंह तथा मुन्नालाल शाह को सेवाग्राम में रहने की अनुमति मिल पायी। इस प्रकार गाँधीजी का गांव में अकेले रहने का संकल्प कभी पूरा नहीं हुआ। आशा के विपरीत उनकी झोंपड़ी में भीड़ सी, हो जाती थी। फिर और अलग से गाँधीजी के लिए ' 'बापू-कुटीर' ' नामक झोंपडी बनाई गई। ऐसी ही. गांधीजी के सचिवों महादेव देसाई तथा प्यारेलाल के लिए की गई। गाँधीजी ने भी सन् 1932 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने वाले--परचुरे नाम के एक सत्याग्रही के झरते हुए कोढ़ का इलाज करने का काम हाथ में लिया। अन्य डरे हुए लोगों ने भी गाँधीजी को देखकर परचुरे की सेवा

तथा मालिश आदि काम अपने हाथ में लिये। परचुरे ठीक होने लगा और उसने गाँधीजी के निर्देश पर हरिजन एवं सवर्ण हिन्दुओं में परस्पर कराने सम्बन्धी कार्य करने से शुरू किये। सन् 1942 तक तो आगन्तुकों की संख्या और भी अधिक बढ़ और जाल-भाई-रूस्तम जी ने आश्रम के बढ़ते हुए भवनों की संख्या में एक भवन और जोड़ दिया। इस गाँधीजी का सेवाग्राम जे.सी. कुमारप्पा के शब्दों में ' 'भारत की यथार्थ में राजधानी' ' बन गया। गाँधीजी ने अपने भारी भरकम पत्राचार को भी संक्षिप्त करना चाहा और इस कार्य में उन्होंने महादेव देसाई की सहायता ली। सेवाग्राम में डाकघर तक भी नहीं था। गाँधीजी ' 'हरिजन' ' के लिए लेख भी लिखते थे और सभी छोटे-बड़े आगन्तुकों से भेंट भी करते थे। उनका अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ सम्बन्धित कार्य भी बढ़ता गया। वे स्वयं कई अवसरों पर अत्यधिक दुःखी भी हो जाते थे कि सेवाग्राम तथा आस पास के गाँवों में स्वयं अपने हाथों से कोई काम नहीं कर पा रहे हैं और विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रशासनिक कार्यो में ही उलझे हुए रहते हैं। सन् 1936 तक वे 68 वर्ष के हो चुके थे और उनमें स्वाभाविक रूप से एक स्वस्थ व्यक्ति जैसी शक्ति नहीं रह गई थी। राजनीति तथा अन्य कार्यो में उलझे हुए होने के कारण उनका घूमना-फिरना भी बहुत कम हो गया था। उधर सेवाग्राम में भंसाली जैसे पागल अधपागल व्यक्ति भी एकत्रित होते जा रहे थे। चिमनलाल के अनुसार साबरमती में गाँधीजी आश्रम-समुदाय के ' 'पिता' ' थे किन्तु सेवाग्राम की वे "माता" थे। गाँधीजी इस ग्राम जीवन एवं ग्राम सेवा को दिन-प्रतिदिन के सामुदायिक जीवन के अनुभवों से विकसित करना चाहते थे। अतएव उनका मानना था कि वहां ऊपर से थोपे हुए नियम-उपनियम व निर्देशन नहीं होने चाहिए।

संक्षेप में एक आश्रम के रूप में सेवाग्राम का विकास एक योजनाबद्ध कार्यक्रम के स्थान पर राष्ट्रीय मामलों में गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व के प्रभाव का परिणाम था। उनके इस प्रयोग ने ग्राम पुनर्निर्माण के विषय में गाँधीजी के विचारों को जो कि मूलत: मानवतावादी थे, प्रयोगात्मक स्वरूप प्रदान करने का अवसर दिया। नीरस एवं थोथे आंकड़ों के बजाय गाँधीजी प्रत्येक गाव में रहने वाले निम्नतम व्यक्ति की आवश्यकताओं के संदर्भ में काम करते थे। उनके लिए व्यक्ति ही गांव की आधारशिला था। वे सीधे व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक, आधयात्मिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं से जुड़े हुए थे। उनकी मान्यता थी कि ग्राम-सुधार का दायित्व स्वयं व्यक्ति के कन्धों पर डाला जाना चाहिए। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का यह अधिकार है कि उसका पूर्ण आधयात्मिक बौद्धिक तथा नैतिक विकास किया जाये और यह केवल अपने साथी-व्यक्तियों की सेवा के द्वारा ही किया जाना सम्भव था। समाज के प्रति अपने दायित्वों को सम्पादित करने की भावना गीता से ग्रहण की जानी चाहिए। उसके विचार जवाहर लाल नेहरू से भिन्न थे। नेहरू मशीनों द्वारा उत्पादन, भारी उद्योगों के केन्द्रीयकरण, नियोजन, समाजवाद आदि में विश्वास करते थे। गाँधीजी के अनुयायी इन आश्रमों का विकास करने में असमर्थ रहे। इसका प्रमुख कारण था कि स्वयं गाँधीजी अपने करिश्मात्मक व्यक्तित्व के दुष्प्रभावों का प्रतिरोध करने में असमर्थ रहे। आश्रम के अधिकांश स्त्री-पुरूष केवल गाँधीजी के प्रति ही समर्पित थे। यहीं कारण है कि ' 'साबरमती' ' तथा ' 'सेवाग्राम' ' दोनों ही मात्र संग्रहालय तथा राष्ट्रीय तीर्थो के रूप में रूपान्तरित होकर रह गये।

गाँधीजी रूढ़िवाद से सदैव दूर रहते थे। वे अपने चिन्तन एवं दर्शन की गतिशील तथा विकासात्मक व्याख्या करने के पक्ष में थे। वे अपने विचारों एवं व्यवहारों का ' 'पवित्रीकरण' ' नहीं चाहते थे। इसी कारण उन्होंने कहा था कि ' 'गाँधीवाद जैसी कोई चीज नहीं है तथा मैं अपने पीछे कोई भी सम्प्रदाय बनाकर नहीं छोड़ना चाहता। मैंने सरल ढंग से अपने दैनिक-जीवन एवं समस्याओं पर लागू हो सकने वाले शाश्वत-सत्यों को ही अपनी शैली में लागू किया है। '' किन्तु आज उनके सभी आश्रम बदलती हुई परिस्थितियों एवं आकांक्षाओं का नेतृत्व करने में असमर्थ प्रस्तर-प्रतिमायें मात्र बन कर रह गये हैं। उनके पौत्र अरूण गांधी ने ही लिखा है कि ' 'वे आश्रम जहां. बापू रहते थे, जहां उन्होंने काम किया तथा जहां से उन्होंने चालीस करोड़ लोगों को प्रेरणा प्रदान की है वे आज दिखावे की वस्तुएं मात्र बन कर रह गये हैं। उनमें किसी भी प्रकार का कोई गाँधीवाद नहीं है। '' गांधीजी का अन्धानुकरण करने वाले संयमवादियो, चरखा कातनेवालो तथा उपवास करने वाले लोगों में गाँधीजी की तरह आम जनता से सम्प्रेषण. करने की क्षमता नहीं है तथा वे उनकी गतिविधियों में समन्वयन करते हुए चेतना का विकास करने में असमर्थ हैं। राष्ट्र जिस दिशा में जा रहा है उसमें गांधीय-लक्ष्यों एवं गतिविधियों के प्रति सम्मान का अभाव पाया जाता है।

7.9 निष्कर्ष

गाँधीजी. के सभी आश्रमों में अहिंसा के विकासमान सिद्धान्त के आधार पर गाँधीजी के समुदायवाद का विश्लेषण किया गया है। मानव विकास के आदर्श सम्बन्धी गाँधीजी धारणा तथा मानवीय थी। किन्तु उसका मूल आधार कठोर संयमवाद था जिसका लक्ष्य मानव में सरलता, आन्तरिक शक्ति, तथा सांसारिक महत्वकांक्षाओं के प्रति विरक्ति था। वे आत्म-साक्षात्कार के द्वारा मानव की पूर्णता में अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति में विश्वास करते थे। उनके अनुसार मनुष्य की प्रकृति तथा बाह्य परिवेश से उसका सम्बन्ध एक सावयवी समग्र था जिसको अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता। मानव और प्रकृति की इसी।।एकता का अनुभव करते हुए मानव अपनी निहित क्षमताओं का साक्षात्कार कर सकता है। उन्होंने अपने आश्रमों में वही सब करने-कराने का प्रयास किया। दूसरे शब्दों में, शुद्ध-भोजन, शुद्ध-विचार और शुद्ध-कार्य ही व्यक्ति में नैतिकता का विकास तथा अन्ततोगत्वा न्यायपूर्ण समाज का सृजन कर सकते हैं।

आधुनिक राज्य की केन्द्रीयकृत प्रवृत्तियों के विरूद्ध गाँधीजी ने सहकारी, सामंजस्यपूर्ण और स्वावलम्बी समाज की रचना का सन्देश दिया। उनके मानवतावादी विचार हॉब्स की मान्यताओं का प्रत्युतर थे। शाकाहारिता, धार्मिक-परम्परा, निष्काम-कर्म, आत्मत्याग, सेवा आदि उनकी अहिंसा के अंग उपांग थे। इनका ही प्रयोग करके उन्होंने न्यायपूर्ण समाज के निर्माण की सम्भावनाओं को बताया। दक्षिण-अफ्रीका में गाँधीजी के सत्याग्रह एवं आश्रमों का लक्ष्य भारत के दलितों के जीवन को ऊँचा उठाना था। किन्तु उनको आवश्यकताओं की पूर्ति मात्र से परे जाकर सामाजिक रूप से विभाजित देश में एक समग्र सामाजिक - क्रान्ति सृजन करना था। इसके लिए उन्होंने केवल हिन्दू जन समाज की शब्दावली का ही प्रयोग न कर ईसाई, ' मुसलमान, पारसी

आदि सभी से विचार एवं भाव ग्रहण किये। उन्होंने यह सब अपने अस्पृष्यता-निवारण, सुधारों, महिला उत्थान, सह-शिक्षा आदि कदमों को उठाकर बताया।।1

7.10 अभ्यास प्रश्न

1 गाँधी द्वारा स्थापित किए गए विभिन्न आश्रमों का संक्षिप्त परिचय।

2. आश्रमों की स्थापना के पीछे गाँधी की प्रेरणा तथा उद्देश्यों की विवेचना कीजिए।

3. दक्षिण अफ्रीका में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों का संक्षिप्त परिचय एवं गतिविधियों की विवेचना कीजिए।

4. भारत में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी गतिविधियों की विवेचना कीजिए।

5. स्वतंत्रता आन्दोलन में गांधी द्वारा स्थापित किए गए आश्रमों की भूमिका का विश्लेषण कीजिए।

7.11 संदर्भ ग्रंथ

1. गाँधी एम.के., सत्य के साथ मेरे प्रयोग, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, -अहमदाबाद, 1957
2. सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, वीजी देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग ' हाऊस, अहमदाबाद, 1972
3. एम के. गांधी एन इंडियन पेट्रिऑट इन साऊथ अफ्रीका, नटेशन एण्ड कम्पनी, मद्रास, 1909
4. द इयर ऑफ फिनिक्स, टी.के. महादेवन, आरनोल्ड हैनेमेन नई दिल्ली। 1982

इकाई - 8

सविनय अवज्ञा द्वारा अहिंसात्मक संघर्ष निवारण

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 स्वराज के लिए सविनयम अवज्ञा आन्दोलन (1930-31)

8.3 ऐतिहासिक डांडी यात्रा (नमक सत्याग्रह)

8.4 सवज्ञा आन्दोलन (1932-1934)

8.5 संघर्ष निवारण तकनीक - सविनय अवज्ञा आन्दोलन

8.6 निष्कर्ष

8.7 अभ्यास प्रश्न

8.8 संदर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है :-

- सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय की परिस्थितियों का अध्ययन करना
- सविनय अवज्ञा आंदोलन के विभिन्न चरणों की जानकारी देना (सन् 193०-34)
- संघर्ष निवारण की विधि के रूप में सविनय अवज्ञा का परीक्षण करना।

8.1 प्रस्तावना

सविनय अवज्ञा आंदोलन गांधीजी द्वारा मार्च सन् 1930 में पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए प्रथम प्रत्यक्ष प्रयास था। यहां पर पूर्ण स्वराज्य का अर्थ है साम्राज्यवादी ब्रिटेन से समस्त संबंध समाप्त करना एवं दिसम्बर सन् 1920 की लाहौर कांग्रेस में पारित किए गए संपूर्ण स्वराज्य के प्रस्ताव की दिशा में प्रयास करना। सन् 1927 तक पूर्ण स्वराज्य की मांग जोर पकड़ने लगी। इस दिशा में पं. जवाहर नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस और अन्य कई नेताओं के प्रयास सहारनीय रहे। सन् 1928 के कलकत्ता अधिवेशन तक कांग्रेस पूर्ण स्वराज्य की मांग पर अड़ी हुई थी किन्तु गांधीजी के अनुसार यदि ब्रिटिश संसद 31 दिसम्बर 1929 से पहले सर्वदलीय सम्मेलन (1928) में सुलझाऐ हुए 'शासित प्रदेश संविधान' की मांग को मान लेती है। तो स्वीकार्य होगा।

8.2 स्वराज के लिए सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930-31)

अब अगला कदम सविनय अवज्ञा आंदोलन किसी कष्ट निवारण के लिए नहीं अपितु पूर्ण स्वराज्य के लिए था। वैसे तो सन् 1929 के वर्ष कांग्रेस के लिए कुछ प्रगतिशील एवं रचनात्मक कार्य करने के लिए थे। किन्तु इस युवा वर्ग के मानस में पूर्ण स्वराज्य की मांग जोर पकड़ने लगी थी। अभी तक कांग्रेस ने केवल शासित प्रदेश की मांग की थी लेकिन दिसंबर

1927 के अधिवेशन में यह घोषित करने का निर्णय लिया गया कि 'हमारा ध्येय भारतीयों को पूर्ण स्वराज्य दिलाना है। राजनैतिक सुधारों के बनाए गए साइमन कमीशन (1928-29) का बहिष्कार किया गया और कांग्रेस ने शासित प्रदेश का दर्जा प्राप्त करने के लिए स्वयं की एक कमेटी गठित की जिसे लखनऊ में सन् 1928 में हुए सर्वदलीय सम्मेलन में समर्थन दिया गया। दिसंबर 1928 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में सर्वदलीय सभी प्रस्तावित संविधान को स्वीकार किया गया और यह सब कहा गया कि यदि ब्रिटिश संसद इसे 31 दिसंबर 1929 तक स्वीकृत कर लेती है। तो ठीक है अन्यथा कांग्रेस अपनी गतिविधियां संचालित करने के लिए स्वतंत्र होगी। वह अहिंसात्मक असहयोग के लिए लोगों को समझाएगी कि वे कर न दें और मान्य विधियों से सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाएं। जब सरकार ने इन मांगों पर कोई ध्यान नहीं दिया तो दिसम्बर 1929 में लाहौर अधिवेशन के समय कांग्रेस ने अपना सारा ध्यान शासित प्रदेश के दर्जे की मांग ने हटाकर पूर्ण स्वराज्य पर लगा दिया। तक कांग्रेस ने अपने सभी विधानमण्डल के सदस्यों को त्यागपत्र देने को कहा और जनता को चुनावों में भाग लेने से मना कर दिया। देश के लोगों से यह कहा गया कि वे कांग्रेस के रचनात्मक कार्य को प्रोत्साहित करे और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इस बात के लिए अधिकृत किया कि वह सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ करे जिसमें करों को न चुकाना भी सम्मिलित हो। यह 1930 के सविनय अवज्ञा आंदोलन की शुरूआत भर इसके अलावा कांग्रेस की कार्यकारी समिति ने यह निर्णय लिया कि 26 जनवरी। 1930 को पूरे देश में स्वतंत्रता दिवस मनाया जाएगा और गांधीजी से कहा गया कि वे फरवरी में अपने, से सविनय अवज्ञा आंदोलन को स्वराज्य प्राप्त करने का प्रभावी माना गया। यह तरीका केवल उन्ही लागों के लिए था जो अहिंसा के सिद्धान्त में विश्वास रखते हो। 9 जनवरी सन् 1930 में गांधीजी ने यंग इण्डिया में कहा 'यदि मुझे एक पूर्णत: अहिंसक वातावरण एवं रचनात्मक कार्यक्रम तय करने का अवसर मिले तो मैं कुछ ही।। महिनों में इसे सफल आंदोलन बना दूंगा। ' उन्होंने विभिन्न स्थानों पर अपने भाषणों एवं पत्रों द्वारा लोगों को आगे के आंदोलन के लिए संपूर्ण त्याग के लिए तैयार रहने का आहवान किया और सत्य एवं अहिंसा के को अपना आदर्श बनाने को कहा। उन्होंने कहा, "कांग्रेस ने कलकत्ता अधिवेशन में यह निर्णय लिया कि यदि पं. नेहरू के ,शासित प्रदेश की मांग एक वर्ष के भीतर नहीं मानी गई तो विश्व के विरोध के बावजूद स्वराज्य का प्रस्ताव पारीत किया जाएगा। यदि स्वराज्य और शासित प्रदेश के दर्जे में से किसी एक को चुनना हो तो मेरे जैसा व्यक्ति स्वराज्य हो चुनेगा।" उन्होंने यह भी कहा, ' 'आप मुझसे आशा रखते होंगे कि मैं लाहौर कांग्रेस में पारित पूर्ण स्वतंत्रता के प्रस्ताव के बारे में और विशेषक सविनय अवज्ञा आंदोलन के विषय में कुछ कहूं और आप यह भी जानना चाहते होंगे कि इस संघर्ष में आपकी क्या भूमिका होगी? मैं कई बार कह चुका हूं कि हम संख्या जी शक्ति पर नहीं बल्कि चरित्र की शक्ति पर निर्भर हैं और सविनय अवज्ञा का प्रस्ताव इसलिए किया गया क्योंकि मुझे इस बात में विश्वास है कि कुछ लोग अपना त्याग करेंगे। मैं नहीं चाहता कि ढेर सारे लोग इसमें शामिल हों..... केवल जेल वाले लोगों से देश का 'भला नहीं होगा। मैं आपसे चाहता हूं कि आप इस संघर्ष के स्वेच्छा से एवं त्याग भी भावना से शामिल हों। " साथ ही उन्होंने यह भी कहा, ' 'मैं चाहता हूं

कि आप सब का भय निकाल दें क्योंकि जब स्वतंत्रता का इतिहास लिखा जाएगा तो देश के विभिन्न लोगों एवं ' नाम भी लिखे जाएंगें और यह कहा जाएगा कि ये लोग हिंसा करते हुए नहीं बल्कि हिंसा रोकते मारे गए। आत्मरक्षा के लिए मारने की शक्ति आवश्यकता नहीं है, स्वयं में मरने की क्षमता होनी चाहिए। "

स्वतंत्रता दिवस की घोषणा के बाद उसे पूरे देश में बेहद उत्साह से मनाया गया और इसमें सारे देश वासियों ने पूरे जोश एवं उत्साह से भाग लिया। इसके लिए उन्होंने जनता से कुछ बिंदुओं ध्यान देने को कहा।

26 जनवरी के लिए याद रखने योग्य बातें

1. हमें याद रखना है कि 26 जनवरी मात्र वह दिन नहीं है जब हम स्वतंत्रता की कर रहे हैं बल्कि यह वह दिन है जिसके लिए बाद हम स्वतंत्रता के अलावा किसी और बात से नहीं हों गे चाहे वह शासित प्रदेश का दर्जा ही क्यों न हों। अब कांग्रेस के संविधान में भी स्वतंत्रता का अर्थ पूर्ण स्वराज्य ही होगा।
2. यह याद रखे कि हम 26 जनवरी सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ नहीं कर हैं हम सभाओं द्वारा यह बताएंगे कि हम पूर्ण स्वराज्य के लिए तैयार हैं और कांग्रेस द्वारा जारी निर्देशो का पालन करने रहेंगे।
3. याद रखें कि हम सब कुछ सत्य एवं अहिंसा के माध्यम से ही प्राप्त करना चाहते है। यह कार्य हम केवल आत्मशुद्धि द्वारा कर सकते हैं। हम अपना सारा दिन कुछ रचनात्मक कार्यो में लगाना चाहिए जो सबकी भलाई के लिए हो।

26 जनवरी को दिए गए घोषणपत्र में कहा गया कि, "हम विश्वास करते है कि स्वतंत्रता प्राप्त करना अन्य लोगों की तरह हम भारतीयों का एक अनन्य अधिकार है। स्वतंत्रता इसलिए ताकि हम अपने श्रम का उचित प्रतिफल प्राप्त कर सकें, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें और विकास के पूर्ण अवसर प्राप्त कर सकें। हम यह भी विश्वास करते है कि यदि कोई शासन लागों को उनके अधिकारों से वचिंत करता है और उन पर अत्याचार करता है तो लोगों को यह भी अधिकार है कि वे उस शासन को उखाड़ फेकें। ब्रिटिश शासन ने भारतीयों को न केवल स्वतंत्रता से वचिंत किया है बल्कि उसने जनता का शोषण किया है और भारत को आर्थिक राजनैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक रूप से नष्ट किया है।हम विश्वास करते है कि इन कारणों से भारत को ब्रिटिश शासन से सारे संबंध समाप्त कर देने चाहिएं और पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेना चाहिए।

गांधीजी फिर भी इस बात के लिए तैयार थे कि यदि ब्रिटेन आशिक रूप से भी स्वराज्य के लिए तैयार हो जाता है तो वे अपना सविनय अवगत आंदोलन टल देंगे। इसी उद्देश्य के लिए उन्होंने अपनी ग्यारह मांगे रखी :-

1. पूर्ण मद्य निषेध
2. अनुपात में 1$. 4d की कमी
3. भू राजस्व में 50% की कमी और इसे कानूनी नियंत्रण में लाना
4. नमक पर कर समाप्त करना
5. सैन्य खर्च को 50% तक कम करना

6. ऊची नौकरियों में वेतन में 50% की कमी ताकि राजस्व व्यय कम किया जा सकें।
7. विदेशी कपड़ो पर आयात शुल्क लगना।
8. समुद्री यातायात आरक्षण बिल पास करना।
9. सारे राजनैतिक बंदियों, जिन पर हत्या का अभियोग न हो, को छोड़ना और राजनैतिक लोगों के विरूद्व कानूनी कार्यवाही बंद करना, अनुच्छेद 124 और 1818 के कानून को समाप्त करना एवं समस्त आप्रवासी भारतीय को वापिस लौटने की अनुमति देना।
10. सी. आई. डी. को बंद करना।
11. आत्म रक्षा के लिए हथियार रखने के लिए लाइसेंस जारी करना।

गांधीजी के अनुसार संपूर्ण सूची नहीं है बल्कि कुछ मुख्य बिंदु हैं। वाइसरॉय को इन छोटी लेकिन महत्वपूर्ण मांगों पर विचार करने दो। इसके बाद वह सविनय अवज्ञा आदोलनो के बारे में बात नहीं करेंगे एवं कांग्रेस किसी भी सभा में भाग लेगी जहां पूर्ण स्वतंत्रता की मांग रखी जा सकें।

उसके बाद कांग्रेस की कार्यकारी समिति ने फरवरी में साबरमती की सभा में यह तय किया गया कि गांधीजी सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ करें। इन सारी परिरिथयों से गुजरने हुए उन्होंने नमक पर जारी कर को एक विषय बना लिया। यंग इंडिया में उन्होंने लिखा, 'नमक जैसी कोई दूसरी कोई दूसरी वस्तु नहीं है जिस पर कर लगाकर शासन लाखों भूखे, गरीब व असहाय लोगों का शोषण कर सकें। यह कर घोर अमानवीय है। नमक थोक मूल्य और करारोपण के बाद के मूल्य में बहुत अधिक अंतर है। कुल मिलाकर कर 2400 प्रतिशत होता है। यह कल्पनीय की गरीबों से वसूला जाता है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि सविनय अवज्ञा आंदोलन एक बार प्रारंभ होने के बाद तब तक नहीं रुकेगा जब तक एक भी स्वयंसेवक या तो मुक्त रहता है या जीवित रहता है।

सत्याग्रह के समर्थक निम्न में से किसी भी परिस्थितियों में हो सकते हैं।

1. जेल में या फिर जेल के समान परिस्थियों में,
2. सविनय अवज्ञा आंदोलन में आदोलनकारी के रूप में
3. चरखा चलाते हुए या रचनात्मक कार्य करते हुए स्वराज्य को बढ़ावा देते हुए।

सत्याग्रहियों एवं स्वयंसेवकों द्वारा कठिनाइयों का सामना किया जाएगा। गांधीजी ने स्पष्ट किया कि आदोलनअहिंसक एवं शांतिपूर्ण होगा जिसमें किसी प्रकार की घृणा, हिंसा या अंग्रेजों को दल पहुंचाने वाली कोई बात नहीं होगी। गांधीजी ने 2 मार्च सन् 1930 को वायसरॉय को पत्र लिखा जिसमें इन्होंने सविनय अवज्ञा आंदोलन के बारे में लिखा कि ' 'मैं अहिंसा के पथ पर चल रहा हूँ इसे एक मूर्खतापूर्ण जोखिम का नाम दिया जा रहा है- परन्तु किसी भी प्रकार सत्य की लड़ाई बिना जोखिम उठाए जड़ी नहीं गई है। अपने महान देश को बचाने के लिए मैं कोई भी जोखिम उठाने के लिए तैयार हूँ। ' वायसरॉय ने गांधीजीं के विचारों को गलत ठहराया। उसके जवाब में गांधीजी ने कहा, ' 'मैने घुटनों के बल बैठकर रोटी मांगी तो मुझे पत्थर थमा कर दुत्कार दिया गया। '' आगे उन्होंने कहा, ''गरीबों के नमक पर से कर हटकार वाइसरॉय ने मुझे निहत्था कर सकते थे। मुझे नहीं लगता कि भारत के बाहर कोई

नागरिक 3 रुपये प्रतिवर्ष देता होगा जबकि वह 360 रुपये कमा हो। वाइसरॉय जवाब देने के सिवाय अन्य कार्य भी कर सकते है। " उन्होंने एक ऐसे देश को प्रस्तुत किया जो हार नहीं मानेगा और जीत के पहले नहीं रूकेगा। वाइयरॉय का उत्तर मुझे आश्चर्य चकित नहीं करता। मुझे यह पता है कि अन्य कई चीजों के साथ नमक पर से कर अवश्य हटेगा।

8.3 ऐतिहासिक डांडी यात्रा (नमक सत्याग्रह)

गांधीजी ने अपना कार्य एक छोटी सी आश्रम समिति के सदस्यों के साथ करने का विचार किया, जिसमें वो सत्याग्राही हों जो साबरमती आश्रम के अनुशासन का पूर्ण रूप से पालन करते हों। उन्होंने 78 सत्याग्राहियो के समूह को चिह्नमकिया जो पूरे देश के विभिन्न मांगो से थे। उनमें 32 गुजराती, 13 मराठी, 7 उत्तरप्रदेश के 6 कच्छ के 3 पंजाब के, 1 सिंध का, 4 केरल के, 3 राजपूताना के, 1 आंधप्रदेश का, 1 कर्नाटक का, 1 उत्कल का, 1 फिजी का और 1 नेपाल का था। उन 78 में से 2 मुस्लिम, 1 इसाई और शेष हिंदू थे। उसकी उस 16 से 31 वर्ष के बीच की थी और गांधीजी सबसे बुजुर्ग थे। 20 छात्रों एवं अध्यापकों का जो गुजरात विद्यापीठ का था, आगे चलकर यात्रा की पहले से तैयारियां कर रहा था। सरदार पटेल को 7 मार्च को बोरसाद से यात्रा में शामिल होने के लिए बोरसाद से निकलते समय रास में गिरफ्तार कर लिया गया। 9 मार्च को साबरमती के तट पर खड़े होकर 75,000 लोगों ने प्रतिज्ञा ली।।

10 मार्च 1930 को गांधीजी ने घोषणा कि नमक कानून तोडने के लिए डांडी यात्रा 12 मार्च को प्रारंभ होगी। 12 मार्च 1930 को गांधीजी सुबह 5:3० बजे अपने 78 अनुयायियों के साथ ऐतिहासिक डांडी यात्रा के लिए साबरमती चल दिए। मोतीलाल नेहरू ने कहा " श्री राम की लंका तक की ऐतिहासिक यात्रा की तरह गांधीजी की यह यात्रा भी अविस्मरणीय रहेगी।" प्रतिदिन गांधीजी और नमक सत्याग्राही। 10 मील या इससे ज्यादा पैदल चलते थे जिससे वे 241 मील के रास्ते को 24 दिन में पूरा कर सकें और 6 अप्रेल से पहले डांडी पहुंच जाएं। डांडी यात्रा के बीच में वे असलाली बारेजा नवागाम वसना, मतार नाडियाड।, आनन्द, बोरसाड, माही, करेली जम्बूरपर, अमोल सामनी, तरालसा, डेरोल भड़ूच, अंकलेश्वर, मांगरोल उमरेछी भासगाम डेलाड, सूरत नवसारी, वेहलपुर, कराडी आदि स्थानों से होते हुए अंत में डांडी पंहुचे।

200 मील की पैदल यात्रा 25 दिन में पूरी कर वे 5 अप्रेल को डांडी पंहुचे। पूरी यात्रा के दौरान भोजन, प्रात: व सायंकालीन प्रार्थना और चरखा चलाने एवं नियमों का पालन किया गया। 30 मार्च 1930 को गांधीजी ने कहा कि ' 'आज मैं वह करने जा रहा हूँ जिसे करने का प्रयत्न सारा देश देश 10 साल से कर रहा है। जनता द्वारा किए जा रहे इस प्रतिरोध का अर्थ है- स्वराज्य। मैं अपना हाथ हटा रहा था। मुझे स्वयं पर विश्वास नहीं था। मैं कान लगाकर अपनी अंतरात्मा की आवाज सुनने की कोशिश कर रहा था किन्तु मुझे कोई उत्तर नहीं मिल रहा था। मैं जब लाहौर में था तो मैंने एक पत्रकार से कहा कि मुझे दूर क्षितिज तक कुछ दिखाई नहीं दे रहा जो जनता के प्रतिरोध के बारे में बता सकें। किन्तु अचानक आश्रम में मुझे वह प्रकाश प्राप्त हो गया। आत्मविश्वास लौट आया। कुछ अंग्रेज और एक भारतीय आलोचक मुझे आगे की समस्याओं के बारे में चेतावनी दे रहे थे। परंतु मेरी अंतरआत्मा की आवाज साफ

थी कि या तो मैं अपने सारे प्रयास लगा दूं या फिर जीवन भर जनता के सामने नहीं आऊं। मुझे लगा कि यही समय है। यदि अभी कुछ नहीं हुआ तो भविष्य में भी कुछ नहीं होगा। "

6 अप्रेल को गांधीजी ने एक चुटकी कर रहित नमक उठाकर नमक कानून तोड़ दिया। हजारों लोगों ने इस घटना को प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देखा। इसके तुरन्त एक पत्र जारी हुआ जिसमें जनता को निर्भय होकर नमक का कर देने के लिए मना किया गया और प्रसन्नता पूर्वक जुर्माना भरने को कहा गया और प्रसन्नतापूर्वक जुर्माना भरने को कहा गया। जो नमक कानून तोड़ने में सक्षम नहीं थे उनसे विदेशी कपड़ों का बहिष्कार करने और मद्यनिषेध लागू करने को कहा गया। गांधीजी के नमक आंदोलन के लिए सारा देश एक जुट होकर खडा हो गया था।

पूर्ण भारत में आंदोलन शुरू हो गया था। गांधीजी 4 मई को गिरफ्तार कर दिए गए थे, लेकिन व्यक्ति दर व्यक्ति नेतृत्व बदलता रहा जिससे वह तब तक निर्देश देता जब तक वो जेल में नहीं डाल दिया जाता। नमक भंडारों पर छापे पड़ते जा रहे थे और सरकार के विरोध को खत्म करने के तरीके बदतर होते जा रहे थे। भारत का एक बड़ कैछरवाना बन गया था। इस आंदोलन के दौरान पुलिस क्षरा लाठी का पूर्ण उपयोग किया गया एवं कलकत्ता, मद्रास, कराची, पेशावर आदि. जगहों पर गोलीबारी भी हुई जिससें पता चलता है कि किसी भी हद तक जा सकती थी।

इस आंदोलन के समय कई जगहों पर एक साथ मारे गए नमक के कारखानों पर छापों को कई विदेशी पत्रकारों एवं निष्पक्ष प्रोक्षकों द्वारा भी देखा गया। समर्थकों ने अपने खून से एक नया इतिहास लिख दिया था। जो एकजुटता एवं अनुशासन दरसाना एवं वादला के अहिंसात्मक छापों के दोरान दर्शाई गई थी उसे कई विदेशियों द्वारा श्रीमान ब्रेल्सफोर्ड एवं सलोकोम्बे द्वारा भी सराहा गया। 21 मई को 2500 कार्यकर्ताओं ने दरसाना के कारखानों में छापा मारा। उसमें 290 घायल हो गए और दो की मृत्यु हो गई। 15000 लोगों ने अहिंसात्मक तरीके से वादला में विद्रोह किया जिसमें लाठियों करीब 150 घायल हो गए। करीब 15,000 लागों ने सनीकट्टा में एक नमक कारखाने पर छापा मारा और सैकड़ों नमक के लुटरे ले गए। सत्याग्रह में सामान उठाना महत्त्वपूर्ण नहीं था बल्कि यह था कि हिंसा का सहार लिए बिना जनता द्वारा कितने तेज, बचावपूर्ण एवं प्रत्यक्ष कदम उठाए जा रहे है। लेकिन यह तय करके कि कितनी परेशानियाँ आएँगी और उसमें कितने अधिकार छुपे हुए है।

न्यू फ्रहमैन के श्रीमान लेव मिलर दरसाना के बारे में लिखते है कि "अपने अठारह वर्षो की पत्रकारिता में मैंने दरसाना जैसे भयाक्रांत कर देने वाले दृश्य कभर नहीं देखे। कई बार यह दृश्य इतने कष्टप्रद थे कि मुझे क्षणिक रूप से उनसे दूर होना पड़ा। एक आश्चर्य जनक तथ्य स्वयंसेवकों का अनुशासन था। ऐसा प्रतित होता था जैसे वे गांधीजी की अहिंसा को पूर्ण रूप से आत्मसात कर चुके हो। कोई भी ऐसा प्रकरण नहीं था जिससे बदले की भावना से कार्य किया गया हो, प्रति हिंसा की गई हो या सरकार को कोसा गया हो। यह क्रम कई दिनों तक चला। यद्यपि लोगों ने बेमिसाल धैर्य का प्रदर्शन किया और अपनी गतिविधियों को पूर्ण अहिंसक तरीके से चलाया। पुलिस और सेना ने हजारों निहत्थे लोगों के प्रति बड़ा बर्बरतापूर्ण एवं अमाननीय व्यवहार किया। कई बार निर्दोष दर्शक भी पीटे गए और सैकड़ों घायल भी हुए। पूरे

वर्ष नये कानून बनाये जाते रहें। लाठीचार्ज और पुलिस द्वारा मारपीट रोज की घटनाएँ हो गई। केवल अप्रैल और मई में ही उन्नीस स्थानों पर गोलियाँ चलाई गई जिनसे 111 लोगों की मृत्यु हुई और 422 घायल हुए किंतु लोगों ने शांति बनाए रखी और अपनी ओर से कोई हिंसा नहीं की। महिलाओं ने बड़ी संख्याओं में भाग लिया और अनेक कष्ट सहकर भी वे अंत तक डती रही। इसी बीच समझोते के लिए प्रयास चलते रहे। यह प्रयास सलोकोब सप्रू जयकर और हौरिस एलेकजेन्डर द्वारा किए गए, किंतु यह भी असफल रहे। भारत की घटनाओं की बाबजूद गोलमेज सम्मेलन आयोजित किया गया जिससे गांधीजी अपने 26 सहयोगियों के साथ रिहा कर दिए गए। इसके परिणाम स्वरूप 5 मार्च 1931 को गांधी इरतिन समझौता हुआ। गांधी और लार्ड इरविन की आपसी समझ के कारण यह वार्ता सफल हुई यह समझौता कांग्रेस की एवं अहिंसा के सिद्धान्तों की नैतिक विजय थी। किन्तु सरकार ने भारतीयों को किसी भी प्रकार की राजनीतिक शक्ति नहीं दी।

सन् 1930-31 का आदोलन पूरे एक वर्ष तक चला। राष्ट्रवादी भारत ने बिना किसी प्रकार को हिंसा के अपना लम्बा संघर्ष जारी रखा। कई कठिनाईयों और क्षतियों का प्रसन्नतापूर्वक सामना किया गया। हथियारों से सुसज्जित ब्रिटिश सरकार ने भारत की आत्मा को कानूनों, लाठियों और दूसरी बर्बरता कार्यवादियों से कुचलने की कोशिश कीं आंदोलन दौरान सत्याग्रह के विभिन्न रूप सामने आए जैसे नमक का उल्लघंन नमक बनाने के स्थान और नमक भंडारों पर अहिंसात्मक तरीके से प्रदर्शन, कानून का उल्लघंन, देश के कुछ हिस्सों में कर न देने का निर्णय, पत्रकारिता कानूनों का उल्लघंन विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, सरकार के प्रति असहयोग का रवैया ओर विधानमंडलों का बहिष्कार। इस अभियान से एक नैतिक विजय प्राप्त हुई, जिससे लोगों की आत्मविश्वास की शक्ति जागृत हुई, और सत्याग्राही रूपी शस्त्र के प्रति विश्वास बढ़ा। अंत में हुए समझौते के परिणाम स्वरूप गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस ने भाग लिया। सरकारी दमन चक्र के बावजूद सविनय अवश्य आंदोलन निरंतर जारी रहा। इसका बड़ा प्रभाव पड़ा। सन् 1930 तक विदेशी वस्तुओं की मांग एक तिहाई से एक चौथाई तक ही रह गई। लिरेट एवं शराब की बिकी का भी स्तर गिरा। बंबई में अंग्रेजों की 16 मिले बंद हो गई। खद्दर की बिकी 63 लाख से बढ़कर 113 लाख यार्ड तक पहुँच गई। जो कि 45 प्रतिशत अधिक हैं।

8.4 सवइग़ आन्दोलन (1932- 1934)

यह 1930 में शुरू हुआ संघर्ष का ही निरंतर स्वरूप था। 17 फरवरी 1931 को गांधी इरविन वार्ता शुरू हुई, वार्ता के दौरान गांधीजी ने वायसहाय को यह स्पष्ट कर दिया, कि सविनय अवज्ञा का न तो छोड़ा जा सकता है, न ही बंद किया जा सकता है, न ही बंद क्योंकि किया जा सकता है भारतीयों क पास यह अकेला हथियार था इसे कुछ समय के लिए टाला जा सकता हैं, किन्तु वातसराय ने शब्द ' 'टाला जा सकता हैं' ' पर आपत्ति तो गाँधीजी ने इसके स्थान पर दूसरा शब्द बीच में रोकना' का उपयोग किया। सरकार ने कानून वापिस लेने के लिए सहमति जताई, इसके अलावा सरकार ने तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को नमक बनाने की

भी दे दी। यह समझौता काँग्रेस के लिए और गाँधीजी के कार्यक्रममों की एक नैतिक विजय थी। गांधी इरविन समझौता काँग्रेस के लिए और गाँधीजी के कार्यक्रमों को एक नैतिक विजय थी। गांधी इरविन समझौता 5 मार्च 1931 को हुआ और तत्काल टूट गया। लार्ड इरविन के स्थान पर आए नया वातराय लार्ड विलिगठन इस समझौते के पक्ष में नहीं थे। जब- गाँधीजी गोलमेज के पक्ष में नहीं थे। जब गाँधीजी गोलमेज सम्मेलन में भाग इंग्लैण्ड से वापिस आय, तो उन्होंने भारत को कानून राज से बंधा पाया और मुख्य कांग्रसियों को गिरफ्तार। यद्यपि गाँधीजी ने कांग्रेस का दृष्टिकोण प्रस्तुत करने का प्रयास किया किन्तु वातसराय झुकने के लिए तैयार नहीं था, और परिणामस्वरूप सविनय अवज्ञा आंदोलन पुन:शुरू किया गया। 31 दिसम्बर 931 को कांग्रेस समिति ने सविनय अवज्ञा आंदोलन पुन: शुरू करने का निर्णय लिया जिसमें कर न देना भी शामिल किया गया। काँग्रेस कार्यकारी समिति के निर्णय में गाँधीजी का ही योगदान था। सरकार ने अपना दमन चक्र चलाया और 4 जनवरी 1931 को गाँधीजी का नौनव्रत था। इसी बीच गाँधीजी और लगभग 1500 प्रमुख कांग्रेसी और सत्याग्रही बिना किसी कानून प्रक्रिया के गिरफ्तार कर लिए गए। इसके अलावा काँग्रेस की सम्पति जब्त कर ली गई एवं काँग्रेस और उसके सहयोगी संगठनों को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया। अध्यादेश जारी होने लगे और लाठीचार्ज होने की बात हो गई। शीघ्र ही देश की सारी जलें 1 लाख केदियों से भर गई दमन पूरी क्षमता व निर्दयता से किया गया किन्तु गाँधीजी के विचारों के परिणाम भविष्य में आने थे।

12 सितम्बर 1932 को अचानक देश में यह खबर फैल की गाँधीजी ने अनशन शुरू कर दिया है। यह आमरण अनशन में किया गया। गाँधीजी ने 20 सितम्बर को पूना समझौते के बाद समाप्त किया। पूना समझौते में हरिजनों को समान मताधिकार दिया गया। सविनय अवज्ञा आंदोलन जारी रहा, किन्तु अब इसमें अस्पृश्यता निवारण को अधिक महत्व दिया गया। नवंबर 1932 में सरकार ने गाँधीजी को जेल से ही अस्पृश्यता निवारण का कार्य करने की अनुमति दी।

सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान काँग्रेस के कई नेता गिरफ्तार किए गए और उन सभी ने आंदोलन को जारी रखने के लिए गाँधीजी के अहिंसात्मक तरीकों को अपनाया। 8 मई 1933 को गाँधीजी ने आत्मशुद्धि के लिए व्रत लिया जो 29 मई 1933 को समाप्त हुआ। गाँधीजी ने आंदोलन कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया। विट्ठल भाई पटेल, सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं ने इसे 'असफलता की स्वीकारोक्ति' ' कहा।

अंत में 12 जुलाई 1933 को पूना में जन सविनय अवज्ञा आंदोलन को त्याग दिया गया और केवल व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा जारी रहा। तीन दिन तक चर्चा चलने के बाद गाँधीजी को वायसराय से सम्मानजनक हल निकालने के लिए अधिकृत किया गया। गाँधीजी ने वायसराय स मिलने का समय मांगा तो वायसराय ने यह कहते हुए मना कर दिया कि आम पहले आंदोलन समाप्त कीजिए। गाँधीजी के शांत के प्रभाव असफल हो गए तो उन्होंने व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आंदोलन जारी रखने का निर्णय लिया। जनता ने कांग्रेसियों को सत्याग्रहियों के साथ पुन: सक्रिय होकर सविनय अवज्ञा आंदोलन किया हजारों लोगों को

गिरफ्तार कर जेलों में डाल दिया गया। गाँधीजी ने नवंबर 1933 को अगस्त 1934 तक देश भर की यात्रा की। इसी बीच गाँधीजी ने काँग्रेस छोड़ने का निर्णय लिया, जिसे स्वीकार कर लिया गया।

8.5 संघर्ष निवारण तकनीक - सविनय अवज्ञा आन्दोलन

संघर्ष निवारण की पद्धति - उपयुर्क्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता हैं, कि गाँधीजी ने एक लम्बे संघर्ष परिवक्तता के बाद सविनय अवज्ञा को ब्रिटिश सरकार की शक्तियों को सविनय अवज्ञा को ब्रिटिश सरकार की शक्तियों को सविनय अवज्ञा को ब्रिटिश सरकार की शक्तियों को चुनौति देने के लिए एक नवीन माध्यम तौर पर चुना। उनके अनुसार अहिंसा असहयोग और सविनय अवज्ञा के साथ लक्ष्यों की पूर्ति करेगी। यह शासन का विरोध करेगी और साथ ही जनता को अपने स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में एकसूत्र करेगी और साथ ही अन्याय और भेदभाव दूर करने का प्रयास करगी। दक्षिण अफ्रीका में अपनाय गए सहय और अहिंसा द्वारा प्रतिरोध ने उन्हें सविनय अवज्ञा को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के लिए लिए सबसे उपयुक्त तरीका माना। उनका मानना था, कि भारत के शांतिप्रिय लोगों के लिए हिंसक माध्यमों द्वारा शक्तिशाली शासकों का विरोध करना संभव नहीं हैं। यदि अंग्रेजी की अंतरआत्मा जाग जाती हैं, और वे अपने कार्यो का औचित्य देखने लगते हैं, तो भारत के लिए स्वतंत्रता प्राप्त करना आसान हो जाएगा। यह सर्वाधिक उपयुक्त और प्रभावी हैं, क्योंकि यह सभी प्रकार की हिंसाओं से मुक्त हैं।

विविक द्वारा विरोधी का हृदय छू लिया जाए तो उस पर विजय प्राप्त करना संभव है। गाँधीजी सोचते थे कि प्रेम और विवेक द्वारा स्वराज्य प्राप्त किया जा सकता है। वे इस बात से पूरी तरह आवश्यक थे कि प्रेम और दया द्वारा हर प्रकार के संघर्षो का निवारण किया जा सकता है।

वास्तव में गाँधीजी शांति के पक्षधर थे। उन्होंने हमेशा विरोध के शांतिपूर्ण तरीकों पर बल दिया। सविनय अवज्ञा आंदोलन में भी वे नहीं चाहते थे कि कोई व्यक्ति हिंसा करें। वे अहिंसा से इतने जुडे हुए थे कि वे असहयोग आंदोलन में अहिंसा को एक महत्वपूर्ण अंग मानते थे। उनका विश्वास था कि तलवार की शक्ति प्रेम की शक्ति के सामने नहीं टिक पाएगी।

सविनय अवज्ञा आंदोलन के समर्थकों को आत्मशुद्धि के प्रयास करने चाहिए जब तक सत्याग्रही शुद्धि नहीं होगा तब तक वो आंदोलन का सच्चा सिपाही नहीं बन सकता। अस्पृश्यता को वह आशुद्धि मानते थे और चाहते थे कि अस्पृश्यता दूर हो ताकि आंदोलन को बल मिल सके।

गाँधीजी इस बात को हमेशा पक्षधर रहे कि अहिंसात्मक तरीकों से नैतिक दबाव डालकर विरोधी का हृदय परिवर्तन किया जा सकता है। एक अहिंसक व्यक्ति कठोर अनुशासन का पालन करता होता है और उसे अपने प्रतिद्वंदी के प्रति व्यवहार भी संतुलित रखना होता है। इस प्रकार गाँधीजी सविनय अवज्ञा को प्रभावी मानते थे।

दूसरी और सविनय अवज्ञा द्वारा गाँधीजी सत्य द्वारा बनाए गए कानून कर के पक्षधर गाँधीजी के अनुसार यदि राज्य द्वारा बनाए गए कानून यदि भेदभावपूर्ण एवं अनैतिक है, तो नागरिकों को उनकी अवज्ञा करने का अधिकार है। सविनय अवज्ञा द्वारा राज्य के बुरे विचारों

को सामने लाया जा है। गाँधीजी ने विस्तार से उन सभी पद्धतिओं का वर्णन किया है जिनकी सहायता से सविनय अवज्ञा के सत्याग्रही समाज के संघर्षो का निवारण कर सकते है। आंदोलन में लोग अपने विरोध से विभिन्न प्रकार से कर सकते है। गलत काम करने वालों का बहिष्कार करने एवं हड़ताल करने या काम बंद करने जैसे द विकल्प है। गाँधीजी का विश्वास था कि किसी व्यक्ति के अनैतिक आचरण का विरोध करने के लिए ये शांतिपूर्ण तरीके पर्याप्त हैं। यह सभी तरीके संघर्ष निवारण के लिए बडे प्रभावी माने जाते है।।,___

8.6 निष्कर्ष

1930-31 का सविनय अवज्ञा आंदोलन और सन् 1932-34 में उसका पुन: प्रारंभ होना स्वतंत्रता प्राप्ति की दिशा में एक बड़ा कदम था। इस आंदोलन ने भारत को परिवर्तित कर दिया। यह गाँधीजी की डांडी यात्रा से शुरू हुआ और शीघ्र ही सारे देश में फेल गया। नमक कानून तोडने जैसे कार्यो के फलस्वरूप सविनय अवज्ञा आंदोलन बड़े पैमाने पर सक्रिय रूप से फेल गया। यह कहा जा सकता है कि सरकार गाँधीजी एवं काँग्रेस से जीत गई परंतु इसके दूरगामी परिणाम देश के हित में ही रहे। आंदोलन की निदयता पूर्ण तरीकों से कुचला गया किंतु प्रतिरोध करने की क्षमता कम नहीं हुई। इसके फलस्वरूप लोगों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन आया। लोगों में निभया स्वभावलंबन और त्याग की भावना का विकास हुआ।

सभी तरीके संघर्ष निवारण के लिए बडे प्रभावी माने जाते है।

8.7 अभ्यास प्रश्न

1. संघर्ष निवारक तकनीक के रूप में सविनय अवज्ञा आन्दोलन की समीक्षा कीजिये
2. सविनय अवज्ञा आन्दोलन की प्रासंगिकता की विवेचना कीजिये
3. सविनय अवज्ञा आन्दोलन पर एक लेख लिखिये।

8.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. राव, पी.सी. शेफर्ड, विलियम एलटरनेटिव डिस्पयूट रिजोलूशन, नई दिल्ली, 1997
2. वर्मा, रविन्द्र : गांधी, नवजीवन, अहमदाबाद, 2001
3. गंगराडे के.डी मॉरल लेशन्स फ्रॉम गांधीजी ऑटोबायग्राफी कॉन्सेप्ट, नई दिल्ली 2004

इकाई - 9

महात्मा गाँधी का राजनैतिक नेतृत्व : एक मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 गाँधी: एक जन नेता

9.3 गाँधीजी की राजनैतिक सक्रियता

9.4 राजनैतिक नेतृत्व के पहलू

9.5 दक्षिण अफ्रीका एवं भारत में विरोध प्रदर्शन

9.6 गाँधी एवं नैतिकता

9.7 निष्कर्ष

9.8 अभ्यास प्रश्न

9.9 संदर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान पायेगे -

- एक जननेता के रूप में गाँधीजी की स्वीकार्यता के बारे में
- गाँधीजी की राजनीतिक सक्रियता के बारे में
- राजनैतिक नेतृत्व के विविध पहलुओं के बारे में
- गाँधीजी एक नैतिक व्यक्ति के रूप में

9.1 प्रस्तावना

महात्मा गांधी का राजनैतिक नेतृत्व

इतिहास किसी काल में मानवता का अध्ययन माना जाता है। यह मनुष्य समाज के जीवन, उसमें आने वाले परिवर्तनों, उसके कार्यो का निर्धारण करने वाले विचारों और उन भौतिक परिस्थितियों लेखा-जोखा है जो उसके विकास को प्रभावित करती हैं। इतिहास समय के साथ के सामाजिक अस्तित्व, उसके कार्यो और विकास का अध्ययन है। मानव के कार्यो का उद्देश्य शक्ति प्रदा है। इतिहास को आकार देने वाले विभिन्न संघर्षो के मूल में शक्ति प्रदान करने या उसे स्थायित्व देने ही होते है। भारतीय इतिहास विभिन्न उच्च वर्गो के शक्ति हेतु संघर्ष की लंबी कहानी है।

प्राचीनकाल से ही राजनीति ने शासन और नेतृत्व करने लोगों को महिमामंडित किया है। इतिहासकारों ने फ्लूटार्क से प्रेरणा ली जिसके प्रसिद्ध शासकों के जीवन -परिचय ने भविष्य के शासकों के लिए नैतिक पथप्रदर्शक का कार्य किया, संत ऑगस्टीन और उसके बाद धर्मशास्त्रियों ने वास्तविक न्यायसंगत शासकों और निरंकुश शासकों में अंतर स्पष्ट करने के प्रयास किए। राजनैतिक लेखकों में उत्तम शासक की छवि को स्पष्ट करने के प्रयास किए।

मैकियावेली के समय से ही उन्होंने एक नए पहलू 'प्रभावशीलता' को जोड़ दिया। उनमें सबसे प्रभावशाली थॉमस कार्लाईल ने मानवजाति के समस्त इतिहास को कुछ चुनिंदा नायकों के कार्यो के उत्पाद के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया। कुछ मनोवैज्ञानिकों का मानना हे कि लोग एक मात्र विकल्प के रूप में महान् नेता की ओर आकृष्ट होते है।

राजनैतिक नेतृत्व का अध्ययन एक जटिल प्रक्रिया है। नेतृत्व के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करने की आवश्यकता होती हैं। प्रारंभिक तौर से, किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विभिन्न गुणों की ओर ध्यान आकृष्ट होता हैं। इसके अलावा सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियों से नेतृत्व गुणों का विकास होता है। अनुयायियों के वैचारिक बिंदुओं और परंपरागत प्रतीकों के सफलतापूर्वक परिवर्तन की दक्षता का अपना महत्व है। नाटकीय तत्वों की उपस्थिति, करिश्माई व्यक्तित्व, परिस्थितिगत तथ्य नेतृत्व की प्रकृति को समझने में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। गांधीजी के प्रकरण से उपरोक्त विचारों की उपादेयता की पुष्टि होती है।

गांधीजी मात्र सिद्धांतवादी नहीं थे बल्कि वे कर्म में विश्वास करते थे। उनमें हम कर्म के दर्शन के मूलभूत तत्व पाते हैं जैसे- अहिंसा, सत्य, स्वयं कष्ट सहना और मानवतावादी दृष्टिकोण। उनकी प्रभावशीलता उनके लक्ष्यों और प्रतिबद्धताओं से प्रेरित थी। उनका लक्ष्य मात्र भौगोलिक सीमाओं को स्थायी करना नहीं था बल्कि वह वैश्विक और मानवजाति की स्वतंत्रता का था।

9.2 गाँधी: एक जननेता

एक जननेता जिसे महिमामंडित किया गया हो और साथ ही जिसकी तीव्र आलोचना की गई हो, विभिन्न आरोप लगाए गए हों, के बारे में अध्ययन करना कोई आसान कार्य नहीं है। भारत के राजनैतिक इतिहास को दृष्टिगत रखते हुए गांधीजी जैसे नेता के व्यक्तित्व के मुख्य बिंदुओं को प्रकट करना कोई कठिन कार्य नहीं है। गांधीजी का अध्ययन और मूल्यांकन विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में किया गया है। यह करते समय यह माना जाता है कि गांधीजी आध्यात्मिक रूप से सुदृढ व्यक्ति थे जिन्होंने राजनीति में राजनैतिक नैतिकता स्थापित करने के प्रयत्न किया । गांधीजी को नैतिक सिद्धांतों का प्रबल समर्थक मानकर दक्षिण अफ्रीका और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में राग की भूमिका और प्रभावों का मूल्यांकन किया गया है। एक एक्टिविस्ट के रूप में गांधीजी के व्यक्तित्व के पहलुओं को देखने के लिए उनके कार्य एवं योगदान महत्वपूर्ण है। किन्तु अध्ययन के दृष्टिकोण से वे गांधीजी की प्राथमिकताओं, विकल्पों, भूमिका, दक्षिण अफ्रीका और भारत की चुनौतियों से निपटने में उनके योगदान आदि को समझने के लिए पर्याप्त नहीं है। यह मान्यता है कि गांधीजी मूलरूप से एक संत थे जो अनायास ही राजनैतिक गतिविधियों मे भाग लेने लगे या यह कि राजनीति में मानवतावादी मूल्यों की स्थापना के लिए उन्होंने अपने संतत्व का उपयोग किया ये मान्यताएं गांधीजी के उद्देश्यों और लक्ष्यों की सीमित रूप से व्याख्या कर पाती है। मूल बात यह हे कि क्या गांधीजी का उभरता हुआ राजनैतिक कौशल और नेतृत्व के गुण जो उनके। न स्तर प्रयोगों से नखरे, के फलस्वरूप भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के नेता के रूप में उनका महत्व ही नहीं बढ़ा वरन् इससे उन्हें वैश्विक स्तर पर पहचान प्रशंसा और आदर भी मिला। नैतिकता के साथ उनके प्रयोगों के फलस्वरूप राजनैतिक

नेता के रुप में उनके गुणों का विकास हुआ। उन्होंने राजनीति में 'नैतिकता' और 'अच्छाई' का नया अर्थ और उद्देश्य दिया। दूसरे शब्दों में राजनैतिक नेता के रूप में उनके मूलभूत गुणों का अध्ययन करने की महती आवश्यकता है ताकि राजनीति में आध्यात्मिकता लाने संबंधी प्रयोगों का मूल्यांकन किया जा सके

9.3 गॉधीजी की राजनैतिक सक्रियता

यह याद रखना बड़ा उपयोगी है कि दक्षिण अफ्रीका की नस्लवादी या भारत की उपनिवेशवादी प्रणाली दोनों में ही उनकी राजनैतिक गतिविधियों में भाग लेने की कोई नहीं थी और न ही उनमें नेतृत्व के गुण के प्रारंभिक वर्षो में ही उन्होंने नैतिक मूल्यों को प्राथमिकता देना प्रारंभ कर दिया था। अन्याय, भेदभाव और राजनैतिक एकाधिकार से लडने की उनकी प्रतिबद्धता, सामाजिक- आर्थिक प्रणाली और सांस्कृतिक परंपराओं से निरपेक्ष नस्लवाद को चुनौती देने के उनके दृढ निश्चय आदि उनके के व्यक्तित्व सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण बन गए। इन्हीं प्रतिबद्धताओं और निश्चयों के फलस्वरूप राजनैतिक नेता के रूप में गांधीजी का महत्व बढने लगा।

यदि हम दक्षिण अफ्रीका और भारत में गांधीजी के नेतृत्व को देखें कुछ महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते है ।

सर्वप्रथम दक्षिण अफ्रीका में भारतीय मजदूर बेबस, फटेहाल, शोषित, निराशा और दुर्दशा की स्थिति में थे एवं उन्हें अपने दुःखों एवं परेशानियों से मुक्ति पाने के अधिकारों का भान नहीं था। न तो उनमें स्वेच्छा से संगठित होने की योग्यता थी और न ही इतना साहस था कि वे क्रूरता से मुक्ति पा सकें। गांधीजी विदेशी भूमि पर इन असहाय और बदनसीब लोगों के नेता के रूप में उभरे और उन्हें राजनैतिक न्याय दिलाने का प्रयत्न किया।

द्वितीयतः, दक्षिण अफ्रीका की चुनौती मूलरूप से राजनैतिक थी। वहाँ बसे भारतीयों के अपने सामाजिक- सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक मूल्य थे किन्तु वे अनुचित राजनैतिक निर्णयों पीड़ित थे। इस स्थिति का सामना करने के लिए राजनैतिक इच्छा शक्ति की आवश्यकता थी। गांधीजी अफ्रीका में कोई राष्ट्रीय आंदोलन नहीं चलाना चाहते थे। वे मात्र भारतीयों की पीड़ाओं, उनके प्रति होने भेदभाव और उनके कष्टों को कम करने के मार्ग एवं साधन तलाश रहे थे इसके लिए काले कानूनों को देने और दक्षिण अफ्रीकी सरकार के गैरमानवीय कदमों और नीतियों का विरोध करने की आवश्यकता थी। गांधीजी ने नैतिकता के आधार पर अपना संघर्ष प्रारंभ किया। वे चाहते थे कि राजनीति में भी नैतिक मूल्यों की स्थापना हो। उनकी मान्यता थी कि राजनीति तभी अर्थपूर्ण एवं मानवीय होगी जब उसमें नैतिक मूल्यों का हो।

तीसरा, दक्षिण अफ्रीका और उसके पश्चात् भारत में सत्याग्रह की वैधानिक और नैतिक रणनीति के रूप में उभरा जो मूलत: राजनैतिक था। दोनों परिस्थितियों में गांधीजी के प्रयोग राजनैतिक औचित्य से परिपूर्ण थे। इसलिए वे प्रभावित और पीड़ित लोगों के साथ-साथ उनके शासकों भी अपने कदमों की जानकारी देते थे। उन्होंने महसूस किया कि किसी भी कष्ट को एक आंदोलन में करने के लिए लोगो का संगठित होना बडा महत्वपूर्ण है। इसने एक बार पुन. सत्याग्रह को राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुकूल रणनीति के रूप में स्थापित किया।

चौथा, दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी को जन-विश्वास मात्र इसलिए नहीं मिला क्योंकि लोगों ने उन्हें एक धार्मिक और नैतिक व्यक्तित्व के रूप मे देखा बल्कि इसलिए मिला क्योंकि दक्षिणी अफ्रीकी भारतीयों में धीरे-धीरे जागरूकता आने लगी थी और वे कुछ हद तक अपना बुरा- भला समझाने लगे थे। गांधीजी को कोई निहित स्वार्थ या निज उद्देश्य नहीं था। वे क्रूरता और भेदभाव दूर करने के लिए प्रयत्न करे।

पांचवां, गांधीजी इसलिए नहीं उभरे क्योंकि उनके पास औपचारिक या सांस्थानिक राजनैतिक शक्ति थी बल्कि इसलिए उभरे क्योंकि उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के भारतीय समुदाय को भावनात्मक रूप से जोड़कर एव उनमें विश्वास पैदा कर संगठित किया। दक्षिण अफ्रीका के भारतीय समुदाय ने जब यह महसूस किया कि एक अपने देश का एक विश्वसनीय व्यक्ति उनके हितों के लिए संघर्ष करने को तैयार है तो वे भी आंदोलित हो उठे। गांधीजी ने वहां भारतीय समुदाय के साथ मिलकर अन्याय, भेदभाव, अनुचित कानूनों और क्रूरता के विरूद्ध संघर्ष किया।

छठा, गांधीजी भारत में उस समय आए जब भारत में कोई अच्छा नेतृत्व उपलब्ध नहीं था। उदार और क्रांतिकारी राष्ट्रीय आंदोलन को नेताओं के बूढ़े, बीमार, मृत्यु होने और अन्य कारणों से उचित नेतृत्व नहीं मिल पा रहा था। क्रांग्रेस, जिसने पिछले तीन दशकों से संघर्ष जारी रखकर अपना योगदान दिया था वह नेतृत्व हीनता से जूझ रही थी। उदार और क्रांतिकारी आंदोलन अपनी गति से चलते रहे किन्तु कोई भी आंदोलन जन-आंदोलन का रूप नहीं ले सका। गांधीजी ने अपने सत्याग्रह का भारत में भी प्रयोग किया जिसने विरोध का तरीका और स्वरूप दोनों बदल दिए।

सातवां, शासकीय तंत्र में किसी प्रकार के औपचारिक पद के बिना और कांग्रेस के अध्यक्ष बने बिना, एक संस्थानिक नेता के रूप में गांधीजी जनता के विरोध-आदोलनो का नेतृत्व और पथ-प्रदर्शन करने लगे। भारत और ब्रिटेन की सरकार ने गांधीजी को राष्ट्रीय आंदोलन के मुख्य प्रवक्ता के रूप में स्वीकृत किया क्योंकि उन्होंने गांधीजी को शक्तिशाली नेतृत्व का धनी माना। चाहे गांधीजी कांग्रेस में रहे हो या कांग्रेस के बाहर, उनके उद्देश्यों व्यक्तित्व में कोई परिवर्तन नहीं आया।

अंत में यह कहना समीचीन होगा कि गांधीजी के राजनैतिक नेतृत्व का मूल्यांकन परिस्थितिजन्य चुनौतियों और उनके करिश्माई व्यक्तित्व की संपूर्णता के आधार पर करने की आवश्यकता हे।

9.4 राजनैतिक नेतृत्व के पहलू

राजनैतिक नेतृत्व का अर्थ है किसी व्यक्ति में दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को प्रभावित करने की क्षमता होना ताकि साझे उद्देश्यों में सफलता प्राप्त की जा सके। राजनैतिक नेतृत्व की अपनी विशेष भूमिका शक्ति प्राप्त करने के प्रयासों एवं शक्ति के उपयोग में होती है- चाहे वह शक्ति शासकीय तंत्र में निहित हो या गैर-शासकीय तंत्र में गांधीजी के प्रकरण में यह शक्ति पूर्ण रूप से गैर-शासकीय थी।

राजनैतिक नेतृत्व अपनी शक्ति, अधिकार वैधानिकता आदि को प्रकट करता है। राजनैतिक नेतृत्व करिश्माई, नायकीय परंपरागत और तर्कपूर्ण-वैधानिक हो सकता है। गांधीजी ने नेतृत्व और अधिकारों को समायोजित करने प्रयास किए-यही तथ्य उन्हें दूसरों से अलग करता है। गांधीजी को कठिन चुनौतियों को महसूस करना, उनका प्रबंध करना और उन्हें निर्देशित करना था। कठिनाईयों का अनुमान लगाकर उनसे निपटने की योग्यता से गांधीजी ने नेतृत्व को अधिकारी व्यक्तित्व का नया अर्थ दिया। यदि गांधीजी ने विशेष परिस्थितियों में अपने विरोध को नई पहचान देने का प्रयत्न किया तो उन्होंने अधिकारी व्यक्तित्व और राजनैतिक नेतृत्व को सामान्य अर्थो के विपरीत एक नई दिशा देने का प्रयत्न किया।

गाँधीजी ने अपनी आत्मकथा में हमेशा स्वयं को छोटा-मोटा व्यापार करने वाली जाति का वंशज बताया जबकि वास्तव में वे राजधराने के प्रमुख मंत्रियों के पुत्र और प्रपौत्र थे, वे अनेक भारतीयों के 'बापू, और 'महात्मा' बन गए। यह कैसे संभव हुआ? यह कैसे किया गया? यह कहा जा सकता है कि गाँधीजी का करिश्मा उनके नेतृत्व का प्रमुख पहलू था किन्तु यह एकमात्र निर्धारक नहीं था। उन्हें विरासत में ही अनेक निर्धारक तत्व प्राप्त हुए थे। गांधीजी का जादुई नेतृत्व स्वयं उनके समय और परिस्थितियों की उपज था। गाँधीजी ने परंपराओं को सशक्त बनाने के प्रयास में नैतिक मूल्यों के अलावा उनके उपयोग एवं रूचि मे शामिल थे। उदाहरण के लिए, अस्पृश्यता के विरूद्ध उनका संघर्ष एक वैश्विक दृष्टि और सामाजिक प्रथा को प्रदाता है, हर प्रकार के कार्य एवं व्यवसाय को गरिमापूर्ण समझने का उनका आग्रह, कांग्रेस को एक संकीर्ण मानसिकता वाले छोटे से दल से एक बडे जनआंदोलन को संचालित करने वाली विशाल संस्था के रूप में परिवर्तित करने का कार्य आदि उनके राजनैतिक कौशल को बताते है। भारतीय चरित्र प्रतीकों और भाषा का नये अर्थ बताने और सामाजिक कार्यो को सुसंगठित करने में उपयोग किया।

गांधीजी को देश और दुनिया के अन्य नेताओं से पृथक करने वाली बात, है कथनी और करनी के अन्तर को समाप्त करने, व्यक्तिगत और सार्वजनिक मूल्यों के अंतर को समाप्त करने, आदर्श और संभव के अन्तर ,वास्तविक और अवास्तविक के अंतर को समाप्त करने की उनकी प्रतिबद्वता।

एक ऐसे समय में जब धार्मिक विश्वास के मामलों को विभिन्न रूपों एवं अर्थो में लिया जाता हो, नेतृत्व का मूल्यांकन आसान कार्य नही रह जाता। गाँधीजी की महानता का बोध इसी तथ्य से हो जाता है कि राजनैतिक व्यक्ति होते हुए भी उन्हें एक महान् संत माना जाता है।।

नास्तिकता वादियों की एक पूरी पीढ़ी गाँधीजी को संत मानने से इन्कार रही है कि इन-इन अर्थो में गॉधीजी संत नही हो सकते या संत बनने के आवश्यक निर्धारक तत्वों की पास कमी थी। जो भी हो

एक धार्मिक व्यक्ति के रूप में गाँधीजी रूढ़िवादी नही थे। इन सबका उनके विचारों एवं कार्यशीलता पर प्रभाव पड़ा।

9.5 दक्षिण अफ्रीका एवं में विरोध प्रदर्शन

इसी प्रकार दूसरा प्रश्न यह है कि क्या अंग्रेजों को देश से बाहर निकालने " गाँधीजी सशक्त माध्यम थे? यह तर्क भी विश्वसनीय है कि चाहे गाँधीजी ऐतिहासिक मंच पर नहीं होते तब ' वैश्विक वास्तविकताओं को देखते हुए सन् 1947 तक अंग्रेज, इस उपमहाद्वीप को छोड़ देते। गाँधीजी के सारे प्रयासों के बावजूद अंग्रेज जरा भी शिथिल अथवा उदार नही हुए किन्तु फिर भी गाँधीजी के सिद्धांत और नीतियाँ किसी क्रूर शासन का विरोध करने के सशक्त माध्यम साबित हुए जैसे स्वतंत्रता प्राप्ति के भारतीय आंदोलन में गाँधीजी की भूमिका बड़ी प्रभावी रही। गाँधीजी ने विरोध करने और चुनौती देने के लिए आवश्यक उत्प्रेरण और इच्छाशक्ति प्रदान की।।विभिन्न परिस्थितियों और तथ्यों ने एक ऐसा उपयुक्त वातावरण तैयार किया जिसे न तो नकारा जा सकता है और न पृथक किया जा सकता है। अद्वितीय बात यह थी कि कैसे गाँधीजी ने ढेर सारी चुनौतियों का प्रबधंन किया और कैसे उन्होने लगभग अजेय परिस्थितियों का सामना किया। इस प्रकार के तथ्यों और पहलुओं के अध्ययन से गाँधीजी के नेतृत्व की प्रकृति का पता चलता है।

गाँधीजी ऐसे क्षेत्र और परिवार से थे जो भक्ति परंपरा से प्रभावित था। इसके प्रभाव स्वरूप उनकी राजनैतिक शैली निर्धारित हुई जिसने उन्हें अज्ञान और संचार-साधनों के अभाव वाली परिस्थितियों में मदद की। गाँधीजी ने वही किया जो भक्ति परंपरा के गुरू सदियों से करते चले आ रहे थे- जन शिक्षण का कार्य।

गाँधीजी को किसी अन्य लोकप्रिय नेता के समकक्ष भी नहीं माना जा सकता। दक्षिण अफ्रीका में उनकी भूमिका कोई सौंपा हुआ कार्य नहीं था। इसके लिए न तो उन्हें बाध्य किया गया, न उनसे अनुनय-विनय किया गया और न ही उनके कोई व्यक्तिगत उद्देश्य थे। गरीबी, शोषण, क्रूरता, भेदभाव और अज्ञानता से पीड़ित भारतीय जनसमूह ने उनके अतर्मन को झकझोर दिया और वे उनके हितों की रक्षा के लिए संघर्ष करने लगे। गाँधीजी की प्रतिक्रिया की तुलना भावनात्मक प्रवाह से नहीं की जा सकती और न ही ऐसा उन्होंने लोकप्रियता और प्रशंसा पाने के लिए किया था। तथ्य यह है कि गाँधीजी ने स्वयं को दक्षिण अफ्रीका में प्रभावित मजदूरों के तुल्य माना और उनके हित को अपना हित मानकर संघर्ष किया। वे वहां आशा और एकता का संदेश देना चाहते थे ताकि क्रूर शासन प्रणाली का विरोध किया जा सके। वे चाहते थे कि यह विरोध नैतिक मूल्यों जैसे सत्य, अहिंसा, मानवीय गरिमा और करूणा के बिना संभव नहीं हैं।

गाँधीजी को मात्र सामाजिक या आर्थिक सुधारक मानना भी पर्याप्त नहीं है। यदि हम उनकी प्राथमिकताओं को नहीं समझ पाते हैं तो हम उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के विभिन्न पहलुओं को भी नहीं समझ पाएंगे। गांधीजी परिवर्तन चाहते थे किन्तु वे यह नहीं चाहते थे कि परिवर्तन मात्र परिवर्तन के लिए हो। कोई परिवर्तन, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, वह अंतिम और संपूर्ण नहीं हो सकता क्योंकि लक्ष्यात्मक उद्देश्य के लिए गाँधीजी अपनी प्राथमिकताओं से बिल्कुल समझौता नहीं करते।

वास्तव में गाँधीजी को उचित रूप से राजनैतिक नेता माना गया है। इस पर भी पुनर्विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि उनके राजनीति के बारे में उनके विचार बिल्कुल भिन्न थे। वे राजनीति के सामान्य विश्वासों, राजनीति की प्रकृति पर परंपरागत और तत्कालीन प्रभावों, सार्वजनिक जीवन और राजनैतिक हितों से इतर थे। गाँधीजी ने राजनीति में नैतिकता पर जोर दिया, और साथ 'ही राजनैतिक सिद्धांतों को मानवीय रूप से अधिक सुदृढ बनाने पर बल दिया। यदि राजनीति विस्तार की भावना आक्रामक और शोषक शक्ति से संचालित होती है तो यह हिंसक बल प्रयोग का कारण बनेगी और जनजीवन और सभ्य समाज को विचलित एवं भयाक्रांत करेगी और सदियों के मानव विकास को अवरूद्ध करेगी। गाँधीजी इस प्रक्रिया को उलटना चाहते थे ताकि एक सभ्य प्रणाली का विकास हो।

गाँधीजी कभी किसी औपचारिक एवं आधिकारिक पद पर नहीं रहे, न ही वे चुने हुए या प्रशासनिक तौर से सक्षम व्यक्ति थे कि वे स्वयं को एक निर्णायक शक्ति मान सकें। उन्होंने एक आग्रही और विरोधी के रूप में अपना कार्य प्रारंभ किया। वे कभी निजी लाभ या वैभव के अभिलाषी नहीं रहे। उन्होंने तो स्वहित को पीछे रखकर जनहित के लिए कार्य करने का दृढ़ निश्चय किया था। किन्तु फिर भी यदि वे जन जागृति द्वारा आंदोलन चला पाए तो इसमें गाँधीजी के नेतृत्व की प्रकृति का अध्ययन करने की आवश्यकता महसूस होती है। इस मुद्दे पर हमारे विचार भिन्न हो सकते हैं किन्तु उनके नेतृत्व के क्रियात्मक अर्थ एवं उनका योगदान अद्‌वितीय है।

व्यापक अन्याय और सभ्य समाज के नियमों के विपरीत कार्यो को सहन करना और किसी कारण से व्यक्तिगत या आन्दोलनात्मक रूप से उनका विरोध न करना एक परिस्थिति है किन्तु चुनौती देने एवं विरोध करने का निश्चय एक दूसरी परिस्थिति है जिसमें अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। कहीं ऐसा न हो कि किन्हीं कारणों से चुनौती देना या विरोध प्रकट करना एक विद्‌य रूप ले ले। यह बात गाँधीजी पर विशेषरूप से लागू होती है क्योंकि नैतिक विरोध के उनके प्रयोग दक्षिण अफ्रीका के नरलीय वातावरण से प्रारंभ हुए थे जहां काले लोगों की राष्ट्रीयता से कोई संबंध नहीं था किंतु भारत में यह विरोध भारत के राष्ट्रीय स्वाभिमान से जुड़ गया जिसके व्यापक प्रभाव एवं परिणाम संभावित थे। गाँधीजी मानते थे कि उनके विकल्प किसी भी अर्थ में सिद्धांत नहीं है और न ही वे आदर्शवाद से बंधे हुए हैं, गाँधीजी को यह स्वीकार करने में कभी कोई संकोच नहीं हुआ कि उनके विकल्प अंतिम नहीं हैं - उनका पुनर्मूल्यांकन, पुनःपरिभाषित करना और उनके सुधार करना संभव है। गाँधीजी के नेतृत्व के पूरे संदर्भ को इस परिस्थिति वास्तविकता के रूप में देखना चाहिए। इस नेतृत्व की आधिकारिक क्षमता गाँधीजी के प्रभाव और उनका मिलने वाले जनसमर्थन की समानुपाती है। इसे किसी राष्ट्रीय आंदोलन के नेता को मिलने वाले प्रबल जन समर्थन और विश्वास की दृष्टि क्षेभ देखना चाहिए।

गाँधीजी के दक्षिण अफ्रीकी प्रवास के प्रारंभिक वर्षो में उनकी सार्वजनिक जीवन और राजनीति में कोई रूचि नहीं थी किन्तु हमें यह देखकर आश्चर्य होता है कि उन्होंने किस तीव्रता और दृढनिश्चय से शासन की अनुचित नीतियों का विरोध करने का साहस किया। यह प्रासंगिक है कि किस प्रकार दक्षिण अफ्रीका के प्रभावित भारतीयों ने उनकी निःस्वार्थ निष्ठा को देखकर

उनका समर्थन किया। यहीं गाँधीजी की शुरूआत थी। यहीं से गाँधीजी की स्वीकार्यता बढ़ने लगी क्योंकि उन्होंने बंधुआ भारतीय मजदूरों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार करने वाले अनुचित कानूनों का विरोध किया जबकि वे स्वयं प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं थे। गाँधीजी अंग्रेजों की भेदभावपूर्ण नीतियों और गोरे लोगों को श्रेष्ठ और अन्य लोगों को निकृष्ट मानने से बड़े आहत थे - वे इस नस्लवाद या रंगभेद के प्रबल विरोधी थे। अंतिम और निर्णायक पड़ाव तब आया जब नस्लवाद अपने, विकृत रूप में गाँधीजी के सामने आया - जब गाँधीजी को गैरकानूनी तरीके से रेलगाड़ी में बैठने के अधिकार से वंचित किया गया। इस अनुभव ने गाँधीजी में एक क्रांतिकारी परिवर्तन और दृढ़निश्चय को जन्म दिया।

9.6 गाँधी एवं नैतिकता

एक व्यक्ति के रूप में गाँधीजी दक्षिणी अफ्रीका में होने वाले भेदभाव चिंतित थे। यह चिंता इस बात से उत्पन्न हुई थी कि अच्छा जीवन जीने को उनकी इच्छा और उनके निश्चय बहुत लंबे समय से गोरों द्वारा नकारा जा रहा था। दक्षिण अफ्रीका के असहाय लोग लंबे समय से अन्याय झेल रहे थे। संगठन और एकता की कमी के कारण उनकी मांगे न तो कभी सुनी गई, और न ही उनके कष्टों का समाधान करने या कष्टों को कम करने का कोई प्रयत्न किया गया। जब गाँधीजी ने यह कार्य अपने हाथ लिया तो अधिकार, स्वीकार्यता और विश्वास के बीज अंकुरित होने लगे।।

अन्याय पर आधारित शासन प्रणाली के वर्गीय सामाजिक, आर्थिक मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक परिणाम थे किन्तु यह सब प्राथमिक रूप से राजनैतिक भेदभाव जनित था जो बिना। औचित्य और न्याय के था। प्रभावित लोग गाँधीजी के सत्याग्रह के विकल्प के प्रति आश्वस्त थे। उनका विश्वास था कि इससे उन्हें स्वाभिमान पूर्वक जीने का अधिकार मिलेगा। दक्षिण अफ्रीका और भारत दोनों में गाँधीजी की शक्ति उनके नैतिक आधार में निहित थी। किंतु फिर भी यह किसी धर्म विशेष या आस्थाविशेष का मामला नहीं था। गाँधीजी ने कभी भी इन चुनौतियों की राजनैतिक प्रकृति से मुंह नहीं मोडा। यद्यपि नैतिक आधार मजबूत था किन्तु फिर भी कभी वे राजनैतिक निर्धारकों से मुक्त नहीं हो पाए। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका और में प्रभावित और पीड़ित लोगों को तैयार किया ताकि वे यह समझ सकें कि नैतिकता और राजनीति दोनों दूसरे के पूरक होने चाहिये। भविष्य में होने वाली घटनाओं से स्पष्ट है कि राजनीति नैतिकता के रूप में परिणित हो गई।

गाँधीजी राजनीति को एक भिन्न दृष्टि से देखते थे। गाँधीजी ने, नकारात्म्क प्रतियोगी, दमनात्मक और विघटनकारी राजनीति को नकार कर राजनीति में नैतिकता, शुद्धता, पारदर्शिता, प्रतिबद्धता और व्यक्ति, समाज तथा सामाजिक आधारों की दृढ़ता जैसे गुणों के विकास पर बल दिया। इन सबसे गाँधीजी को स्वीकार्यता एवं अधिकारों का बोध होता है।

दूसरे शब्दों में, उनकी दृष्टि, रणनीति और उद्देश्य राजनैतिक और नैतिक दोनों ही थे। राजनैतिक व्यक्ति के रूप में गाँधीजी प्रमाणिकता व अधिकारिता प्राप्त करने में सफल रहे किन्तु इन सबके मूल में उनका नैतिक बल ही था। लोगों ने गाँधीजी को सिर्फ इसलिए स्वीकार नहीं किया कि वे उन्हें राजनैतिक रूप से शक्तिशाली बनाना चाहते थे बल्कि इसलिए स्वीकार

किया कि उनकी नैतिकता ने उनकी स्वीकार्यता में उत्प्रेरक का कार्य किया था और सर्वजन उनके नैतिक साहस से प्रभावित होने लगे।

गाँधीजी के पहले और बाद के कई नेताओं ने राजनीति को एक पृथक वस्तु के रूप में माना किन्तु गाँधीजी ने नैतिकता और राजनीति के मेल को हमेशा प्रोत्साहित किया। यह बात गाँधीजी की अधिकारिता के मूल बिन्दुओं को रेखांकित करती है। स्वयं का विकास, त्याग, हार और जीत को समान समझने की क्षमता, सफलता और असफलता को निर्विकार रूप से ग्रहण करने की योग्यता, विश्राम और कष्ट में अंतर न करना आदि गुणों ने गाँधीजी को एक भिन्न व्यक्ति और एक भिन्न नेता के रूप में पहचान दिलाई।

भारत में या दक्षिण अफ्रीका से लौटते समय मूलभूत मुद्दों का सामना करने में कभी उग्र मानसिकता का परिचय नहीं दिया। घर वापसी एक उनमें के विचारशील विरोधी और निश्चयी विरोधी के गुण आ चुके थे। इससे सामान्य जन उनकी राष्ट्रीयता से आकर्षित हुए। कांग्रेस इन्हीं के परिणामों का उपज थी। एक ऐसे विचारशील कार्यकर्ता की आवश्यकता थी जो उग्र विचारधारा की बेलगाम संघर्ष प्रणाली पर लगाम लगा सके। गाँधीजी ऐसा करने में सफल रहे और उन्होंने कांग्रेस को जनाधार प्रदान कर संघर्ष के लिए तैयार किया। कांग्रेस को स्वीकारा गया, उसका समर्थन किया गया और उसमें गांधीवादी विचारों को स्पष्ट एवं गतिशील प्रभाव दिखने लगा। चंपारन, खेड़ा और अहमदाबाद के संघर्षो के कारण भिन्न हो सकते हैं किन्तु फिर भी उनमें एक समानता थी जिसे गाँधीजी समझ सकते थे। उन्होंने इन सभी मुद्दों पर समझ और जागरूकता पर बल दिया और उन पर जल्दबाजी में कोई भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं दी। गाँधीजी ने लोगों के अधिकारों, न्याय और उचित व्यवहार को पुन: स्थापित करने का प्रयत्न किया तथा समझौतों का पालन और आश्वासनों को पूरा करने का ईमानदार प्रयत्न किया। इन सबके परिणामस्वरूप वे प्रभावित लोगों के प्रिय पात्र बन गए। इन गुणों ने आम जनता में गॉधीजी के प्रति समझ बढ़ाई। हर आंदोलन के साथ परस्पर विश्वास बढ़ता गया और गाँधीजी को अधिक स्वीकार्यता मिलने लगी।

गाँधीजी की आवाज किसी क्रूर शासक की आवाज नहीं थी। उनकी विचारधारा और कार्यो में बल प्रयोग का कोई स्थान नहीं था। वे स्वयं भी शारीरिक रूप से बलिष्ठ नहीं थे। वे व्यक्तिगत तौर पर कोई शक्ति प्राप्त करना नहीं चाहते थे। गाँधीजी ने अपने संपूर्ण सार्वजनिक जीवन में कभी कोई पद प्राप्त करने की अभिलाषा नहीं रखी। भारत में ब्रिटिश काल में उन्होंने किसी औपचारिक संस्थान में पद प्राप्त करने का भी कोई प्रयत्न नहीं किया। वे शासकों से संघर्ष करने के लिए सेना तैयार करने के भी खिलाफ थे। नेता के रूप में उनके सामने विनाश, तोड़फोड़ और हिंसक गतिविधियों का कोई स्थान नहीं था। उन्होंने प्रणाली गत शासन को नष्ट करने का भी प्रयत्न नहीं किया। फिर भी गाँधीजी का आभामंडल उनके विचारों, निर्णयों और विकल्पों में दिखाई देता है। यह अपनी तरह का एक करिश्मा ही था। उनके व्यक्तित्व का आकर्षण किसी करिश्मे में नहीं था बल्कि नैतिक सिद्धान्तों का पालन करने के उनके निश्चय में था। एक बार जब लोगों को गाँधीजी की नैतिक क्षमताओं पर विश्वास हो गया तो उन्होंने गॉधीजी को अपना सर्वमान्य नेता मान लिया।

9.6 निष्कर्ष

इसी प्रकार दूसरा प्रश्न यह है कि क्या अंग्रेजों को देश से बाहर निकालने में गाँधीजी सशक्त माध्यम थे? यह तर्क भी विश्वसन समाज के एक बड़े तबके में यह विश्वास था कि गाँधी की राजनीति को अपनी शक्ति बढ़ाने और अपने को लोकप्रिय बनाने के लिए नहीं करते थे, गाँधीजी की नेतृत्व शैली को और भी सुदृढ़ बनाया। उनके लिखित सिद्धांत जो व्यक्तिगत उत्थान, सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन और जीवन-मूल्यों को पुनर्जीवित करने पर आधारित थे ने गाँधीजी के उपदेशों की संपूर्णता को प्रासंगिक रूप से प्रस्तुत किया। उनकी अन्तर्निहित सोच, जो रूढ़िवादी विचारधाराओं को बदलने से होने वाले परिणाम के थे को लोगों ने समझा। इस अनुभव से कि वे मौलिक परिवर्तन के पक्ष में जोर देकर कहते थे और जिसे 'एक समाप्त, व्यक्ति समझ लेता था गाँधीजी की इस सोच के अनुरूप लोगों की इस समझ को और भी बल मिला। लोगों। को संगठित करने के लिए गाँधीजी का आहवान और एक निरंकुश शासन के कठोर व अनावश्यक प्रावधानों का बहिष्कार करने का उनका दृढ़ निश्चय कहीं से अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं था।

गाँधीजी अपने भेदभाव रहित विचार और रणनीति के लिए लोगों के बीच प्रिय थे। यहां सी.आर दास, मोतीलाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस, मोहम्मद अली जिन्ना, भीमराव अम्बेडकर, सी. राजगोपालाचारी आदि के उदाहरण को विस्तार से व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं हैं। उन्होंने काफी भिन्न विचारों की व्याख्या की जो एक-दूसरे के विचारों को प्रभावित करने वाल थे, फिर भी गाँधीजी ने इस परिस्थिति से उत्पन्न समस्याओं का उल्लेख कर लोगों को उलझाना उचित नहीं समझा और उनके साथ अपने संबंध को भी मधुर बनाए रखा। उसी समय व्यक्ति गाँधीजी से असहमत हो गये और कभी-कभी वे बड़े ही तीक्ष्ण आलोचना के शिकार हुए गाँधीजी की सहानुभूतिपूर्ण क्षमाभाव की शक्ति कभी इससे क्षीण नहीं पड़ी। उनकी इस क्षमता से उनके विचारों की भिन्नता को सकारात्मक बल मिला। उन्हें अपने सिद्धान्तों के सार से समझौता करने का प्रश्न ही नहीं उठता था जहां उनके लिए इन विचारों अथवा सिद्धांतों तथा इनके प्रति उनका व्यक्तिगत झुकाव और अन्य विचारों के बीच स्पष्ट अन्तर को मानना सदैव उचित और परिस्थिति के अनुकूल था।

दूसरी तरफ, व्यक्तिगत और संस्थागत स्तर पर समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए किए, गये कार्यो से समान स्वरूप के किन्तु भिन्न स्थितियों वाले विचारधाराओं में उत्पन्न तुच्छ अथवा विशाल अन्तर को समझना कठिन न हो जाय। क्योंकि वे जो भारतीय समस्याओं का प्रकृति के प्रति एक भिन्न और सर्वथा स्पष्ट विचार रखते थे, उनसे यही अपेक्षा थी कि अपने व्यक्ति प्राथमिकता का त्याग नहीं करेंगे, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार गाँधीजी आवश्यक सिद्धांतों के आधार को कभी नहीं छोड़ेंगे।

गाँधीजी के प्रभाव का एक बड़ा कारण उनकी दूसरों को अपने विचारों से संतुष्ट, की योजना थी। वे उदासापूर्वक दूसरों का दृष्टिकोण समझने का प्रयास करते थे और अपने सिद्धांतों से किये बगैर उसके साथ सामन्जस्य स्थापित करने की क्षमा रखते थे। उनकी सहनशीलता और उनकी उन्हें एक अद्‌वितीय व्यक्ति और अपनी तरह का अकेला नेता बनाते हैं।।,

दक्षिण अफ्रीका और भारत में परिस्थितीय वास्तविकताओं को देखते हुए उनका विश्वास था कि विरोध और संघर्ष का तरीका नवीन, स्वीकार्य, उद्देश्यपूर्ण और मानवीय होना चाहिए। गाँधीवादी परिप्रेक्ष्य में उन प्रतीकों का उपयोग किया गया जो जन-साधारण से जुड़े हुए थे और ये प्रतीक काफी प्रभावी सिद्ध हुए इनसे स्पष्ट है कि उनका चेतन प्रयास राष्ट्रीयता वादी उद्देश्यों की पूर्ति करना था और अपने विकल्पों को में स्वीकार्यता दिलाना था। इसके साथ ही उनका उद्देश्य राष्ट्रीय पहचान को पुनर्जागरित करना भी था । गाँधीजी के नेतृत्व का एक प्रमुख अंग था - उनके अभिव्यक्तिपूर्ण प्रतीक जैसे स्वदेशी, खादी, चरखा, एकदशा महाव्रत, हरिजन और रामराज्य। उदाहरण के लिए स्वराज्य का अर्थ मात्र राजनीतिक स्वशासन नहीं था बल्कि इसका उद्देश्य मानवीय गरिमा, स्वायत्तता की पूर्णता। स्वराज्य पृथक से कोई उद्देश्य नहीं था। वह वास्तव में गाँधीजी के विचारों, आदर्शो और कार्यो को समग्ररूप से अभिव्यक्ति करने का माध्यम था। इसी प्रकार स्वदेशी मात्र आर्थिक आधारों तक सीमित नहीं था बल्कि यह स्वावलम्बन, आत्म-सम्मान और उपभोक्तावादी चुनौतियों का सामना करने का माध्यम था। इसी प्रकार अन्य प्रतीक भी समग्र राष्ट्रवाद की भावना से ओतप्रोत थे। इन सबके परिणामस्वरूप एक आधिकारिक व्यक्तित्व के रूप में गाँधीजी की स्वीकार्यता बढ़ी।

इतिहास में अधिकतर नेताओं ने कभी विदेशी और स्वेच्छावादी शासन का सामना नहीं किया था। इस प्रकार का शासन देश के सामाजिक, आर्थिक, ताने-बाने को नष्ट कर रहा था और साथ ही हमारे ऐतिहासिक और सांस्कृतिक गौरव को क्षति पहुंचा रहा था। ब्रिटिश शासन की उपनिवेशवादी प्रवृत्ति के फलस्वरूप गाँधीजी को कई नई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता का पुरजोर समर्थन कर भारत का एक नया इतिहास लिखने का प्रयत्न किया। अत: अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये और विदेशी शासन को अस्थिर नीतियों से निपटने के लिये उचित एवं स्वीकार्य विकल्पों का सहारा लिया। उनके आधिकारिक व्यक्तित्व को एक शक्तिशाली, राजनैतिक प्रतिद्वन्दी का सामना करना पडा। इसके अतिरिक्त उन्होंने व्यक्ति की गरिमा की पुर्नस्थापन करने, सामाजिक-आर्थिक-परिवर्तन करने और सामाजिक उत्थान के कार्य भी किये। जनता द्वारा दिया गया विश्वास उनकी सबसे बड़ी ताकत बना। जनता के विरोध पूर्ण आन्दोलनों को एक नया और मानवीय रूप देकर उन्होने एक ऐतिहासिक कार्य किया।

गाँधीजी इस बात से अनभिज्ञ नहीं थे कि भारतीय पुनर्जागरण और सुधारवादी प्रयास आमजन को सैकड़ों वर्षो की सुषुप्त और निराशा से दूर करने में कुछ हद तक सफल रहे हैं। उनके आन्दोलनों में अपनी बात दृढ़ता से कहना, स्वयं का समालोचनात्मक मूल्यांकन करना और एक राष्ट्र के रूप में भारतीय गरिमा को पुर्नस्थापना आदि महत्वपूर्ण तथ्य थे। गाँधीजी ने इस विरासत को प्राप्त कर विभिन्न दृष्टिकोणों के बीच सामानजस्य स्थापित करने का प्रयास किया। वे समाज के मात्र एक हिस्से तक सीमित नहीं थे बल्कि उन्होंने सम्पूर्ण भारतीय समाज को प्रभावित कर एक राष्ट्र के रूप में भारत के स्वतंत्र अस्तित्व को पहचान दिलाने के प्रयास किये। समाज के सभी अंगों एवं वर्गो को साथ लेकर चलने की उनकी योग्यता अद्वितीय थी। यह गाँधीजी के आधिकारिक व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण बिन्दु रहा हैं।

क्रांतिकारी नेता प्राय: अवास्तविक आशाएं एवं अपेक्षाएं रखते हैं। वे असंभव कार्य को संभव बनाने का प्रयत्न करते हैं और स्वयं को करामाती सिद्ध करने का प्रयास करते हैं, चाहे वे अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों को अल्प रूप में ही प्राप्त कर सके या नहीं। आम जनता को जब तक यह बात समझ आती है तब तक काफी देर हो चुकी होती है। अपनी गलतियों को देर से महसूस करना भी अनुचित बात है। क्रांतिकारी नेता जनप्रिय, लोकतांत्रिक और जनता के सच्चे प्रतिनिधि नहीं बन पाते। गाँधीजी अपने स्वतंत्र विचारधारा और अपनी नीतियों के फलस्वरूप एक मानवीय और नैतिक आधार प्राप्त कर सके जिसने उनकी आधिकारिकता को मजबूती प्रदान

वास्तव में गाँधीजी बलप्रयोग, हिंसा और प्रतिशोध की भावना से रहित परिवर्तन के लिये अपनी प्रतिबद्धता के कारण एक नायक के समान स्वीकार्य हुए किसी भी समस्या का समाधान करने के लिये वे बलप्रयोग को नहीं बल्कि सौहार्दपूर्ण बातचीत को महत्व देते थे। उनके सत्याग्रह का आधार भी यही था। गाँधीजी के सत्याग्रह का उद्देश्य किसी कल्पनातीत आदर्श राज्य की स्थापना नहीं था। किसी भी नेतृत्व को विश्वास एवं स्वीकार्यता प्राप्त करने के लिए खुले एवं, मानवीय आधारों की आवश्यकता होती है तभी वह नेतृत्व का विश्वास प्राप्त कर पाता है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वे कभी जनता के चुने हुए प्रतिनिधि नहीं रहे, किन्तु वे भारतीय जनता के प्रवक्ता के रूप में स्वीकार किये गये। देश के भविष्य को लेकर ऐसा कोई अन्य नेता नहीं था जिसे जनता ने सर्वमान्य रूप से स्वीकार किया हो। विरोध के लिये उनके द्वारा अपनाये गये तरीकों ने भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी उन्हें एक स्वीकार्यता प्रदान की। इन सब ने उनके आधिकारिक व्यक्तित्व को एक नया बल दिया।

गाँधीजी की मृत्यु के बाद भी उनके विचारों, आदर्शो और विकल्पों ने सभ्य समाज को एक नई दिशा दी। गाँधीजी के विचार ही उनकी शक्ति के स्त्रोत थे। दक्षिण अफ्रीका हो या भारत उन्हें हर पर एक निःस्वार्थ नेता के रूप में पहचान मिली। उनकी निःस्वार्थता की उनके विरोधी भी प्रशंसा करते । राष्ट्रीय गौरव को पुनर्जीवित करने, राष्ट्र-निर्माता के रूप में, सद्भावना और शांति के प्रचारक के रूप में ने एक नई स्वतंत्र सामाजिक व्यवस्था को जन्म दिया।

उपभोक्तावादी, अधिकारवादी एवं शोषक परम्पराएं आज हमारे जीवन को दूषित कर रही। हमें इनसे सावधान रहने की आवश्यकता है। हिसा, नस्लवाद, अन्याय और राजनैतिक पतन आज मानवता के लिए बड़े कष्टप्रद हो चुके हैं। गाँधीजी जीवन में उद्देश्यों को और उपयोग में आने वाले माध्यमों-दोनों को ' महत्वपूर्ण मानते थे।

9.8 अभ्यास प्रश्न

1. महात्मा गाँधी के राजनैतिक नेतृत्व पर टिप्पणी कीजिए।
2. गाँधी की क्रियाशीलता का विश्लेषण कीजिये।
3. विरोध प्रदर्शन हेतु गांधीवादी साधनों की समीक्षा कीजिए।
4. गॉधी को मिले जनसमर्थन के कारणों की विवेचना कीजिये।

9.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. 1 भाटिया, बी.एम., हिस्ट्री एण्ड सोशल डवलपमेंट्स, इथिक्स इन इंडिया, वो.।,, नई दिल्ली, 1974
2. घोष, एस., पॉलिटिकल आइडियाज एण्ड मूवमेन्ट्स इन इण्डिया, एलाइड पब्लिशर्स बॉम्बे, 1975
3. ब्लोण्डेल, जे., वर्ल्ड लीडर्स, सेम पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, 1980
4. रामचन्द्रन, जी. एवं महादेवन टीके., गाँधी हिज रेलेवेन्स फॉर अवर टाइम्स, गाँधी पीस फाउण्डेशन नई दिल्ली, 1967
5. मेहता, वी.आर आइडियोलॉजी मॉडर्नाइजेशन एड पोलिटिक्स इन इण्डिया, मनोहर पब्लिकेशन्स
6. नई दिल्ली, 1983

इकाई - 10
वैकल्पिक संघर्ष निवारण

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 वैकल्पिक विवाद निवारण क्या हैं?

10.3 वैकल्पिक विवाद निवारण का इतिहास

10.4 वैकल्पिक विवाद निवारण और प्रतिद्वंद्विता प्रणाली

10.5 वैकल्पिक विवाद निवारण का उदभव

10.6 वैकल्पिक विवाद निवारण की विभिन्न व्याख्याएं

10.7 भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण

10.7.1 लोक अदालत - भारत मे वैकल्पिक विवाद निवारण का अद्विती माध्यम

10.7.2 भारत मे वैकल्पिक विवाद निवारण का उपयोग

10.8 भारत में लागू करने में आने वाली समस्याएं एवं सुझाव

10.9 निष्कर्ष

10.10 अभ्यास प्रश्न

10.11 संदर्भ ग्रन्थ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप जान सकेंगे:

- वैकल्पिक विवाद निवारण के तरीकों के बारे में,
- वैकल्पिक विवाद निवारण के उद्गम और इतिहास के बारे में,
- वैकल्पिक विवाद निवारण कैसे अस्तित्व में आया और कैसे विकसित हुआ?
- वैकल्पिक विवाद निवारण की विभिन्न व्याख्याओं के बारे में,
- भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण की स्थिति के बारे में,
- वैकल्पिक विवाद निवारण की विभिन्न समस्याओं और समाधानों के बारे में।

10.1 प्रस्तावना

नागरिकों के आपसी विवादों का राष्ट्र के कानून के आधार पर निपटारा करना आधुनिक राष्ट्रों का एक महत्वपूर्ण कार्य हैं। इस प्रकार राष्ट्र के अपने कानून और वैधानिक प्रक्रियाएं होती हैं जिनसे वह विवादों का सर्वसम्मत और शांतिपूर्ण समाधान करने का प्रयास करता है। इसी प्रकार विभिन्न राष्ट्रों के आपसी विवादों का निपटारा करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ और अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ हैं। अभी हाल ही में अफ्रीकी एकता संगठन (OAU) और दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्रों का संगठन (ASEAN) जैसे क्षेत्रीय संगठनों ने भी

अपने सदस्यों के आपसी विवादों को निपटाने के लिए कुछ तरीके विकसित किए हैं। कई अंतरराष्ट्रीय गैर सरकारी संगठनों ने भी विवादों का समाधान करने के लिए मध्यस्थता करने की पहल की हैं।

किन्तु ऐसा महसूस किया जाता है कि राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठन भी विवादों के शांतिपूर्ण समाधान मे असफल रहें हैं। वास्तव में राज्य विवाद निवारक के स्थान पर स्वयं ही विवाद एक पक्ष बन जाता हैं। राज्य एवं यहां तक कि संयुक्त राष्ट्र संघ की विवाद निवारण की योग्यता के बारे में सामान्यत एक असंतोष का भाव हैं। अधिकतर मामलों में विवादों के शांतिपूर्ण समाधान में राज्य की भूमिका बहुत छोटी और देरी करने की होती हैं। भारत में भी हम देखते हैं कि विवादों के निपटारे में होने वाली असामान्य देरी के कारण सामाजिक निराशा, आक्रोश आदि का जन्म होता है जिनकी परिणित कई बार हिंसा के रूप मे होती है। कई बार ऐसा भी अनुभव किया जाता है कि आधिकारिक न्याय प्रकिया स्वंय ही शांति के मार्ग में बाधा बन जाती हैं। क्या इन सबका कोई समाधान हैं?

"वैकल्पिक विवाद निवारण" शब्द में वे विभिन्न तरीके या तकनीकें शामिल हैं। न्यायालय प्रक्रियाओं के विकल्प हो सकते हैं। इसमें निष्पक्ष तीसरे पक्ष के सहयोग से न्यायालय के बाहर ही शांतिपूर्ण हल निकालने के प्रयास भी शामिल हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका प्रशासनिक विवाद निवारण कानून (सन् 1996) विवाद निवारण के वैकल्पिक माध्यमों को इस प्रकार पारिभाषित करता हैं। 'कोई प्रकिया जिसका विवाद निवारण में होता हैं और जो मात्र समझाई, मध्यस्थता, तथ्य ढूंढने, सुनवाई करने, दोनो पक्षों को स्वीकार्य निर्णय करने, या अन्य किसी माध्यम तक ही सीमित नहीं हो। 'वैकल्पिक विवाद निवारण के दो अत्यंत साधारण रूप हैं - वार्तालाप और मध्यस्थता। वैकल्पिक विवाद निवारण का इतिहास उसके अर्थ के बारे में काफी कुछ बताता है और जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, वैकल्पिक विवाद निवारण का उद्भव विवाद निवारण के लिए माध्यमों की तलाश से हुआ। 1970 के दशक मे संयुक्त राज्य अमेरिका में न्याय प्रशासन के प्रति असंतोष था जिसके परिणामस्वरूप 'वैकल्पिक विवाद निवारण' शब्दावली अस्तित्व में आई।

वैकल्पिक विवाद निवारण के समर्थकों ने अनावश्यक खर्च को कम करने, के निर्णयों में देरी को दूर करने, मुकदमेबाजी में प्रतिद्वंद्विता समाप्त करने, न्याय तक लोगों की पहुँच बढाने, साथ ही विवादग्रस्त पक्षों और समुदायों को अपनी समस्या का समाधान स्वयं ढूँढने के लिए अधिकार संपन्न मनाने पर जोर दिया। सम्पूर्ण इतिहास में दुनिया भर के समाजो ने विवाद या झगड़े निपटाने के लिए कई प्रकार के पारंपरिक तरीकों और तकनीकों (गैर-न्यायिक एवं स्वनिर्मित) का उपयोग किया है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, विवाद निपटाने के कुछ पारंपरिक तरीके इस प्रकार है : पांच बुजुर्ग पंचो वाली भारतीय पंचायात और उसका लोक अदालतों के उपयोग का अभियान ताकि दुर्घटना और पारिवारिक विवादों का निपटारा किया जा सके, मध्य-पूर्व में सुलह के लिए 'वास्ता' और चीनी ध्यान पर आधारित 'तियाओ जिए'?। अर्जेंटीना, बांग्लादेश, बोलिविया कोलंबिया, इक्वेडोर, फिलीपीसं, दक्षिण अफ्रीका, श्रीलंका, यूक्रेन और उराग्वे जैसे कई देश वैकल्पिक विवाद निवारण प्रयोग के सदस्य है। कुछ देश दूसरे देशों के

वैकल्पिक विवाद निवारण मॉडल का उपयोग करतें है तो कुछ अन्य देश अपनी आवश्यकताओं विवाद निवारण मॉडल का उपयोग करतें हैं तो अन्य देश अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन करके संकर मॉडल का उपयोग करते हैं।

10.2 वैकल्पिक विवाद निवारण क्या है?

– वैकल्पिक विवाद निवारण विवादों के निपटारे के लिए सार्वजनिक न्यायालयों की मुकदमेंबाजी की तुलना में एक निजी एवं गैर प्रतिद्वंद्वी माध्यम हैं। इससे सभी पक्ष प्रतिद्वंद्वितापूर्ण न्यायालय से बच जाते है एवं इसे लोकतांत्रिक सामाजिक परिवर्तन आंदोलनों में भी स्वीकृति मिली हैं।

– वैकल्पिक विवाद निवारण में कई सहयोगात्मक प्रक्रियाएं अपनाई जाती हैं जो दोनों विरोधी पक्षों के बीच सूचना के अधिक आदान-प्रदान में सहायता करती है, सहयोग बढ़ाती हैं, समझौतों की स्थिरता में वृद्धि करती है पारस्परिक लाभ को बढ़ावा देती हैं, न्यायालय के खर्चे को कम करती हैं, परिणामों की गुणवता और स्वीकार्यता को बढ़ाती है। कुछ प्रकरणों में वैकल्पिक विवाद निवारण के फलस्वरूप विरोधी पक्षों में लंबे समय के रिश्तों पर अच्छा प्रभाव पड़ता हैं।

– श्रम प्रंबधन और रोजगार संबंधी विवादो में, पारिवारिक झगड़ो व पारिवारिक विवादों में, आपराधिक कार्यो में व्यापारिक मामलों में, सार्वजनिक विवादों और पर्यावरणीय मसलो में वैकल्पिक विवाद निवारण का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया हैं।

– यह प्रस्तुति वैकल्पिक विवाद निवारण के ऐतिहासिक विकास का समालोचना-पूर्ण परीक्षण प्रस्तुत करेंगी तथा प्रतिद्वद्वितापूर्ण न्यायालय प्रणाली और न्यायिक प्रशासन से असंतुष्ट लोगों को वैधानिक दायरे में एक वैकल्पिक प्रणाली उपलब्ध कराने की विवेचना प्रस्तुत करेगी।

– सार्वजनिक न्यायालय प्रणाली में वैकल्पिक विवाद निवारण के गुणों की व्याख्या करेगी और इस बात का परीक्षण करेगी कि क्या महिलाओं से संबधित मुद्दों का समाधानों करने में प्रभावी हैं?

– इसलिए, वैकल्पिक विवाद निवारण के विभिन्न पहुलओं का अध्ययन करने से पहले यह महत्वपूर्ण है कि हम विवाद निवारण के इस तरीके के अर्थ और विकास को भली भांति जान लें। सन् 1970 के दशक से ही न्यायिक प्रणालियों में वैकल्पिक विवाद निवारण एक लोकप्रिय ओर उचित विकल्प के रूप में स्वीकार किया जाने लगा है। वैकल्पिक विवाद निवारण की लोकप्रियता के प्रमुख कारण हैं : तीव्र गति, सक्षमता, खर्च में कमी, पक्षों में आपसी शत्रुता में कमी, लचीलापन और पक्षों की निजता की रक्षा आदि। वैकल्पिक विवाद निवारण के लक्ष्य हैं- 1. विवादों के निपटारे में देरी को कम करना 2. अप्रभावी न्यायालयों का विकल्प बनना 3.विवाद निवारण द्वारा जन संतुष्टि को बढ़ाना 4. कमजोर वर्गों की न्याय तक पहुंच बढ़ाना 5. न्यायालयीन सुधारों में सहयोग करना और 6. विवाद निवारण के खर्च में कमी, करना।

कुछ अंतराष्ट्रीय संस्थाएं, जैसे अंतराष्ट्रीय वाणिज्य संघ (ICC), वाणिज्यिक मध्यस्थता के लिए अंतराष्ट्रीय संगठन (ICCA) निवेश संबंधी विवादों के निपटारे के लिए अंतराष्ट्रीय केन्द्र, विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (WIPO) और विश्व व्यापार संगठन (WTO) भी वैकल्पिक विवाद निवारण को अपना रहीं हैं और उसको आगे बढाने का प्रयास कर रही हैं। इसके अलावा विश्व बैंक भी विभिन्न देशों मे वैकल्पिक विवाद निवारण को बढ़ावा देने का प्रयास कर रहा है। विभिन्न अंतराष्ट्रीय वैकल्पिक विवाद निवारण समझोते और सभाओं ने भी अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक विवादों को निपटाने के लिए उचित वैधानिक वातावरण का निर्माण किया हैं। अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थता पर 18वीं संयुक्त सभा 16 नवम्बर 2001 को आई.सी.सी. के अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय (पेरिस) में हुई जिसका आयोजन अंतराष्ट्रीय मध्यस्थता न्यायालय ने किया था।

10.3 वैकल्पिक विवाद निवारण का इतिहास

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका हैं, पिछले 20 वर्षों में उत्तरी अमेरिका ही नहीं वरन् विश्व में वैकल्पिक विवाद निवारण अध्ययन और प्रयोग का नया उभरता हुआ क्षेत्र बन चुका हैं। उदाहरण के लिए भारत में सन् 1960 में लोक-अदालत या ग्राम स्तरीय जन-न्यायालयों को अपनाया जिनमें प्रशिक्षित मध्यस्थ है। उन सामान्य समस्याओं का निवारण करते है। जो इसके पूर्व पंचायत, ग्राम-सभा या बुजुर्गो द्वारा निपटाई जाती थीं। इसी क्षेत्र में बांग्लादेश में ग्राम-आधारित शालिश मध्यस्थता को अपनाया गया और श्रीलंका में राष्ट्रीय स्तर पर मध्यस्थता बोर्ड बनाए गए। लेटिन अमेरिका में जूस डी पाज में रूचि पुनर्जाग्रत हुई। जूस डी पाज एक वैधानिक अधिकारी होता है जिसे छोटे दावों में मध्यस्थता करने का अधिकार होता हैं। वैकल्पिक विवाद निवारण का विकास और स्वीकार्यता विवादों के निवारण मे की नवीन विधियों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं।

10.4 वैकल्पिक विवाद निवारण और प्रतिद्वंद्विता प्रणाली

प्रतिद्वंद्वी न्यायालयीन प्रक्रिया में दो विपक्षी दल होते हैं जो एक न्यायाधीश के अपने-अपने तर्क देते हैं। न्यायाधीश निष्पक्ष और दोनों दलों से स्वतंत्र होता है। दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत सा और तर्कों के आधार पर न्यायाधीश मामले में अपना अंतिम निर्णय देता है। जनता ने न्याय की इस प्रतिद्वंद्वी प्रणाली के प्रति अपनी असंतुष्टि जाहिर की है क्योंकि दोनों पक्षों के लिए समस्या के उचित समाधान की बचाय हार-जीत अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप विवादग्रस्त पक्ष अपने मतभेदों को दूर करने के लिए वैकल्पिक माध्यमों का सहारा ले सकते हैं। अत: वैकल्पिक विवाद निवारण किसी समझौते तक पहुंचने एक वैकल्पिक एवं संयुक्त माध्यम है। इसमें बिना किसी बाहरी सहायता के वार्ता द्वारा एवं बाहरी सहायता द्वारा अथवा तृतीय पक्ष की उपस्थिति द्वारा समस्या के समाधान का प्रयास किया जाता है। जैसा कि पाइन, कहते हैं "एक छोटे अन्तराल में ही वैकल्पिक विवाद निवारण अध्ययन का क्षेत्र बन गया है और एक ऐसा बन गया है जिसके उपयोग की ढेर सारी सम्भावनाएं है।" कई कानूनविदो के प्रारम्भिक संकोच के बाद निवारण के कानून के आधुनिक अध्ययनों एवं उपयोग

में स्वीकार्यता मिल गई है। कानून के बाहर विभिन्न क्षेत्रों में वैकल्पिक विवाद निवारण की आवश्यकता होने लगी है और सम्पूर्ण विश्व में इसकी प्रक्रिया को अपनाने पर जोर दिया जा रहा है।। अत: यह आवश्यक है कि हम प्रतिद्वन्द्वी एवं गैर-प्रतिद्वन्द्वी मानसिकता को अच्छी समझ लें ताकि हम वैकल्पिक विवाद निवारण को बेहतर तरीके से समझ सकें। इसका अर्थ यह नहीं है कि वैकल्पिक विवाद निवारण विवादों के समाधान के लिए पूर्णत: गैर-प्रतिद्वन्द्वी माध्यम है। विवाद निवारण की उत्तर अमेरिका प्रणाली में प्रतिद्वद्वी मानसिकता इतनी व्यापक है कि इसे कई बार प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली भी कहा जाता है। विवादों के समाधान की प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली में अधिवक्ताओं और विवादग्रस्त पक्षों का कुछ लाभ अवश्य होता है किन्तु इस प्रणाली की कमियां इसके प्रभाव को कम कर देती है। प्रतिद्वंद्वी प्रणाली के कुछ लाभ इस प्रकार है - तथ्यों की जांच पड़ताल में सक्षमता, व्यक्तिगत अधिकारों की बेहतर सुरक्षा, न्याय पर विवादग्रस्त पक्षों के रसूख का प्रभाव नहीं होना, समाज के दोषों को दूर करने का प्रयास करना एवं लोकतांत्रिक समाज में अभिन्न महत्व होना। जनता की शिकायतों से यह महसूस होता है कि प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली में कई खामियां है जैसे विवादों को न्यायालय तक पहुंचने में दरी होना, न्यायालयीन व्यय अधिक होना, कानून की प्रक्रियात्मक पेचीदगियां, कानून और न्यायिक निर्णयों का पूर्वाग्रहों से ग्रस्त होना और न्यायालय प्रणाली तक पहुंच होना। पारम्परिक प्रतिद्वंद्वी प्रणाली के निष्प्रभावी होने के कारण लोगों के वैकल्पिक विवाद निवारण के प्रति जागृति उत्पन्न होना. प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली में विवादग्रस्त पक्ष एक दूसरे को समझने का प्रयास करने की अपेक्षा एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयास करते हैं। इसमें विश्वास पर शत्रुता की विजय होती है, उदारता पर स्वार्थ हावी हो जाता है। एक दूसरे का ध्यान रखने की बजाय आपसी शत्रुता बढती है और इन सब के परिणामस्वरूप अनादर, असहिष्णुता, हिंसा और मानसिक व्यक्तिगत मूल्यों पर आधारित है तो गैर-प्रतिद्वन्द्वी मानसिकता सामुदायिक मूल्यों पर आधारित है तो गैर-प्रतिद्वन्द्वी मानसिकता सामुदायिक मूल्यों पर आधारित है और इसकी प्रकृति विवादों के शांतिपूर्ण एवं स्थाई समाधान ढूंढने की होती है। इस प्रणाली में अधिवक्ता एवं विवादग्रस्त पक्ष दोनों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे समाधान के लिए अधिक सहयोगात्मक रवैया अपनाएं ताकि समाधान सभी पक्षों के लिए स्वीकार्य एक संतुष्टि दायक हो। इस प्रकार वैकल्पिक विवाद निवारण एवं मध्यस्थता को जनता की स्वीकार्यता मिली है किन्तु नारीवादी विद्वान न्यायायिक सिद्धान्तों में विश्वास करने वाले एवं महिलाओं का पक्ष रखने वाले लोग इसे स्वीकार करने में हिचकिचा रहे थे। पाऊनेड्र, पीटर्स और करी का मत है कि औपचारिक न्यायायिक प्रणाली की समस्याओं से बचने के लिए सरकारें मध्यस्तता को प्रोत्साहित कर रही है।

10.5 वैकल्पिक विवाद निवारण का उद्भव

वैकल्पिक विवाद निवारण ने काफी तेजी से प्रगति की है और इसके प्रयास गंभीर, शैक्षिक, परिवर्तनवादी और वर्तमान प्रक्रियाओं से अधिक सक्षम है।

- अपने कार्यक्षेत्र की व्यापकता के कारण वैकल्पिक विवाद निवारण अध्ययन का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है क्योंकि मानव व्यवहार एवं कार्यक्षेत्र में शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र हो जहां विवाद की सम्भावना नहीं होती है।

- एक अध्ययन के रूप में वैकल्पिक विवाद निवारण हमें व्यक्तियों के विवादों के बारे में अधिक समझ प्रदान करता है।
- वैश्विकरण, राजनीति, अर्थशास्त्र, प्रौद्योगिकी और संवैधानिक कानून की तरह ही वैकल्पिक विवाद निवारण की विभिन्न व्याख्याएं संभव है एवं इसके कोई मार्गदर्शक अथवा अधिकाधिक पक्ष नहीं है।
- वैकल्पिक विवाद निवारण का प्राथमिक लक्ष्य है औपचारिक तरीकों जैसे, वार्ता, मध्यस्थता सर्वसम्मति से निर्णय करने का प्रयास, दूसरे समाजों की प्रक्रियाओं पर ध्यान देकर उनकी अच्छी बातों को ग्रहण करना आदि द्वारा विवादों के निवारण का प्रयास करना। इस प्रकार अनौपचारिक विवाद निवारण का एक प्रमुख घटक है और इस आन्दोलन का मुख्य आधार मध्यस्तना है जो न्यायालयीन निर्णयों से समानता नहीं रखता है।
- केरी मेनकेल-मीडो (1996) का मत है कि वैकल्पिक विवाद निवारण वर्तमान न्याय प्रणाली के असफल होने के कारण अस्तित्व में आया। इसे एक विकल्प के बजाय सिद्धांत के रूप में देखा गया जिसके परिणामस्वरूप प्रारंभ में न्यायिक प्रक्रियाओं से जुड़े लोगों ने इसकी आलोचना की।

10.6 वैकल्पिक विवाद निवारण की विभिन्न व्याख्याएं

- सन् 1995 की विवाद निवारण पर कनाडा फोरम के अनुसार वैकल्पिक विवाद निवारण को मुकदमेंबाजी और किसी विवाद को निपटाने के लिए उचित विधि आदि को शामिल करने वाली व्यवस्था मानना चाहिए। न्याय प्रणालियाओं पर कनाडा की बार एसोसिएशन टास्क फोर्स की 1996 की रिपोर्ट में अधिवक्ताओं को समस्या समाधान के लिए प्रशिक्षित करने पर जोर दिया गया। और वैकल्पिक विवाद निवारण में विवादों को निपटाने के लिए कई विधियों को अपनाने पर जोर दिया और विवादों के निपटारे की तकनीकों को न्यायप्रणाली का विकल्प न मान कर उसका अभिन्न घटक मानने पर बल दिया।
- गोलबर्ग, सेन्डर और रोजर्स (1999) में वैकल्पिक आन्दोलन के पक्ष में एक सूची दी। जिसमें न्यायालयों पर भार को कम करने और खर्च घटाने, समुदाय और परिवार को प्रभावित करने वाले विवादों के त्वरित समाधान करने न्यायप्रणाली में जनता का विश्वास पैदा करने, विभिन्न पक्षों को स्वीकार्य निर्णय देने, समुदायिक मूल्यों और सामुदायिक एकजुटता को बनाने, विवादग्रस्त लोगों को उचित मंच दिलाने और जनता को अपने विवाद सुलझाने के लिए हिंसा व मुकदमेंबाजी की अपेक्षा अधिक प्रभावी प्रक्रिया अपनाने पर बल दिया है।
- मोटे तौर पर वैकल्पिक विवाद निवारण के लाभ को व्यक्तिगत सन्तुष्टि, व्यक्तिगत स्वायत्तता, सामाजिक नियंत्रण, सामाजिक न्याय, सामाजिक अखण्डता और व्यक्तिगत बदलाव आदि रूपों में सूचीबद्ध किया जा सकता है।
- आर.एल. एबल का तर्क है कि विकसित पूंजीवादी समाज में अनौपचारिक विवाद निवारण संस्थाओं का प्रमुख कार्य है सामाजिक नियंत्रण।

- एन्ड्रयू पाइन कहते हैं कि वैकल्पिक विवाद निवारण राज्य के नियंत्रण के लिए खतरा है किंतु यह सबको साथ लेकर चलने वाला, सर्वसम्मत और समुदाय हित चाहने वाला है।
- हैरिग्गटन और मेरी का तर्क है कि वैकल्पिक विवाद निवारण के गुण शासन के मात्र मुखौटे ना होकर सामाजिक नियंत्रण में होने वाले बदलाव की अभिव्यक्ति है।
- वैकल्पिक विवाद निवारण को महिलाओं और नारीवादियों को ध्यान में रखकर नहीं बनाया गया। जिसके परिणामस्वरूप यह उन मामलों में प्रभावी नहीं है।
- पाम मार्शल का तर्क है कि वैकल्पिक विवाद निवारण कोई रामबाण औषधि नहीं है। विवादों में निश्चित रूप से इसका स्थान है किन्तु यह भी अन्य प्रक्रियाओं की तरह सम्पूर्ण रूप से प्रभावी नहीं है। विवाद मनुष्यों के आपसी सम्बन्धों पर निर्भर करते हैं अत: जितने लोग है उतने विवाद भी संभव है। इसके अलावा यह व्यक्तियों एवं उनके हितों पर निर्भर करता है कि वे विवाद निवारण के लिए कौन सा माध्यम चुनते हैं।
- -वैकल्पिक विवाद निवारण के लिए एक विकल्प या पूरक के रूप में बहुत से गुण है किन्तु फिर भी यह पारम्परिक न्यायालयीन प्रणाली को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता। विवाद एवं संघर्ष निवारण में इसकी एक बड़ी भूमिका है किन्तु मार्शल का तर्क है कि जिस प्रकार न्यायालय के निर्णय हमेशा गलत नहीं होते उसी प्रकार वैकल्पिक विवाद निवारण भी सही नहीं होता। न्यायिक प्रक्रिया से जुड़े लोग वैकल्पिक विवाद निवारण को सबको न्याय सुलभ कराने में उपयोगी मानते हैं किन्तु इसमें भी अनिश्चितता है क्योंकि अधिवक्ता इसका निजी स्वार्थ के लिए उपयोग कर सकते हैं।
- डी. पी. एडमंड का मानना है कि वैकल्पिक विवाद निवारण विवाद निवारण के पारम्परिक तरीकों को चुनौती देता है और विवादग्रस्त लोगों को विवाद निवारण के लिए अधिक प्रभावी उपाय ढूँढने के लिए प्रेरित करता है। यह पूर्वाग्रह ग्रस्त और पुराने अनुपयोगी माध्यमों को छोड़ देने पर बल देता है। यह न्यायिक मुकदमेंबाजी की निरंकुश भूमिका को चुनौती देता है और वैकल्पिक प्रक्रिया और माध्यमों के उपयोग को प्रेरित करता है।
- इस प्रकार वैकल्पिक विवाद निवारण कई संभावनाओं को प्रोत्साहित करता है बशर्ते इसका सही और उचित उपयोग हो।
- पुन: इस बात को कहना उचित होगा कि वैकल्पिक विवाद निवारण पारम्परिक न्यायालयीन प्रक्रिया का एक अच्छा विकल्प हो सकता है किंतु उसे प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता।
- मार्शल का तर्क है कि वैकल्पिक विवाद निवारण में विवाद और विवादित पक्षों का परीक्षण होना चाहिए। विवादग्रस्त लोगों को सही, उचित और उपयोगी विकल्पों और उनके लाभ-हानि की पूरी जानकारी दी जानी चाहिए ताकि वे उचित निर्णय लेकर अपने विवादों की निपटा सके। पारम्परिक प्रक्रिया में यह लाभ नहीं होता अत: अधिवक्तागण न्यायालयीन प्रक्रिया को अपनी इच्छानुरूप चलाते हैं।
- कई विवादों का निपटारा बिना किसी अधिवक्ता के न्यायालय के बाहर और न्यायालय और न्यायायिक प्रक्रिया के बाहर हो चुका है क्योंकि लोग अपने विवादों का निपटारा अपनी शर्तों पर करना चाहते हैं।

- वैकल्पिक विवाद निवारण का उदय उस समय हुआ जब न्यायालय प्रणाली में मात्र देरी होती थी, खर्च अधिक होता था और विवादग्रस्त लोग असंतुष्ट रहते थे।
- मार्शल कहते हैं कि प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली लोगों की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाती। इस प्रणाली में मात्र अधिवक्ता व न्यायाधीश को लाभ होता है और किसी को नहीं।
- वैकल्पिक विवाद निवारण के समर्थकों को प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली का तुच्छ नहीं चाहिए क्योंकि ऐसे कई विवाद होते हैं जिनका निपटारा केवल पारम्परिक प्रणाली द्वारा संभव है।
- पारम्परिक प्रणाली में सुधार की पहल अधिवक्ता, न्यायाधीशों, शासन और विधिवेक्ता द्वारा होनी चाहिए। इन सुधारों में विवाद निराकरण के वैकल्पिक उपायों पर ध्यान देना चाहिए।।
- मार्शल कुछ प्रश्न हमारे सामने रखते हैं यदि विवादग्रस्त लोग, अधिवक्ता व न्यायाधीश पारम्परिक प्रतिद्वंद्वी प्रणाली का ही उपयोग करते हैं तो वैकल्पिक उपाय किस प्रकार सफल हो सकते हैं। क्या वैकल्पिक उपायों को आवश्यक बना देना चाहिए?
- वैकल्पिक विवाद निवारण का उदय उत्तरी अमेरीका में उस समय हुआ जब अधिवक्ता व शासन विरोधी भावना जोरों पर थी।
- प्रतिद्वन्द्वी प्रणाली की समस्याओं का समाधान संभव है इसके साथ ही वैकल्पिक उपायों का उपयोग भी संभव है। आज भी समाज में न्यायालयों का महत्व है अधिवक्ताओं और न्यायाधीशों को यह समझना चाहिए कि उनकी भूमिका सामाजिक सहयोग की है न कि सामाजिक नियंत्रण की।

10.7 भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण

भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण जनप्रतिनिधियों और न्यायपालिका दोनों के संयुक्त प्रयास का परिणाम है ताकि भारत में पूर्ण न्याय के संवैधानिक लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। प्रारम्भ में वैकल्पिक विवाद निवारण का उपयोग न्यायालयों के बढ़ते बोझ को कम करने के लिए किया गया। बाद के वर्षो में वैकल्पिक विवाद निवारण को विवाद निवारण के लिए अधिक उपयुक्त माना गया। इसके उपयोग से लोगों को औपचारिक न्यायप्रणाली तक जाने की आवश्यकता नहीं रही। इसमें यह माना जाता है कि परिवार, व्यापारिक समुदाय, समाज या मानवता की शांति भंग होने से पहले समाज, राज्य और विवादित पक्षों को मिलकर शीघ्रताशीघ्र विवादों का निवारण करना चाहिए।

एक सभ्य समाज में प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त और कानून को मिलकर किसी विवाद का न्यायसंगत हल निकालना चाहिए। कानून का अर्थ है राज्य के वे नियम जो समस्त जनता पर लागू होते हैं यह एक निरंकुश न्यायिक सिद्धान्त है जिसका उपयोग विभिन्न प्रकरणों में किया जाता है। उपरोक्त तथ्य बताते हैं कि कानून एक निरंकुश अवधारणा है जो विवाद के प्रकरण में हार या जीत की परिस्थितियों का निर्माण करती है। इसलिए वैकल्पिक विवाद निवारण कानून के साथ-साथ प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त का उपयोग करता है ताकि दोनों पक्षों की जीत के लिए उपयुक्त परिस्थितियों का निर्माण किया जा सके।

भारत जैसे देशों में इसकी महती आवश्यकता है। जहां मुकदमेबाजी के कारण पक्षों में आपसी शत्रुता हो जाती है इसीलिए भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण काफी लोकप्रिय हुआ है।

इस प्रकार भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण को आर्टिकल 14 और 21 जो समानता और जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार देते हैं के संवैधानिक आधार पर स्थापित किया गया। ये आर्टिकल भारत के संविधान के तीसरे खण्ड में है जो नागरिकों के मूलभूत अधिकारों का वर्णन करते हैं। वैकल्पिक विवाद निवारण समान न्याय और मुफ्त कानूनी सहायता जो संविधान के आर्टिकल 39 A में निहित है, से सम्बन्धित राज्य के नीति निर्देशक तत्वों का पालन करने का प्रयास करता है वैकल्पिक विवाद निवारण से सम्बन्धित कानून है Arbitration and conciliation Act और Legal services Authority Act, civil Prosedure code - की धारा 89 आदि जिनकी सहायता से विवादों का निपटारा किया जाता है।

भारत में न्याय को एक आदर्श के रूप में देखा जाता है। भारत के नागरिक सदियों से न्याय पाने के लिए उत्सुक हैं। हमारे संविधान के प्रस्तावना में भी यह आकांक्षा परिलक्षित होती है जो सामाजिक, आर्थिक, और राजनैतिक तीनों प्रकार के न्याय की बात करती है। न्याय एक संवैधानिक आवश्यकता है भारतीय संविधान के पिछले 50 वर्षो में न्यायपालिका से सम्बन्धित कई मुद्दे उठे हैं जिसमें सबसे महत्वपूर्ण है न्यायालयों का न्याय देने में असफल होना व न्याय प्रदान करने में देरी होना। सौ करोड़ लोगों के इस देश में मूलभूत प्रश्न है कि वह कौनसी न्यायायिक प्रणाली हो जो इतने सारे लोगों को न्याय प्रदान कर सके। इसलिए भारतीय संदर्भ में न्याय प्रदान करने के तरीकों और न्याय प्रदान करने में आ रही बाधाओं को दूर करने की चर्चा अत्यन्त आवश्यक है। न्याय में देरी सबसे बड़ी बाधा है जिसे युद्ध स्तर पर दूर करना होगा।

10.7.1 लोक अदालत : भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण का अद्‌वितीय

वैकल्पिक विवाद निवारण का उदय विवाद प्रबंधन और न्यायायिक सुधार के लिए एक महत्वपूर्ण आंदोलन के रूप में हुआ। आज यह एक वैश्विक आवश्यकता बन गया हैं। सामाजिक शान्ति, सदभाव भाईचारे एवं न्याय के लिए विवादों का उचित निपटारा एक महत्वपूर्ण कारक है। इतिहास से हमें यह ज्ञात होता हैं कि विवादों का निपटारा हमेशा शक्तिशाली लोगों द्‌वारा किया जाता हैं। आधुनिक राष्ट्रों एवं उन्नत वैधानिक तकनीकों के फलस्वरूप न्यायालयीन प्रकिया काफी ओपचारिक हो गई हैं। इसमें प्रशिक्षित न्यायाधीशों पर राज्य की ओर से विवादों के निपटारे की जिम्मेदारी डाली जाती हैं। इसके फलस्वरूप समय एवं धन की भारी क्षति होती हैं। इन सबसे मुक्ति पाने के लिए वैकल्पिक तकनीकों की खोज की गई। इसे ही वैकल्पिक विवाद निवारण तकनीक कहा जाता हैं। लोक अदालत की अवधारणा और दर्शन इस क्षेत्र में भारत का योगदान हैं। भारत में इसकी जड़े काफी पहले से स्थित हैं। यह मुकदमेबाजी का प्रभावी विकल्प माना जाता हैं। विवादों के समाधान में यह प्रभावी एवं त्वरित हैं। इसे विभिन्न पक्षों, आम जनता एवं विधिवक्ताओं द्‌वारा स्वीकार्यता मिली है। लोक अदालत समझाई व समझौते द्‌वारा विवादों का निवारण करती हैं। पहली लोक अदालत सन् 1982 में गुजरात में हुई। सामान्यत: लोक अदालत में कोई वर्तमान या पूर्व न्यायायिक अधिकारी अध्यक्ष होता हैं। जिनके साथ अन्य सदस्य होते हैं। जिनमें से एक अधिवक्ता व एक सामाजिक कार्यकर्ता होता हैं। इसका कोई शुल्क नहीं होता हैं।

लोक अदालत का मुख्य उद्देश्य होता है कि दोनों पक्ष किसी समझौते पर पहुँचने का। लोक अदालत के निर्णय बाह्यकारी होते हैं। और उनका वैधानिक तरीके से पालन कराया जा सकता हैं। लोक अदालत के निर्णय के विरूद्ध कोई अपील नहीं की जाती हैं। धन सम्बन्धि मामलों में लोक अदालत काफी प्रभावी होती है। लोक अदालत ऐसे लोगो के लिए वरदान हैं जो अपने विवादों का त्वरित एवं मुफ्त समाधान चाहते है। इसके सम्बन्ध में संसद द्वारा बनाया गया लीगल सर्विसेज अथोरिटिज एक्ट 1987 काफी महत्वपूर्ण है। यह एक्ट लोक अदालतों के निर्णयों को वैधानिकता प्रदान करता हैं। हमारे देश के स्वतंत्र होने से कुछ शताब्दी पहले ही अर्थात ब्रिटिश शासनकाल में ही लोक अदालत की अवधारणा को लगभग भुला दिया गया था। अब यह अवधारणा पुन: लोकप्रिय है और ऐतिहासिक प्रसिद्धि पा रही है। इसकी सार्थकता ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह अतिमहत्वपूर्ण और कार्यक्षम वैकल्पिक विवाद निवारण, संस्कृति और सामाजिक रूचि के प्रति सबसे अधिक उपयुक्त भी। न्याय का सबसे सुन्दर क्षण; सुलह का क्षण होता है; जब भिन्न-दल अपने बीच उत्पन्न मन-मुटाव को समाप्त करने के बाद एक सही और विवेकपूर्ण मेल के फलस्वरूप पुन: एक हो जाते हैं। लड़ाई-झगड़ों को सुलझाने वाली यह अवधारणा भारतीय संस्थागत, स्वदेशी और अब कानून के अन्तर्गत विवादों को सुलझाने वाली संस्था के रूप मे स्थापित; हमारे संविधान के लक्ष्य को साधने का कार्य करता हैं। समान न्याय और निःशुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने वाली यह संस्था सुरक्षा के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। यह ठीक ही कहा गया है'; चूँकि द्वितीय विश्व-युद्ध जो कानून-व्यवस्था के विकृत रूप के विरूद्ध एक महानतम क्रांति था, कानूनी सहायता की पद्धति के चरणबद्ध विकास का आधार रहा है तथा जिसे हम एक बृहत वैकल्पिक विवाद-निवारण प्रक्रिया के रूप में लेते हैं। कानूनी सेवाओं का यह व्यवस्थित स्वरूप अपने में कानूनी सेवा अधिकार अधिनियम के अन्तर्गत लोक-अदालत की अवधारणा को समाहित करता है।

भारतीय सामाजिक-आर्थिक स्थिति इस उद्देश्य से प्रेरित और संवेदनशील कानूनी- सेवा - कार्यक्रम को न्यायोचित ठहराता है कि जिसमें याचिकाकर्ताओं अथवा उपयोगों की एवं विशाल संख्या या तो गरीबी, पिछड़ेपन, अनभिज्ञता या फिर निरक्षरता के कारण न्याय पाने में अलाभकारी स्थिति को प्राप्त करने के लिए विवश हो जाते हैं। इसीलिए राज्य के उपर इनकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व होता है जिसके फलस्वरूप कानूनी पद्धति का यह अभियान समानता के अवसर के आधार पर न्याय को बढ़ावा देता है। वैकल्पिक विवाद निवारण योजना प्रत्यक्ष रूप से लोक-अदालत की अवधारणा से ही विकसित हुआ है। इसने एक महत्वपूर्ण कानूनविद से संबंधित प्रौद्योगिक और विवादों के शीघ्र एवं सरल निपटारे के लिए विशाल औजार प्रदान किया है। यह एक बार पुन: सिद्ध हो गया है कि यह एक सफल और राष्ट्र की अनिवार्य एवं कार्यकुशल पद्धति है जो भारतीय पद्धति और वर्तमान समाज के एक विशाल भाग के लिए सर्वथा उपयुक्त है। कानूनी सेवाओं की सामान्य धारणा। लोक-अदालत विवादों के समाधान का क्रांतिकारी विकसित रूप है के आशय को स्पष्ट करता है।

10.7.2 भारत में वैकल्पिक-विवाद-निवारण के उपयोग

न्याय के त्वरित निष्पादन को प्राप्त करने के साधन के रूप में वैकल्पिक विवाद निवारण क्रियाविधि (एडी.आर.) का प्रवर्तक एक अंतिम एवं निर्णायक विषय है। विवादों के निपटारे के लिए प्राय: एक औजार के रूप में प्रयुक्त लोगों में विवादों को अदालत में घसीटने की प्रवृत्ति में वैकल्पिक विवाद-निवारण क्रियाविधि (ए.डी.आर.) के प्रयोग से अर्थात् विवादों के बिन्दुओं पर गहन विचार-विमर्श के उपरान्त तीव्र न्याय दिलाने के उनके प्रयास ऐतिहासिक परिवर्तन लाने का लक्ष्य सरलता से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। भारत में पंचायती राज अधिनियम पारित होने के साथ इसकी शुरूआत 1940 ई. में हुई। किंतु इसके प्रावधानों में अनेक विसंगतियों तथा इन्हें क्रियान्वित करने में आ रही समस्याओं के कारण इसे पूर्ण रूप से लागू नहीं किया जा सका। अनेक वर्षो के पश्चात् 1996 ई. में किसी प्रकार पंचायती राज एवं अधिनियम पारित हुआ जो आई.जे.एन.सी.टी.आर.ए.एल. के प्रतिरूप पर आधारित था जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। अग्रणी उद्यमियों एवं व्यवसायियों जो इस अधिनियम को सर्वाधिक उपयोग में लाते थे, के भिन्न भिन्न विचारों को ध्यान में रखते हुए इस अधिनियम में संशोधन किये गये। भारत में ग्रामीण एवं सर्वसाधारण लोगों की सहायता के लिए लोक - अदालत के क्षेत्र में पर्याप्त प्रावधान किये गये तथा उनमें आवश्यक संशोधन भी किये गये जिससे कि वे विशिष्ट अधिनियम वैकल्पिक विवाद निवारण का अधिक से अधिक लाभ ले सकें।

इस प्रकार आज भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण क्रियाविधि के लिए पर्याप्त प्रावधान किये गये है। किन्तु इसका कार्यक्षेत्र बड़े-बड़े उद्यमों अथवा बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों तक सीमित रहा है। इसी कारण से लोक -अदालत एक अति-प्राचीन अवधारणा होते हुए भी इसका प्रसार यथाशक्ति स्तर तक नहीं हो पाया है। इसके बहुत से सम्भाग में त्रुटियों के कारण लोग अभी भी विवादों को अदालत में घसीटना उपयुक्त समझते हैं। कानून-निर्माताओं के द्वारा किये गये प्रावधानों को उपयोग में लाने की आवश्यकता है और इसका प्रयोग केवल तभी संभव हो सकता है जब वैकल्पिक विवाद निवारण के प्रसार को और अधिक विस्तार देने के लिए एक निश्चित कार्यक्रम का अनुसरण किया जाएगा। इसके ऐसे विस्तृत प्रसार-कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए इसके विस्तृत स्वरूप में लागू होने के मार्ग में आने वाली बाधाओं को चिन्हित कर उनका विश्लेषण करना अति आवश्यक हो जाता है।

10.8 लागू करने में आने वाली समस्याएं और सुझाव

किसी भी नियम अथवा कानून को लागू करने में समस्याओं का सामना स्वाभाविक रूप से करना पड़ता है। वैकल्पिक विवाद निवारण का प्रवर्तन भी इससे अछूता नहीं रहा है। इसके प्रवर्तन के दौरान जो समस्याएं आयी उनका क्रमिक रूप से वर्णन निम्नलिखित है -

1. मनोवृत्ति - यद्यपि भारतीय कानून सदैव इसका पक्षधर रहा है कि विवादों का समाधान मध्यस्थता के द्वारा हो परन्तु भारतीय भावनाओं ने सदैव मध्यस्थता संबंधी निर्णयों की गुणवत्ता को हेय दृष्टि से देखा है।

भारतीय कानूनी-मुकदमों का एक महत्वपूर्ण संग्रह, मध्यस्थ निर्णयों के बंधन से मुक्त होने के लिए लम्बी और थका देने वाली लड़ाई का प्रमाण है। कानूनी दांव-पेंच के द्वारा गलत काम करने को प्रेरित प्रत्येक पक्ष (राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय) की दृष्टि में मध्यस्थता का अर्थ होता है - जीतने का प्रयास करो यदि कर सकते हो। यदि तुम अपनी क्षमता के अनुसार यह नहीं कर सकते हो तो तब तक प्रतीक्षा करो जब-तक दूसरा पक्ष अपने पक्ष में निर्णय लाने के लिए बलपूर्वक प्रयास न करे। इस अर्थ में मध्यस्थता, विवादों के सनाधान के साधन के रूप में विफल सिद्ध होता है, जबकि इसे विवाद समाधान की एक उपयोगी प्रक्रिया के रूप में मिलने वाले सम्मान में वृद्धि होती जा रही है। समस्या यह है कि भारत में अभी तक न तो निजी क्षेत्र और न ही सार्वजनिक क्षेत्र मध्यस्थता के उद्देश्य से भली-भांति परिचित है। मध्यस्थता संबंधी निर्णयों को केवल उन कारणों के लिए कानूनी निर्णय स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए जो इसके विषय-वस्तु से असंबद्ध है जो निम्न है - मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र का अभाव, मध्यस्थ या दूसरे पक्ष का छल और भ्रष्टाचार या मध्यस्थता संबंधी क्रियाकलापों को संपादित करने वाले लोगों को, स्पष्ट कानूनी विसंगतियों को सुधारने का अधिकार, अंग्रेजों की विचित्र प्रकार की नई पद्धति थी। इस संदेहास्पद अधिकार को, विवादों को अदालत में ले जाकर सुलझाने वाली मानसिकता वाले देश भारत में लाना एक बहुत बड़ी भूल थी। इससे इस कानून के फलस्वरूप किये गये निर्णय और उसकी विसंगतियों के बीच अन्तर करने वाली प्रत्यक्ष पतली विभाजन रेखा प्राय: अस्पष्ट हो गयी। इसके बाद भी एक कुशल अधिवक्ता के मस्तिष्क में इससे संबंधित कुछ तथ्यपरक प्रश्नों पर मंथन चलता रहता है। पंचायती कानून में उपस्थित लचीलापन और इसके बारे में लोगों की समझ ने पंचायतीराज अधिनियम, 1940 के तहत घरेलू मध्यस्थता को भी प्रभावित किया है।सबसे पहले हमें विवादों के निपटारे के लिए पारम्परिक सोच एवं हमारी मौलिक धारणाओं को बदलने की आवश्यकता है। शायद टेम्पल विश्वविद्यालय के बॉस्केटबॉल के सुप्रसिद्ध प्रशिक्षक जॉन चैने जब यह कहते थे "जीतना एक सोच अथवा मनोवृत्ति है।" तो ऐसा प्रतीत होता था मानो वे विवाद-समाधान और वैकल्पिक विवाद निवारण सन्दर्भ में ही बोल रहे हो। हम लोगों को जीतने का जो अर्थ है उसे पुन: परिभाषित करने की आवश्यकता है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कि हमारे पक्ष क्या इच्छा रखते हैं और वो क्या पाने के योग्य है। अन्तिम विजय प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि पक्षों की रूचियों और उद्देश्यों के बारे में हमारी समझ और समस्याओं के हल ढूंढने की हमारी क्षमता इसके अनुरूप है कि नहीं। वैकल्पिक विवाद निवारण क्रियाविधि का उद्देश्य केवल जीत की स्थिति पैदा करने वाली है, परन्तु लोगों की मनोवृत्ति इसे जीत-हार वाली स्थिति के रूप में ढाल रही है जो विवादों के निपटारे के लिए इसे अदालत में घसीटने वाली स्थिति से कोई ज्यादा भिन्न नहीं है। बहुत से अन्तर्राष्ट्रीय मध्यरथताओं के दौरान वे पक्ष जिस पर आरोप लगाया जा रहा है निर्णय के क्षण को स्थगित करवाने के लिए हर संभव प्रयास करेंगे। या तो इसकी सुनवाई के पहले या सुनवाई के समय वे दल उन सभा विचारणीय और अविचारणीय प्रक्रिया संबंधी साधनों का प्रयोग, लाभ प्राप्त करने के लिए करेंगे। आपसी आदर-सद्भाव की भावना का ह्रास हो रहा है और हारने वाले पक्ष अपनी सहनशील स्वीकार्यता

प्रदर्शित करने के विपरीत या तो निर्णय को प्रभावित करने का प्रयत्न करेंगे या कम से कम इसके प्रवर्तन की तिथि को लंबे समय के लिए स्थगित करवा देंगे। इन तथ्यों को ही आधार मानकर इस नये भारतीय कानून (पंचायतीराज अधिनियम) को विचारा गया और इसे क्रियान्वित किया गया। परन्तु केवल नया कानून ही पर्याप्त नहीं है - इसके लिए न्यायाधीशों और अधिवक्ताओं को यह अनुभव करना आवश्यक हो जाता है कि अदालत द्वारा संगठित और नियंत्रित मध्यस्थता का स्वरूप प्रभावी रूप से समाप्ति के बिन्दु पर है। हमारी मनोवृत्ति को पुन: व्यवस्थित होने की आवश्यकता है। हमें वैकल्पिक विवाद निवारण भावना के अनुरूप ढलने तथा निहित दर्शन के सन्निकट होने की आवश्यकता है जो पक्षों का इसके प्रति, एवं उत्कृष्ट विश्वास को प्रतिबिंबित करता है।

2. अधिवक्ता एवं उसके पक्ष की अभिरूचियाँ -

अधिवक्तागण और पक्ष विवादों के निपटारे से संबंधित प्राय: एक - दूसरे से भिन्न विचार और रूचि रखते हैं। यह उनके व्यक्तित्व अथवा धन शक्ति से संबंधित बात हो सकती है। कुछ परिस्थितियों में तो पक्ष विवादों के समाधान में रूचि ही नहीं लेते हैं। उदाहरण के लिए पक्ष कानूनी मुकदमें को अपने विरोधी पक्ष के समक्ष उदाहरण के तौर पर उन्हें इसकी कठोरता और भारती कीमत का आभास करवाते हुए सबक सीखाने मात्र के उद्देश्य से चलाते रहते हैं। यथाक्रम, पक्ष को मुकदमें से संबंधित कोई चिन्ता नहीं होती है, उसे केवल पैसे की चिन्ता होती है कि यह बाहर हो रहा है या नहीं। उन्हें पूर्व - निर्णयों में कोई रूचि नहीं होती और अपने दावों के लिए लड़ाई लड़ने की कीमत चुकाने से अधिक वे प्रतिद्वंद्वी के पैसों को निकलवाने में रूचि लेते हैं। इन्हीं कुछ परिस्थितियों में पक्ष विवादों के समाधान में रूचि नहीं लेते हैं अन्यथा अभी भी पक्ष पारम्परिक रूप से संतोषजनक समाधान में रूचि लेते हैं। वास्तव में यह उनकी अयोग्यता ही है जो ऐसे समाधान को प्राप्त करने के लिए उन्हें सबसे पहले अधिवक्ताओं से राय लेने के लिए विवश करता है। अधिवक्ता को न केवल इस पर कि पक्ष क्या चाहते हैं बल्कि इस बात पर भी कि वे दोनों पक्ष अपने विवाद को निपटाने में क्यों अयोग्य रहे हैं पर आवश्यक रूप से विचार करना चाहिए और उसके बाद उन्हें विवाद समाधान प्रक्रिया को ढूंढना चाहिए। जिससे कि समाधान के मार्ग में आने वाली बाधाओं को जीतने की संभावना बन सके। यह बात ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि प्रारंभिक अवस्था में ऐसा प्रतीत होता है कि पक्ष से कम अथवा दल समाधान चाहते हैं परन्तु कभी-कभी समाधान को पाने की नहीं बल्कि कुछ और होती है। एक अधिवक्ता जिसे घंटों के हिसाब से पैसे चुकाये जाते हैं, बहस के दौरान लाभ कमाने के लिए खड़ा रह जाता है और यह भी हो सकता है कि यह विवाद के निपटारे को लेकर पक्ष से रूचि ले रहा हो। दूसरी ओर एक अधिवक्ता ऐसा भी हो सकता है जो बहस के एक साथ पैसे लेकर बिना अतिरिक्त समय और पैसे का व्यय किये कम से कम बहस कर शीघ्रता से मामले को सुलझा लेता है और यह भी हो सता है कि यह विवाद के समाधान को लेकर पक्ष से अधिक रूचि ले रहा हो। लेकिन ऐसा प्राय: नहीं होता है क्योंकि इस पक्षीय स्थायित्व वाले संघर्ष जिसमें अधिकांश प्रक्रियाऐं समाधान की दिशा

अग्रसर रहती है पक्षों का सीधा जुड़ाव खोजती है। अधिवक्ताओं के लिए यह प्राय: नये प्रकार की स्थिति होती है जो प्रारंभ में शीघ्रता से नहीं समझने योग्य होता है। उदाहरणस्वरूप, एक विशाल धन-राशि की उगाही, व्यावसायिक मुकदमों में मुदोसह के लिए प्राय: अंतिम विजय माना जाता है। तो भी वॉल-स्ट्रीट, आय की लम्बी अवधि तक वाली प्रवाह को महत्व देता है यहां तक कि विशाल नकद-राशि से भी बहुत अधिक शायद इसलिए कि एक लंबे समय वाले संबंध को पुन: संगठित करना एक अच्छा परिणाम देता है। चिन्तन के समय, अधिवक्ता हमेशा प्रक्रिया के उपर उच्च मानक वाले नियंत्रण को निकालने की कोशिश करते हैं मुख्य रूप से अपने पथ से विचार-विमर्श कर। किसी प्रकार, इस चिन्तन प्रक्रिया में पक्षों का सीधा जुड़ाव सबसे अच्छा उपाय होता है सफल होने के लिए। अधिवक्ता अपने पक्षों से विचार-विमर्श के दौरान उन्हें इस प्रकार व्यस्त कर देते हैं और जिसके फलस्वरूप वे सार्थक बिन्दुओं तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। उनका ये प्रयास शायद ही कभी परिणाम रहित होता है। अधिवक्ताओं को एक स्थिर सौदेबाजी के महत्व की अच्छी समझ रखने की आवश्यकता होती है जहाँ अधिवक्तागण टेबूल के एक ही बगल बैठे, पैसों के लेन-देन के संबंध में बातचीत कर सकते हैं। अधिवक्ताओं को नैतिकतापूर्ण विचारधाराओं के अर्थ को उनके समक्ष स्पष्ट करने की भी आवश्यकता होती है जो पक्षों के उत्साहपूर्ण तरीके से पेश होने के कर्तव्य का निर्वहन करता है। प्रभावकारी चिन्तन के लिए उद्देश्य परक सोच के पक्ष में प्रतिशोध की भावना का परित्याग करना आवश्यक होता है। यदि वे जीत सुनिश्चित करते हैं तो यह उनके पक्षों के हित के लिए होता है। ऐसे बहुत से उदाहरण है जिनमें अधिवक्ता तो नहीं किन्तु क्रुद्ध पक्ष प्रतिशोध की भावना रखता है। इन पक्षों के लिए प्रत्येक नया मुकदमा तब तक सिद्धान्त की बात होती है जब तक के वे अपने अधिवक्ताओं से तीन-चार बार फीस की रसीद प्राप्त नहीं कर लेते है, तब जाकर कहीं उनका अपने सिद्धान्त के प्रति दृष्टिकोण बदलता है। यही अधिवक्ताओं को इसके अलावे भी एक और उत्तरदायित्व विवादों के शीघ्र एवं यथार्थवादी मूल्यांकन करने की होती है और अपने पक्ष के लिप उद्घोषक के रूप में सेवा देनी होती है। उनके हितों में उपस्थित इन अन्तर को दूर करने की आवश्यकता है।

3. **कानूनी शिक्षा** :- विधि-विद्यालय अपने छात्रों को समाधान और मैत्रीभाव उत्पन्न कर मेल कराने की कला को सीखने से अधिक लड़ाई-झगड़ों के विषय के बारे में अधिक प्रशिक्षित करते हैं और इसीलिए वे इस व्यवसाय के उद्देश्य की पूर्ति अच्छी तरह नहीं कर पाते। अधिवक्तागण अदालत या पुस्तकालय में जितना समय व्यतीत करते हैं। उससे कहीं अधिक समय वे झगड़ों को सुलह कराने में देते हैं। और इसके परिणामस्वरूप उने सूलह कराने के प्रयास पक्षों के लिए अधिक फलदायी होता है। अगली पीढ़ी तक हमारे समाज की अतिमहत्वपूर्ण उपलब्धि होगी कि यह घटना के फलस्वरूप सहयोग और समझौते की ओर मानवीय झुकाव होगा वनस्पति की प्रतिस्पर्द्धा और प्रतिद्वंद्विता की ओर उनका झुकाव होगा। यदि अधिवक्तागण सहयोगी की भावना स्थापित करने तथा क्रियाकलापों की रूपरेखा तैयार करने की कला में प्रवीण

नहीं है जो इसकी उन्नति के लिए उत्तरदायी है तो वे हमारे समय के सर्वाधिक रचनाशील सामाजिक परीक्षण के केन्द्र-बिन्दू में नहीं होंगे।

विवादों के निपटारे के लिए सस्ते एवं सुलभ माध्यम उपलब्ध कराने के प्रयास तभी सफल होंगे जब हमारे पास कुशल मध्यस्थ न्यायाधीश होंगे। संक्षेप में एक प्रभावी न्यायिक प्रणाली के लिए पाठ्यक्रम के पुनर्निर्धारण की आवश्यकता है। विधि के छात्रों को भी वैकल्पिक विवाद निवारण का महत्व समझना होगा।

4. विवादों के निपटारे में आने वाली बाधाएं -

विवादों के निवारण के समय कई बाधाएं सामने आती है। जैसे विभिन्न पक्षों और अधिवक्ताओं के बीच संदेशों का उचित आदान-प्रदान नहीं हो पाता। कोई भी पक्ष दूसरे पक्ष पर विश्वास नहीं करता। सभी पक्षों के बीच स्पष्ट और प्रभावी वार्तालाप के अभाव में सभी पक्षों को किसी सर्वमान्य निर्णय तक पहुँचने में कठिनाई होती है।

किसी तथ्य पर विभिन्न पक्षों के विभिन्न दृष्टिकोण हो सकते है। सामान्यत: किसी विवाद में दो या दो से अधिक पक्ष होते है। हर पक्ष यह समझता है कि वह पीड़ित पक्ष है, और दूसरे पक्ष अपराध करने वाले है। इस विश्वास के लिए सभी पक्षों के अपने-अपने कारण होते है। क्योंकि सभी पक्ष किसी परिस्थिति को अपने परिप्रेक्ष्य में ही देख पाते है यह एक बड़ी समस्या है, जो सर्वमान्य निर्णय तक पहुँचने में बाधा उत्पन्न करती है इसके सिवाय भी कई बाधाएँ है। जैसे योग्य अधिवक्रायों का आभाव, पक्षों में आपसी विद्वेष और अविश्वास होना, हार-जीत की भावना का होना, बहुत अधिक पक्षों का किसी विवाद मे सम्मिलित होना आदि।

5. अज्ञानता:-

वैकल्पिक विवाद निवारण के असफल होने का एक प्रमुख कारण है लोगों का कानूनी प्रावधानों का कम ज्ञान होना। विधायिका मात्र कानून बना देती है, किन्तु उन्हें लागू करने पर ध्यान नहीं देती। साथ ही लोगों को कानूनी प्रावधानों की जानकारी भी नहीं दी जाती। वैकल्पिक विवाद निवारण के प्रावधानों का अधिकतर उपयोग व्यापारिक विवादों में ही होता है। कई बार यह देखने में आता है कि छच्च वर्गीय एवं शिक्षित लोग भी कानूनी प्रावधानों से अपरिचित रहते है। यदि लोगों को इन प्रावधानों की जानकारी ही नहीं रहेगी। तो वे इनका उपयोग भी नहीं कर पाएंगे।

6. भ्रष्टाचार:-

हमारे देश में भ्रष्टाचार कोई नई बात नहीं है। भ्रष्टाचार स्वतंत्रता के उद्देश्यों पर आधात करता है। आज हमारा कोई भी काम बिना रिश्वत दिये नहीं होता है। वैकल्पिक-विवाद निवारण में भी भ्रष्टाचार का बड़ा खतरा है। उदाहरण के लिए यदि किसी शिक्षित एवं धनवान व्यक्ति का किसी निर्धन एवं अशिक्षित व्यक्ति के साथ भूमि - विवाद होता है। तो अधिकतर संभावना यही होती है कि धनवान व्यक्ति रिश्वत देकर अपना हित साध लेगा।

7. यदि विवाद के प्रारंभ में ही वैकल्पिक विवाद निवारण को अपनाया जाय तो उससे पक्षों को सर्वाधिक लाभ होगा। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न पक्षों में विवाद के कारणों में

कमी आएगी और शीघ्र निर्णय लिया जा सकेगा किन्तु इस बात की कोई गारन्टी नहीं है कि अंतिम निर्णय हो ही जाएगा।

8. ऐसा माना जाता है कि वैकल्पिक विवाद निवारण के फलस्वरूप सद्भावपूर्ण वातावरण में निर्णय लिया जा सकता है, किन्तु ये निर्णय पक्षों पर बाध्यकारी नहीं होते। इसके फलस्वरूप सारा श्रम, समय और धन व्यर्थ होने की संभावना बनी रहती हैं।

9. वैकल्पिक विवाद निवारण में पक्षों को निष्पक्ष विशेषज्ञ चुनने का अधिकार होता है इसका अर्थ यह नहीं है। कि अधिवक्ताओं की भूमिका किसी प्रकार कम हो जाएगी। वे सम्पूर्ण प्रकिया में अपनी केन्द्रीय भूमिका निभाते रहेगा। निष्पक्ष विशेषज्ञों की संख्या सीमित होने के कारण उनकी उपलब्धता भी सुनिश्चित नहीं हो पाती है।

10. वैकल्पिक विवाद निवारण में गवाहों और सबूतों की बहुत अधिक आवश्यकता नहीं होती। कई बार साक्ष्यों के अभाव में गलत निर्णय होने की संभावना बनी रहती है जो असंतुष्ट का कारण होती है।

11. वैकल्पिक विवाद निवारण में पक्षों को विवाद -निवारण के लिए नियम और प्रक्रियाएँ चुनने की स्वतंत्रता होती है। उचित नियम और प्रक्रिया तक पहुँचना भी एक समस्या है।

12. वैकल्पिक विवाद निवारण कार्यक्रम लचीले होते है और इनमें कोई कठोर प्रक्रियात्मक नियम नहीं होतें। ऐसे में यह संभावना हमेशा बनी है कि कोई पक्ष पूर्व निर्धारित नियम या प्रक्रिया को मानने से इन्कार कर दें। इससे अनावश्यक देरी होती है और विवाद निवारण की प्रक्रिया धीमी हो जाती है।

13. लचीलेपन और कठोर प्रक्रिया के अभाव में पथ-प्रदर्शक के रूप में अन्य विवादों को उद्वत नहीं किया जा सकता।

14. वैकल्पिक विवाद निवारण का उद्देश्य था न्यायालयों के बढ़ते बोझ को कम करना। किन्तु इसके निर्णयों के विरूद्ध अपील करने की स्वतंत्रता होने के कारण न्यायालयों के भार में कोई अन्तर नहीं आया है।

ये सभी समस्याएँ स्थायी प्रकृति की नहीं है। इन सबका समाधान संभव है। इन समस्याओं के समाधान के लिए कुछ सुझाव नीचे दिये गये हैं। ये सुझाव मात्र उदाहरण के लिए है एवं किसी भी रूप में सम्पूर्ण नहीं है। इन पर गहराई से विचार करना आवश्यक है। ऐसा महसूस किया जाता है कि वैकल्पिक विवाद निवारण के प्रति मानसिकता में बदलाव से इसे उचित रूप मे लागू किया जा सकेगा, जिसके फलस्वरूप न्यायालयों का भार कम होगा। ग्रामीण और शहरी क्षेत्र दोनों में वैकल्पिक विवाद निवारण के ज्ञान का अभाव है। यदि इसके प्रति लोगों में जागृति लायी जा सके तो लोगों की मानसिकता में बदलाव भी संभव हो पाएगा। शहरी लोगों को जागरूक करना अपेक्षाकृत आसान है, किन्तु ग्रामीण लोगों की मानसिकता में परिवर्तन लाना एक कठिन कार्य है। हमें ग्रामीण लोगों को शिक्षित करने पर अधिक ध्यान देना होगा ताकि वे इस प्रक्रिया का लाभ उठा सकें। सामान्यत: लोगों को वैधानिक शब्दावली और विवाद निवारण के लिए उपलब्ध अवसरों का ज्ञान नहीं होता। दूसरा मुद्दा भ्रष्टाचार का है। इन दोनों से निपटने के लिए शिक्षा आवश्यक है। शिक्षा के

प्रभाव से भ्रष्टाचार में भी कमी आएगी। गैर-सरकारी संगठनों को जरूरतमंद लोगों आवश्यक ज्ञान उपलब्ध कराने का प्रयास करना चाहिए। वैकल्पिक विवाद निवारण की एक बड़ी कमी है, इसका बाध्यकारी न होना। इसके निर्णयों के विरूद्ध अपील संभव होने के कारण अनावश्यक देरी होती है। यदि इसे सही भावना से लागू नहीं किया जाता तो यह अर्थहीन हो जाता है। इसके निर्णयों को बाध्यकारी होना चाहिए और इसके निर्णयों के विरूद्ध अपील की स्वतंत्रता नहीं होनी चाहिए। एक सामान्य मार्गदर्शिका की आवश्यकता महसूस की जाती है जो विभिन्न पक्षों एवं अधिवक्ताओं की पथ प्रदर्शक हो सके।

10.9 निष्कर्ष

वैकल्पिक विवाद निवारण का यह प्रस्तुतीकरण इसके ऐतिहासिक विकास का परीक्षण प्रदान करता है और क्रान्ति क्षेत्र में इसकी भूमिका एक ऐसे समय में परिलक्षित हुई जब उत्तरी अमेरिकी कानूनी इतिहास जिसमें जनता बड़े पैमाने पर प्रतिद्वंद्विता प्रणाली, अधिवक्ताओं की मनोवृत्ति एवं आचरण और न्यायाधीशों को कार्यप्रणाली के प्रति असंतोष व्यक्त कर रहा था।

इसमें विवादों के निपटारे के लिए वैकल्पिक विवाद निवारण की विशेषताओं, साधन के रूप में वर्णन किया गया है और सार्वजनिक अदालत प्रणाली में खासकर एक औपचारिक निर्णय के रूप में इसकी भूमिका दर्शायी गयी है। वैकल्पिक विवाद निवारण का उद्भव लोगों को असंतोष के परिणामस्वरूप हुआ न कि केवल महिलाओं के प्रति चिंता को व्यक्त करने के लिए। वैकल्पिक विवाद निवारण अनेकों प्रकार की समस्याएं, जैसे श्रम व्यवस्था से संबंधित, रोजगार से संबंधित, पारिवारिक विवाद, घरेलू झगडे, आपराधिक, करतूत, व्यवसाय-संबंधी, लोगों के बीच विवाद, वातावरण से संबंधित या हमारी संस्मृति से संबंधित सभी प्रकार की समस्याओं को सुलझाने तथा उसके निवारण में सक्षम और प्रभावकारी हो सकता है। फिर भी, वैकल्पिक विवाद निवारण महिलाओं चिन्ताओं अथवा समस्याओं को कम करने में पूर्ण रूप से प्रभावकारी नहीं रहा है। उदाहरण के लिए महिलाओं का पारिवारिक अदालत या पारिवारिक मध्यस्थों तक नहीं पहुंच पाना, उदार प्रवृति की होने के कारण पारिवारिक हिंसा द्वारा उनकी आवाज को दबा देना आदि। वैकल्पिक विवाद निवारण का भविष्य विवादों को निपटारे के लिए पारम्परिक एवं सार्वजनिक साधन के समक्ष एक आशाजनक विकल्प प्रस्तुत करता है किन्तु इसका भविष्य और इसकी उपयोगिता इसके निर्माताओं और अभ्यासकर्मियों के सहयोग का एक नया रूप मान लेने तथा रूचि दिखाते हुए इसे प्रचलित करने हेतु सहमत होने की क्षमता पर निर्भर करता है।

इस भाग के अनुच्छेद में वैकल्पिक विवाद निवारण के अभ्यास, औपचारिक और अनौपचारिक मध्यस्थता की भूमिकाओं, विवादों के निपटारे संबंधी विधियों के मिश्रित रूपों के प्रयोग में आने वाली बाधाओं तथा अन्तर्राष्ट्रीय विवाद निवारण के प्रकारों का उल्लेख है।

10.10 अभ्यास प्रश्न

1. विवाद निवारण से आप क्या समझते है?
2. वैकल्पिक विवाद निवारण और प्रतिद्वंद्विता प्रणाली के बीच संक्षिप्त तुलना करें?
3. वैकल्पिक विवाद निवारण के उद्भव और विकास के संक्षिप्त कारणों को बताएं?

4. वैकल्पिक विवाद निवारण के विविध व्याख्याएँ क्या क्या हैं?
5. भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण को लागू करने के समय हमें किन किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है?
6. भारत में वैकल्पिक विवाद निवारण को प्रभावकारी रूप से लागू करने के लिए सुझाव दीजिए?

10.11 संदर्भ ग्रन्थ

1. गोल्डबर्ग स्टीफन बी., सेन्टर फ्रैंक ई.ए. और रोजर्स नैन्सी एच., विवाद : वार्तालाप द्वारा हल, मध्यस्थता और अन्य प्रक्रियाएँ (तृतीय संस्करण), ऐजपेन प्रकाशक, 1999
2. यूरी वलियम, ब्रेट जिने और गोल्डबर्ग स्टीफन बी., विवादों का निपटारा: संघर्षो के दुखद परिणाम को समाप्त करने वाली प्रणाली का स्वरूप। जॉसी-बाल इन्क. 1993
3. रॉब पी.सी. और विलियम शेफिल्ड, (संस्करण), "वैकल्पिक विवाद निवारण", युनिवर्सल लॉ प्रकाशन कम्पनी प्राईवेट लिमिटेड, दिल्ली, 1997
4. मिनेनी एस.आर. (संस्करण), "मध्यस्थता, समझौता और वैकल्पिक विवाद निवारण प्रणाली" एशिया लॉ हाउस, हैदराबाद 2004

ISBN No. 13/978-81-8496-136-2